सी.ओ.ए.-2

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

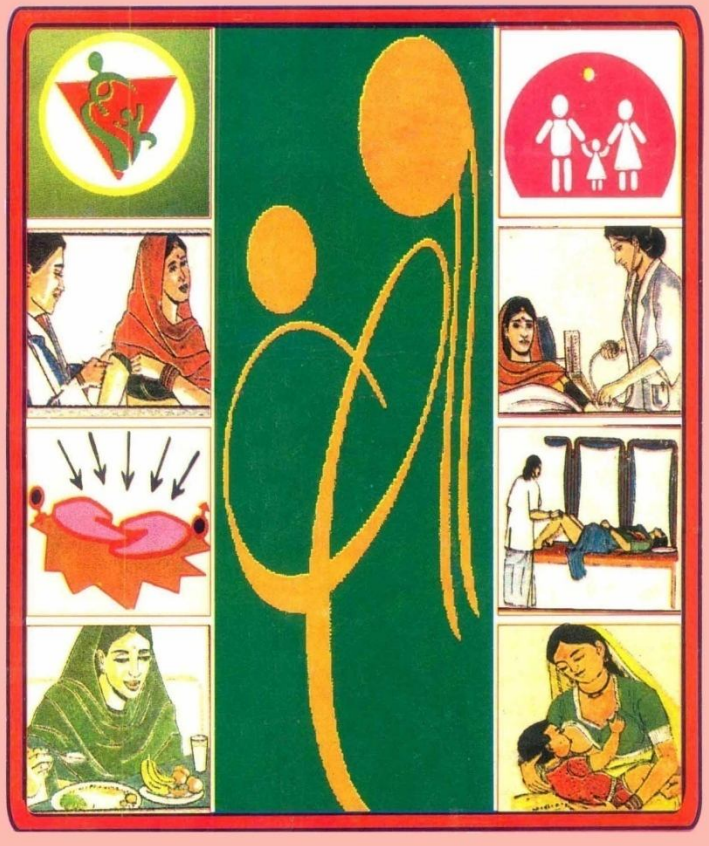

नर्सिंग के आधारभूत सिद्धांत

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

नर्सिंग के आधारभूत सिद्धान्त

	ब्लॉक-I	
इकाई- 1	नर्सिंग: परिचय एवं रूपरेखा	5–32
इकाई- 2	प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग	33–62
इकाई- 3	व्यक्तिगत स्वास्थ्य	63–89
	ब्लॉक-II	
इकाई- 4	अवलोकन एवं परीक्षण	93–114
इकाई- 5	अपूतीयता(एसेप्सिस)	115–126
इकाई- 6	मातृ स्वास्थ्य	127–144

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

1. डॉ. आर.वी. व्यास कुलपति	**2. श्री राकेश वर्मा** निदेशक विज्ञान एवं तकनीकी विद्यापीठ- पाठ्यक्रम संयोजक	
3. श्री केशव स्वर्णकार प्रधानाचार्य/ नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग एम.बी.एस. चिकित्सालय परिसर, कोटा	**4. श्रीमती सोनाक्षी सोनी** व्याख्याता कॉलेज ऑफ नर्सिंग जयपुर	**5. डॉ. वीना एलहैन्स** चिकि. अधि./प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ जे. के. लोन चिकित्सालय मेडिकल कॉलेज, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण

संपादक : केशव स्वर्णकार

लेखक	पाठ्यक्रम एवं इकाई	लेखक	पाठ्यक्रम एवं इकाई
• **डॉ. विनया पैन्डसे** M.S.(O&G), FICOG पूर्वआचार्य एवं विभागाध्यक्ष (प्रसूति एवं स्त्री रोग विभाग) आर.एन.टी. मेडिकल कॉलेज एवं पूर्व अधीक्षक जनाना हॉस्पिटल, उदयपुर	COA III-1	• **श्रीमती सुरजीत कौर** उपनिदेशक (नर्सिंग) चिकित्सा एवं स्वा. निदेशालय एवं रजिस्ट्रार, राजस्थान नर्सिंग काउंसिल, जयपुर	COA II-1
• **श्रीमती रेखा गुप्ता** M.Sc., M.Phil	COA I-1,2	• **श्री केशव स्वर्णकार** RN. DNEA. M.A.,B.J.M.C.	COAII-2,3 COAIII-5,6
• **डॉ. अविनाश बंसल** M.D.(Paed.) वरिष्ठ शिशु एवं बाल विशेषज्ञ भा. वि. प. चिकित्सालय, कोटा	COA IV-6	• **डॉ. श्रीमती मीनाक्षी सोनी** M.A. M.Sc(N) व्याख्याता कॉलेज ऑफ नर्सिंग, जयपुर	COA I-3,4,5,6 COA I-(Case Book)
• **डॉ. शोभा शर्मा** M.S.(O&G), **(**प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ**)** ई.एस.आई. चिकित्सालय, कोटा	COA II-6 COA III-2 COA IV-1,4	• **श्री अरविन्द चौरीसा** M.A. B.Sc(N) प्रधानाचार्य /नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग, बांसवाड़ा	COA II-4,5
• **डॉ. वीना एलहैन्स** M.S.(O & G) प्रसूति एवं स्त्री रोग विशेषज्ञ जे. के. लॉन हॉस्पिटल मेडिकल कॉलेज, कोटा	COA IV-2,3,5	• **श्री प्रकाश व्यास** M.A. B.Sc(N) प्रधानाचार्य /नर्सिंग ट्यूटर स्कूल ऑफ नर्सिंग, जोधपुर	COA III-3,4

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

- **डॉ. आर.वी. व्यास,** कुलपति
- **डॉ. पी. के. शर्मा,** निदेशक, पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग
- **राकेश शर्मा,** विभागाध्यक्ष

पाठ्य सामग्री उत्पादन

- **योगेन्द्र गोयल,** सहायक उत्पादन अधिकारी

© वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

- सर्वाधिकार सुरक्षित : इस पाठ्यक्रम पुस्तिका का कोई भी अंश किसी भी रूप मे वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की बिना अनुमति के उदधृत करना वर्जित है।
- यद्यपि पाठ्यक्रम के निर्माण मे लेखकीय उत्तरदायित्व है तथा अध्ययन सामग्री मे नवीनतम तथ्य दिये जाने का प्रयास किया गया है। किन्तु चिकित्सा विज्ञान मे नित-नवीन परिवर्तन एवं तथ्य जुडते रहते हैं। अतः इस विषय मे किसी भी त्रुटि हेतु लेखक, सम्पादक अथवा प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। इसलिए औषध सेवन चिकित्सक की देखरेख मे ही उपयुक्त रहेगा।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के निर्देशानुसार मुद्रित एवं प्रकाशित

इकाई-1 नर्सिंग: परिचय एवं रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

1.0 प्रस्तावना

1.1 उद्देश्य

1.2 नर्सिंग का संक्षिप्त इतिहास

- 1.2.1 भारत में नर्सिंग का इतिहास
- 1.2.2 नर्सिंग: कुछ परिभाषाएं
- 1.2.3 नर्सिंग का आधुनिक रूप एवं स्कोप

1.3 नर्सिंग एवं प्रसूति विज्ञान

1.4 दाइयां अथवा परम्परागत जन्म सहायिका (TBAs)

- 1.4.1 दाइयों का प्रशिक्षण
- 1.4.2 प्रशिक्षण के उद्देश्य
- 1.4.3 प्रशिक्षण के लिए दाइयों का चयन
- 1.4.4 प्रशिक्षण स्थल तथा उत्तरदायी व्यक्ति
- 1.4.5 प्रशिक्षण की विषय सूची
- 1.4.6 शिक्षण उपकरण
- 1.4.7 स्मरण रखने योग्य बातें
- 1.4.8 स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं तथा दाइयों के बीच सम्बन्ध

1.5 महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (फीमेल हेल्थ वर्कर या ए.एन.एम.-(FHW/ANM)

- 1.5.1 महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण
- 1.5.2 महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाएं एवं कार्य
- 1.5.3 भूमिका हेतु कुशलता एवं दक्षता

1.6 ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का संगठन

- 1.6.1 ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएं
- 1.6.2 उपकेन्द्र
- 1.6.3 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
- 1.6.4 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र
- 1.6.5 अन्य सेवाऐं
- 1.6.6 राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन
- 1.6.7 आशा

1.7 सारांश

1.8 प्रश्न

1.0 प्रस्तावना

स्वास्थ्य के क्षेत्र में कार्यरत कोई भी संस्था या व्यक्ति नर्सिंग के महत्व से अपरिचित नहीं रह सकता है । स्वास्थ्य एवं नर्सिंग एक ही सिक्के के दो पहलू हैं तथा अभिन्न अंग हैं । प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने कार्य की सही दिशा रखने तथा उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु नर्सिंग का आधारभूत ज्ञान होना परमावश्यक है । उन्हें नर्सिंग के इतिहास, प्राचीन तथा आधुनिक प्रवृत्तियों, नर्सिंग के स्कोप आदि के अतिरिक्त ग्रामीण स्वास्थ्य के क्षेत्र में कार्यरत विभिन्न स्वास्थ्य कर्मियों की भूमिका एवं कार्यो तथा प्रशिक्षण के विषय मे परिचित होना जरूरी है । प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं को ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओ के संगठन की जानकारी रखना तथा उसी अनुसार अपनी भूमिका का निर्वहन करना भी आना चाहिये । इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए इस इकाई में नर्सिंग का इतिहास, महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्य, दाइयों के प्रशिक्षण, ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के संगठन तथा वर्तमान योजनाओं जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण स्वारथ्य मिशन, आशा इत्यादि पर चर्चा की जा रही है ।

1.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के विषय मे जानकारी तथा उनसे सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ हो सकेंगी :

1. नर्सिंग का इतिहास एवं आधुनिक रूप क्या है?
2. नर्सिंग की विभिन्न परिभाषाओं की जानकारी होना ।
3. नर्सिंग एवं प्रसूति विज्ञान के मध्य सम्बन्ध क्या हैं?
4. धाय एवं दाइयों के प्रशिक्षण संबंधी तथ्य क्या हैं?
5. महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्यो की जानकारी प्राप्त करना ।
6. ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का संगठन क्या है?

1.2 नर्सिंग का संक्षिप्त इतिहास

नर्सिंग का इतिहास मानव के इतिहास से तथा उसके विकास से जुड़ा है । नर्सिंग का जन्म प्रसव में सहायता तथा उस समय हुआ जब परिवार के एक सदस्य ने दूसरे सदस्य की बीमारी में सहायता की । प्राचीन काल में रोग का कारण शरीर में बुरी आत्माओं (Evil Spirits) का प्रवेश समझा जाता था । ' 'दवाई देने वाला व्यक्ति" कठोर उपायों से इन ' 'बुरी आत्माओं" पर विजय प्राप्त करता था । रोग ठीक करने के लिए जन्तर-मन्तर, जादू-टोने तथा बलि का भी प्रयोग किया जाता था । दवाई देने वाला व्यक्ति" रोगी की तरफ से, जिसने कोई पाप किया है या ईश्वर को नाराज कर दिया है, एक "पादरी डॉक्टर अथवा धार्मिक चिकित्सक की भूमिका निभाता था । यह विचार पिछड़े क्षेत्रों में आज भी प्रचलित है ।

भारत, चीन, मिश्र, सीरिया, यहूदी तथा यूनान जैसी पुरानी सभ्यताओं मे ईस्वी पूर्व 2000 से 1000 तक दवाई देने तथा साफ-सफाई करने की महत्वपूर्ण प्रथाऐं मौजूद थीं, जिनका अध्ययन

बहुत रोचक है । यद्यपि इस समय की अधिकांश पद्धतियां, तब भी धर्म के साथ मिली-जुली थी । देखभाल मे स्त्रिया विशेष भाग नही लेती थी, परन्तु वे दाई का काम अवश्य करती थीं ।

भारत में उन दिनो चिकित्सा का काम मुख्य रूप से ब्राह्मण-पुजारियों के हाथ में था । 'चेचक' अथवा छोटी माता (स्मॉल पॉक्स) के लिए एक प्रकार का इंजेक्शन लगाया जाता था । सुश्रुत ने उस समय उच्च स्तर की "सर्जरी" अथवा शल्य क्रिया का विकास कर लिया था तथा 1400 ईस्वी पूर्व में उस विषय पर एक पुस्तक भी लिखी थी । सुश्रुत और चरक, चिकित्सा की आयुर्वेदिक पद्धति के प्रसिद्ध चिकित्सक और विद्वान थे । लगभग 250 ईस्वी पूर्व बौद्ध सम्राट अशोक ने चिकित्सा की पद्धति का बहुत विकास किया तथा कई अस्पताल भी बनवाए । परन्तु बौद्ध धर्म के लोप के साथ-साथ ये अस्पताल भी लुप्त होते गए । जैसे-जैसे हिन्दू जाति प्रथा कठोर होती गई, चिकित्सक लोग रक्त और बीमार ऊतको एवं अगों को छूने से परहेज करते गए । प्राचीन भारत में चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान के पिछड़ेपन का यह प्रमुख कारण रहा और यह अवनति कई शताब्दियो तक चलती रही ।

यूनान में चिकित्सा का पहला वैज्ञानिक अध्ययन "हिप्पोक्रेटस" द्वारा स्थापित विद्यालय मे हुआ था । "आधुनिक चिकित्सा के पिता" हिप्पोक्रेटस का जन्म ई. पू. 460 में हुआ था । उसने यह पढाया कि चिकित्सकों को अच्छी तरह रोग का कारण जानने का प्रयत्न करना चाहिए । क्योंकि प्राय: रोग स्वास्थ्य के नियमो का पालन न करने से होते हैं, बुरी आत्माओं अथवा ईश्वर के क्रोध के कारण नहीं । उसने स्वास्थ्य के लिए ताजा वायु, सफाई तथा अच्छे भोजन का महत्व बताया ।

ईसा के आगमन से, रोगी की सेवा ने एक नया उद्देश्य अपना लिया । उनके उदाहरण ने तथा उनकी शिक्षाओं "अपने पडोसी को अपने समान ही प्यार करो" तथा "मेरे बन्धुओं, जैसा तुम इनमें से किसी एक के साथ करते हो. वह मेरे लिए ही करते हो" ने प्रारम्भिक ईसाइयो को ईश्वर के प्रेम के लिए, बिना किसी आशा और इनाम की इच्छा के, बाहर निकलने तथा गरीब और रोगी की सेवा करने के लिए प्रेरित किया । कुछ महिलाओं ने पुरूष पादरियो के साथ पादरिन का कार्य शुरू किया । वे रोगियो को उनके घरों में देखने जातीं और उनकी देखभाल करती । पादरिन बनने का फैशन, जिसका जिक्र संतपॉल ने किया है, आधुनिक जन-स्वास्थ्य नर्स का ही प्रारम्भ कहा जा सकता है ।

चौथी शताब्दी से, कई ईसाई महिलाएं मठो (Monasteries) मे नन (Nuns) बनने लगीं । रोगी और गरीब व्यक्ति उन दिनों मठों में सहायता प्राप्त करने के लिए दौड़ते । अत: मठो का विस्तार हुआ । वे बहुत बड़े समुदाय बन गए तथा उनमें अस्पताल विभाग खुल गए जिनमें जन "नन" "नर्स" के रूप में सेवा करने लगीं ।

बारहवीं शताब्दी में क्रूसेड (Crusade) के समय, अनेक रोगी और घायल यात्रियों की देखभाल करने के लिए दो सैनिक नर्स-दलों की स्थापना की गई थी । इन्हीं में से एक दल का विकास सन्त जॉन एम्बुलेन्स एसोसिएशन (St.John Ambulance Association) के रूप मे हुआ ।

ब्रिटेन मे यह मठ बहुत सशक्त और धनवान बन गए तथा सोलहवीं शताब्दी में राजा हेनरी अष्टम ने ईर्ष्यावश उन्हे बन्द करवा दिया और उनकी सम्पत्ति छीन ली । इस प्रकार "नर्सिंग

के काले युग" का आरम्भ हुआ । नागरिक अस्पताल बनाए गए, परन्तु बहुत कम शिक्षा प्राप्त महिलाएँ जो बिना किसी धार्मिक भावना के, थोड़े से वेतन के लिए काम करतीं, वे ही नर्स थीं । इन्हे कोई प्रशिक्षण प्राप्त न था । वे रोगी की तनिक भी परवाह नहीं करती थीं । नर्सिंग को वेतन या कमाने का माध्यम समझा जाने लगा ।

इसके बाद कुछ सुधार हुए । एक फ्रान्सीसी पादरी, सन्त विन्सेन्ट डी पॉल ने सामाजिक सेवा का कार्य प्रारम्भ किया, तथा इससे उच्च प्रकार के नर्सिंग समुदाय सिस्टर्स ऑफ चैरिटी" का विकास हुआ । जर्मनी के केसरवर्थ नामक नगर में रेवरेंड थियोडोर फ्लीडनर तथा उसकी पत्नी ने धार्मिक महिलाओं द्वारा सेवा करने वाली संस्था सहित एक अस्पताल खोला । इन महिलाओं को धर्म और नैतिकता, व्यवहारिक नर्सिंग तथा अन्य विषयो की शिक्षा दी जाने लगी । सन् 1850 में इसी अस्पताल में पलॉरेन्स नाइटिंगेल ने नर्सिंग का व्यवहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किया था ।

फ्लॉरेन्स नाईटिंगेल का जन्म 12 मई, 1820 को एक सम्पन्न अंग्रेज परिवार में हुआ था तथा उन्होनें उच्च शिक्षा प्राप्त की थी । बचपन से ही वे नर्स बनना चाहती थीं, परन्तु उसके माता पिता इसके विरूद्ध थे । वे उसका विवाह करना चाहते थे, परन्तु उसने यह अनुभव करते हुए कि ईश्वर के द्वारा वह विशेष कार्य करने के लिए उत्पन्न की गई है, विवाह करने से मना कर दिया।

1854 में क्रीमिया युद्ध प्रारम्भ हुआ और उन्हें रोगियों की सेवा का बहुत अच्छा अवसर प्राप्त हुआ । वे लन्दन के एक अस्पताल मे सुपरिन्टेन्डेंट थी, जब उन्होने युद्ध क्षेत्र मे घायल सिपाहियो की अपील सुनी । उन्होने शासन को एक पत्र लिखा कि वे अपनी सेवाएं अर्पित करने लिए तैयार हैं । उनका पत्र, युद्ध मंत्री के पास पहुचा और उनसे कहा गया कि वे सेवा का कार्य सम्भालें उन्होने शीघ्र ही अस्पतालों से तथा कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट संगठनों से 38 नर्से चुनी, सामग्री इकट्ठी की तथा पूर्व में स्कूटरी के अस्पताल के लिये यात्रा प्रारम्भ की । वहां पहुंच कर उन्होंने भयंकर स्थिति देखी । उपेक्षित घायल व्यक्ति अभी भी रक्त से लथपथ अपनी वर्दियों मे पड़े थे और उनमें से कुछ को तो, कई दिनों से पानी भी नहीं मिला था । बहुत कम समय मे पलॉरेन्स नाईटिंगेल ने सभी बातों की ऐसी अच्छी व्यवस्था की तथा हजारों मरते हुए सैनिकों को सहायता और आराम मिला । प्रत्येक रात को सोने से पूर्व, हाथ में लैम्प लिए वह उस वार्ड में चारों ओर घूमती और कष्ट झेलते हुए सैनिकों की सेवा करती तथा मरने वालों के अन्तिम सन्देश लिखती । इस प्रकार नाईटिंगेल ने "लेडी ऑफ दी लैम्प" का यश कमाया । नर्सो को एक टीम के रूप में संगठित करने के अतिरिक्त उन्हें सेना के बड़े अफसरो के विरोध का भी सामना करना पडा, क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि महिलाएं वहां आयें । परन्तु अन्त मे उन्होनें सैनिक अफसरो का सहयोग भी प्राप्त कर लिया । वे बीमार हो गई, परन्तु उन्होनें वह स्थान तब तक नहीं छोडा, जब तक युद्ध समाप्त नहीं हुआ और उनका कार्य समाप्त नहीं हो गया ।

उनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर ब्रिटिश सरकार ने उनके लिए चन्दा इकट्ठा किया, जिससे पलौरेन्स नाईटिंगेल ने 1660 मे सन्त टॉमस अस्पताल, लन्दन में नर्सो के प्रशिक्षण का एक विद्यालय प्रारम्भ किया । अपने कमरे में ही बैठकर वे बहुत मेहनत करतीं तथा ब्रिटिश सेना मे

स्वास्थ्य की हालत के सुधार के लिए बहुत लिखती । भारत के स्वास्थ्य के बारे में उनकी बहुत रूचि थी, तथा उन्होंने एक जन-स्वास्थ्य के कार्यक्रम की पूरी योजना भी बनाई थी, जिसका अधिकांश भाग क्रियान्वित भी किया गया । ब्रिटेन तथा अन्य देशों के सभी अस्पतालो तथा नर्सिंग सम्बन्धी विषयों पर उनकी राय ली जाती । 13 अगस्त 1910 को उनकी मृत्यु हुई तथा उन्हीं की इच्छा के अनुसार उन्हें "ईस्ट वेलो" के प्रागण मे दफनाया गया ।

केवल इंग्लैण्ड में ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व में पलोरस नाईटिंगेल का विद्यालय सभी नर्सिंग विद्यालयों के लिए एक आदर्श रहा है । पहले नर्सो को हेय दृष्टि से देखा जाता था । परन्तु नाईटिंगेल ने अपने अथक परिश्रम से नर्सिंग को समाज में एक सम्मान का दर्जा दिलाया और इसे एक प्रतिष्ठित व्यवसाय के रूप में मान्यता दिलाई ।

1.2.1 भारत में नर्सिंग का इतिहास

भारत में नर्सो को प्रशिक्षित करने का सबसे पहला प्रयत्न 1871 में मद्रास के राजकीय अस्पताल मे किया गया । यद्यपि इससे पूर्व दाइयों के प्रशिक्षण के लिए एक विद्यालय स्थापित था । बम्बई मे 1891 मे जे. जे. अस्पताल में नर्सिंग का प्रशिक्षण प्रारम्भ हुआ । कई वर्षो तक नर्सो का व्यवसाय, भारत मे नौकरों का व्यवसाय माना जाता रहा । इसलिए हिन्दू और मुसलमान लड़कियां इस कार्य के लिए सामने नहीं आई । केवल कुछ ईसाई लड़कियां ही पहले इस कार्य को सीखती थी । परन्तु पिछले कुछ वर्षो से यह भावना बदल रही है तथा सभी जातियों एवं समुदायों की लड़कियां अब इस क्षेत्र मे आ रही हैं । "स्टेट नर्सिंग काउन्सिल्स" (The State Nursing Councils) नर्सिंग के विद्यालयों को मान्यता देती हैं तथा प्रशिक्षित नर्सो और दाइयों का रजिस्टर रखती हैं । "इन्डियन नर्सिंग काउन्सिल" (INC) जिसकी स्थापना 1949 में हुई थी, भारत भर की नर्सिंग शिक्षा में एकीकरण और एक स्तर बनाए रखने का कार्य करती है ।

1908 में ट्रेंड नर्सेस एसोसिएशन ऑफ इण्डिया की स्थापना हुई । यह संस्था नर्सो, दाइयों तथा स्वास्थ्य की देखभाल करने वाली महिलाओं के कल्याण के लिए सक्रिय कार्य कर रही है । यह संस्था 1899 में स्थापित इन्टर नेशनल काऊंसिल ऑफ नर्सेस' से सम्बद्ध है । सभी देशों में नर्सिंग के सहयोग की आवश्यकता को अनुभव कर, इसकी स्थापना श्रीमती ईथल बेडफोर्ड फेन्दिक ने की । इसके अतिरिक्त भारत में स्टूडेन्ट नर्सेस एसोसिएशन का उद्घाटन 1919 मे हुआ । रोगियों और दुखियो की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहायता करने वाली संस्थाओं में "रेडक्रॉस सोसायटी" भी एक है। इसकी स्थापना 1864 में हुई थी । पहले इसका उद्देश्य केवल युद्ध के समय ही सेवा करना था । परन्तु अब इसके कार्यो में भूकम्प, बाढ आदि के प्रकोपों के समय पीडितों की सहायता करना, बीमारियों को रोकना तथा नर्सो को प्रशिक्षित करना भी सम्मिलित है । इसके अतिरिक्त भारतीय रेडक्रॉस सोसायटी, मातृत्व व शिशु कल्याण में भी रूचि लेती है तथा स्कूलो और कॉलेजो मे जूनियर रेडक्रॉस संस्थाओं को प्रोत्साहन देती है ।

1930 में नर्सेस ऑक्जिलियरी ऑफ दी क्रिश्चियन मेडिकल एसोसिएशन ऑफ इण्डिया' की स्थापना की गई । इसे अब सी. एम. ए.आई. की "क्रिश्चियन नर्सेस लीग" कहते हैं । इस

संस्था के कार्यो मे दक्षिण तथा मध्य भारत में परीक्षा बोर्ड का काम, नर्सिंग के लिए पाठ्य-पुस्तकें लिखना तथा ईसाई नर्सो में सम्मेलनों और सभाओं द्वारा सहयोग उत्पन्न करना है । इनके परीक्षा बोर्ड' द्वारा ली गई परीक्षाएं सरकार एवं आई. एन.सी. द्वारा मान्यता प्राप्त हैं ।

1.2.2 नर्सिंग: कुछ परिभाषाएं

नर्सिंग शब्द मूल रूप से न्यूट्रिशस शब्द से व्युत्पन्न हुआ है । जिसका अर्थ है पोषण करना, सुरक्षा करना, सहारा देना, जीवित रखना इत्यादि । इसका अर्थ प्रशिक्षण देना भी है । नर्सिंग की कोई सर्वमान्य परिभाषा उपलब्ध नहीं है । तथापि नर्सिंग की कुछ परिभाषाएँ निम्न प्रकार हैं-

- नर्सिंग सेवा को समर्पित एक व्यवसाय अथवा आहवान है ।
- नर्सिंग वह सेवा है जिसमे रोगी को औषधि देना, रोगी की सम्पूर्ण देखभाल करना, रोगी के पर्यावरण की देखभाल करना, रोगों से बचाव एवं स्वास्थ्य की उन्नति की दृष्टि से व्यक्ति, परिवार एवं समाज को स्वास्थ्य शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करना सम्मिलित है ।
- नर्सो की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था इन्टरनेशनल कॉसिल ऑफ नर्सेस (ICN) द्वारा स्वीकृत परिभाषा के अनुसार -

'नर्सिंग नर्स के द्वारा किया जाने वाला अनुपम कार्य है अर्थात् व्यक्ति (स्वस्थ / अस्वस्थ) की उन क्रियाओ को सम्पन्न करने में सहायता करना है जो उसके स्वास्थ्य में या स्वास्थ्य की पुनर्प्राप्ति (या शान्तिपूर्ण / मृत्यु) मे योगदान देती हैं एवं उन क्रियाओं को वह शक्ति, इच्छा अथवा ज्ञान होने पर स्वयं बगैर किसी सहायता के सम्पन्न करता है ।

- नर्सिंग एक कला एवं विज्ञान है ।
- नर्सिंग व्यक्ति, परिवार एवं समाज की स्वास्थ्य सम्बंधी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दी जाने वाली एक गतिशील उपचारात्मक एवं शैक्षणिक प्रक्रिया है ।

1.2.3 नर्सिंग का आधुनिक रूप

आज नर्सिंग को एक महत्वपूर्ण तथा सम्मानजनक व्यवसाय माना जाता है । हम यह देख चुके हैं कि अपने विकास में किस प्रकार नर्सिंग पर युद्ध और धर्म का प्रभाव रहा है । एक अन्य महत्वपूर्ण प्रभाव, लुई पाश्चर तथा जोसफ लिस्टर द्वारा सौ वर्ष पूर्व चिकित्सा और सर्जरी के क्षेत्र में किए गए वैज्ञानिक आविष्कारों का पड़ा है । इस प्रकार के आविष्कार अब भी जारी हैं । इसके अतिरिक्त चिकित्सा विज्ञान मे तीव्र परिवर्तनों के साथ-साथ नर्सिंग सम्बन्धी विचारो में भी परिवर्तन होता रहता है । अब नर्स को एक स्वास्थ्य शिक्षक के रूप मे महत्व देना स्वीकार कर लिया गया है । रोगियों की देखभाल के अतिरिक्त बीमारियों को रोकने तथा स्वास्थ्य को प्रोत्साहन देने का उत्तरदायित्व भी उस पर है । फिर भी नर्सिंग अभी पूरी तरह नही बदली है । सेवा की भावना, अपने रोगी एवं अपने व्यवसाय के लिए भरसक अच्छा प्रत्यन करना, जैसा कि पलॉरेन्स नाईटिंगेल ने किया था, नर्सिंग का एक अनिवार्य अंग है और रहेगा ।

इसके साथ यह भी उल्लेखनीय है कि नर्सिंग व्यवसाय दिनों-दिन विशिष्टीकरण की ओर बढ़ता जा रहा है । आधुनिक नर्सिंग ने जीवन के प्रत्येक पहलू पर अपना प्रभाव डालना प्रारम्भ कर

दिया है । संस्थागत या हॉस्पिटल नर्सिंग से बढ़ कर सामुदायिक स्वास्थ्य नर्सिंग ही नही अपितु अंतरिक्ष नर्सिंग (स्पेस नर्सिंग) तक की चर्चाऐं होने लगी हैं । नर्सिंग शिक्षा को निजी क्षेत्र के लिए खोल दिये जाने से नर्सिंग प्रशिक्षण केन्द्रो की संख्या में लगातार वृद्धि होती जा रही है । इस समय देश में 58 एम.एस.सी. (पी.जी. कॉलेज),254 बी.एस.सी. नर्सिंग कॉलेज, 964 जनरल नर्सिंग प्रशिक्षण केन्द्र, 478 ए.एन.एम. प्रशिक्षण केन्द्र संचालित हो रहे है । (2005)
यह संतोषजनक एवं प्रसन्नता का विषय है कि नर्सिंग को पहले की अपेक्षा अधिक सम्मानजनक दृष्टि से देखा जाने लगा है तथा नर्सिंग व्यवसाय का स्तर क्रमश: ऊँचा होता जा रहा है ।

- **नर्सिंग के स्कोप**

नर्सिंग उपचारात्मक पक्ष के साथ रोग निवारण तथा स्वास्थ्य सम्वर्धन से सम्बन्धित है । इसमें विभिन्न क्षेत्र निहित हैं । कुछ नर्सिंग स्कोप निम्न हैं -

(i) हॉस्पिटल प्रैक्टिस
(ii) सामुदायिक प्रैक्टिस
(iii) निजी प्रैक्टिस
(iv) विशिष्ट सेवाएं, जैसे - कार्डिएक, नेत्र, कैंसर, शिशु प्रसूति विज्ञान, ऑपरेशन थियेटर, वृद्धावस्था देखभाल, परामर्शदाता (मनोवैज्ञानिक) इत्यादि ।

1.3 नर्सिंग एवं प्रसूति विज्ञान

इस इकाई के प्रारम्भ में नर्सिंग के इतिहास मे यह स्पष्ट किया गया है कि सम्भवत: नर्सिंग की शुरूआत प्रासविक कर्म से हुई, धीरे-धीरे प्रसव कर्म के अलावा स्वास्थ्य की देखभाल भी समाज की आवश्यता बन गई । यहां तक कि पहला सुख निरोगी काया माना गया अर्थात् प्रसव कर्म से प्रारम्भ होकर आज नर्सिंग का व्यापक आधार हो गया है । जबकि प्रसूति विज्ञान, चिकित्सा शास्त्र एवं नर्सिंग की एक विशिष्टीकृत शाखा बन चुकी है । वर्तमान में प्रसूति कर्म हेतु अलग से चिकित्सा एवं नर्सिंग कर्मियों को प्रशिक्षित किया जाता है । नर्सिंग के सभी सिद्धान्त प्रसूति विज्ञान मे प्रयुक्त किये जाते हैं तथा अच्छी प्रसूति का सीधा सम्बन्ध अच्छी नर्सिंग से माना जाता है । यह कहा जा सकता है कि नर्सिंग एवं प्रसूति विज्ञान के सम्बन्ध एक दूसरे पर आश्रित, निरन्तर एवं प्रगतिशील हैं । इस पाठ्यक्रम की अगली इकाई में इस पर विस्तार से विचार विमर्श किया गया है ।

1.4 दाइयां अथवा परम्परागत जन्म सहायिका (Traditional Birth Attendant-TBA)

स्थानीय दाई (ट्रेडीशनल बर्थ अटेन्डेंट) के प्रशिक्षण संबंधी जानकारी रखना सभी स्वास्थ्य प्रबंधक, प्रसूति विज्ञान सहायिका तथा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (ए.एन.एम.) के लिए आवश्यक है ।

विश्व के 75 प्रतिशत से, अधिक बच्चों का प्रसव अब भी अप्रशिक्षित दाइयों (बर्थ अटेन्डेंट्स) द्वारा किया जाता है । भारत में अधिकांश लोग गांवों में रह रहे हैं, परन्तु अभी भी कई गांव

ऐसे हैं जो प्रशिक्षित महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओ (ए.एन.एम.) अथवा प्रसूति सहायिका की सेवाओं से वंचित हैं ।

भारतीय जन-जीवन में दाई का एक प्रमुख स्थान है । वह महिलाओ के जीवन में विशेषतया ग्रामीण क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती रही है । ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधाओं का विकास होने पर भी बहुत कम प्रतिशत में प्रतिशत में ही प्रसव अस्पतालों में होते हैं या प्रशिक्षित पैरामेडिकल स्टाफ अमले द्वारा किए जाते हैं, जबकि प्रसूति देखरेख करने का अधिकांश भार देशी ग्रामीण दाई द्वारा ही वहन किया जा रहा है ।

दाई न केवल बच्चे के जन्म के समय सहायता करती है बल्कि गर्भावस्था के दौरान, प्रसव के बाद, बीमारी के समय तथा महिलाओं को उनकी वैयक्तिक या घरेलू समस्याओं के बारे में एक सलाहकार के रूप में भी काम करती है अत: घर पर वह एक स्वागत योग्य अतिथि होती है तथा ग्रामीण महिलाओं पर पर्याप्त प्रभाव रखती है ।

1.4.1 दाइयों का प्रशिक्षण

देशी दाइयां अपने व्यवसाय में पुराने रूढ़िगत तथा परम्परागत तरीकों का उपयोग करती हैं । अधिकतर ये दाइयां अनपढ़ और अशिक्षित होती हैं । उचित दक्षता स्वास्थ्यकर कार्य या त्रुटिपूर्ण कार्य करने तथा उनके कार्य में अपूतिक (असेप्टिक) तकनीक की कमी से माताओं तथा बच्चों दोनों में रूग्णता या मृत्यु दर की अधिकता होती है ।

इसलिए यह महसूस किया गया कि माताओं व बच्चों के लिए स्वास्थ्य सेवाएं ग्रामीण क्षेत्रों तक बढ़ा कर इस विशाल देशी जन शक्ति का उपयोग दाइयों को आवश्यक प्रशिक्षण देकर अच्छे ढंग से किया जा सकता है । ऐसा प्रशिक्षण, न केवल सुरक्षित प्रसव के लिए परिस्थितियों को सुधारेगा बल्कि माता और बच्चे की अच्छी देखरेख सेवाओं में विस्तार को भी सुनिश्चित करेगा । इन प्रशिक्षित दाइयों का उपयोग छोटे परिवार के सिद्धान्त का संदेश फैलाने के लिए भी प्रभावी रूप से किया जा सकता है ।प्रशिक्षित दाइयों का उपयोग छोटे परिवार के सिद्धान्त का संदेश फैलाने के लिए भी प्रभावी रूप से किया जा सकता है ।

दाइयों को प्रशिक्षण देने की योजना भारत सरकार द्वारा मातृ व बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम के अधीन केन्द्रीय प्रायोजित योजना के रूप में आरम्भ की गई थी । यह योजना 1977 तक अनुक्रमिक रूप से प्रत्येक पंचवर्षीय योजना मे जारी रही । देश के प्रत्येक गांव में कम से कम एक प्रशिक्षित दाई होने के अन्तिम लक्ष्य के साथ अप्रैल. 1977 से इसका फैलाव बड़े पैमाने पर हुआ । अभी भी यह प्रशिक्षण लगातार चल रहा है ।

1.4.2 प्रशिक्षण के उद्देश्य

दाइयों को प्रशिक्षण देने की योजना का उद्देश्य कुल मिला कर ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसूति सेवाओं का सुधार करने तथा ग्रामीण समाज में छोटे परिवार के सिद्धान्त को बढ़ावा देने में उनकी सेवाओं का लाभ उठाना है ।

प्रशिक्षण कार्यक्रम का विशेष उद्देश्य दाइयों को इस योग्य बनाना है कि वे -

(क) यह समझें कि पूतिता (सेपसिस) तथा अपूति (असेपसिस) से अभिप्राय क्या है?

(ख) प्रसूति कार्य मे अपूतिक (असेप्टिक) तकनीक के उपयोग के महत्व को समझे ।

(ग) अपूतिक (असेप्टिक) तकनीक का उपयोग करते हुए प्रसूति कार्य में दक्षता का विकास करे ।

(घ) ऐसी परिस्थितियों को समझे जिनमें उन्हे प्रशिक्षित व्यक्तियों अर्थात् स्वास्थ्य कर्मचारी महिला, सहायक नर्स-दाई या स्वास्थ्य सहायक (महिला स्वास्थ्य परिचारक) से सहायता प्राप्त करनी चाहिए ।

(ङ) समाज में परिवार नियोजन कार्यक्रम को बढ़ावा देने में अपनी भूमिका को पहचानना ।

(च) यह स्वीकार करना कि माता व बच्चे की देखरेख तथा समाज में परिवार नियोजन के लिए प्रभावपूर्ण सेवा करने में उनमें से प्रत्येक (दाई) को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है ।

1.4.3 प्रशिक्षण के लिए दाइयों का चयन

प्रत्येक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) को अपने क्षेत्र की दाइयों का पता करना चाहिए तथा उनके नाम व पतों की सूची बनानी चाहिए, जिसे वह प्रशिक्षण के लिए दाइयों का चयन करते समय अपने पर्यवेक्षक को देगी । स्वास्थ्य सहायक (महिला), अथवा लेडी हेल्थ विजिटर को निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए-

(क) दाइयों को उन गांवों मे जहां पर वे रह रही हैं, प्रसूति (दाइगिरी) व्यवसाय करने वाली होनी चाहिए ।

(ख) उन दाइयों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जो अधिक लोक-प्रिय हों तथा जो अधिक संख्या में प्रसव के मामले अपने हाथ में लेती हों ।

(ग) दूरस्थ गांवों अर्थात उप केन्द्रों तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों से दूर रहने वाली महिलाएं, चयन हेतु अधिक उपयुक्त हैं ।

1.4.4 प्रशिक्षण स्थल तथा उत्तरदायी व्यक्ति

प्रशिक्षण, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, उप केन्द्रों या मातृ व बाल स्वास्थ्य (एम.सी.एच.) केन्द्रों अथवा जिला चिकित्सालय में दिया जा सकता है । दाई प्रशिक्षण के आयोजन तथा संचालन के लिए महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / लेडी हेल्थ विजिटर उत्तरदायी होगी तथा स्वास्थ्य कार्यकर्ता महिला, जन स्वास्थ्य नर्स अपने क्षेत्र में उसकी सहायता करेगी । जिला अस्पताल, सामुदायिक स्वास्थ्य केंन्द्र या प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की चिकित्सा अधिकारी अथवा अन्य कोई भी उत्तरदायी चिकित्सक दाई प्रशिक्षण गाइड करेगी । प्रत्येक दाई को चिकित्सालय, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उपकेन्द्र या मातृ व बाल स्वास्थ्य (एम.सी.एच.) केन्द्र में प्रशिक्षण हेतु आना होगा । वह महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) के साथ दौरे पर जोयेगी और समुदाय के दौरे के समय महिला स्वास्थ्यकार्यकर्ता सम्बंधित दाई के प्रशिक्षण के दौरान, प्रशिक्षु को कम से कम दो प्रसूति केस करायेगी ।

1.4.5 प्रशिक्षण की विषय सूची

नीचे लिखे विषयों का प्रशिक्षण दिया जायेगा -

(क) महिला श्रोणि (पेलविस) की संरचना, प्रजनन अंग, ऋतुस्राव, गर्भाधान तथा भ्रूण की वृद्धि ।

(ख) अपूति (असेप्सिस) तथा पूतित या पूतीयता (सेप्सिस) की परिभाषाएं, पूतिरोधी दवाए (ऐंटिसेप्टिक्स), विसंक्रमण तकनीक, कैंची तथा नाल बन्धन (कार्ड टाईज) का विसंक्रमण करना ।

(ग) प्रसव पूर्व देखरेख, प्रसव पूर्व केस दर्ज करना, प्रसव पूर्व परीक्षण, पेशाब परीक्षण, टेटनस से प्रतिरक्षण (इम्यूनाइजेशन) का महत्व ।

(घ) गर्भावस्था के दौरान की असामान्य परिस्थितियां, गर्भावस्था की जटिलताएं, अपसामान्य गर्भ की समय पर पहचान करना, चिकित्सा सलाह के लिए केस रेफर करने के लिए हिदायतें ।

(ङ) (ड.) सामान्य प्रसव की क्रिया विधि ।

(च) सामान्य प्रसव के लिए तैयारी, दाई किट तैयार करना तथा उसका उपयोग ।

(छ) प्रसव का प्रबन्ध करना, ऐनीमा कराना, प्रसव के दौरान गलत सलाह से होने वाली दुर्घटनाएं रोकना ।

(ज) प्रसवोत्तर रक्तस्त्राव - कारण, रोकथाम तथा प्रथम उपचार ।

(झ) उत्तरवर्ती प्रसव अनुरक्षण-मूलाधार (पेरिनीअम), स्त्तनों की देखभाल ।

(ञ) नवजात शिशु की देखरेख-सफाई, नाल (कॉर्ड) की देखभाल, स्तनपान का महत्व, पूरक आहार, प्रतिरक्षण इम्यूनाइजेशन) ।

(ट) माताओं तथा शिशुओं में बीमारी तथा मृत्यु के कारण तथा रोकथाम ।

(ठ) जन्म तथा मृत्यु की रिपोर्ट करना ।

(ड) गर्भ निरोधक तरीके ।

(ढ) आर.सी.एच. (R.C.H.) कार्यक्रम : परिवार कल्याण कार्यक्रम में दाई की भूमिका-मातृ व बाल स्वास्थ्य (एम.सी.एच.) तथा परिवार नियोजन इनके अतिरिक्त " पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों की देखभाल के प्रारम्भिक नियम, माता को स्वास्थ्य नियम आदि की शिक्षा देना भी सिखाया जाता है ।

1.4.6 शिक्षण उपकरण

जन्म एटलस, गर्भाशय का नमूना (मॉडल), आभासी 'श्रेणी (फैन्टम पेलविस) तथा भ्रूण और दाइयों के लिए (यूनिसेफ) प्रदर्शन किट । एक टी.बी.ए. (दाई) प्रशिक्षक की किट मे नीचे लिखी सामग्री होगी

(क) प्रशिक्षण की मुख्य-मुख्य बातों विषयक जानकारी ।

(ख) पाठ/योजना/सुझाव ।

(ग) शिक्षण/पढ़ाई के उपलब्ध साधन (विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्देशित)

1.4.7 स्मरण रखने योग्य बातें

चूंकि अधिकांश दाइयां पढ़-लिख नहीं सकती, इसलिए, उनके प्रशिक्षण मे लैक्चर देने की लगभग कोई उपयोगिता नही होगी या इसका प्रभाव होगा भी तो बहुत कम । अत: समय का अधिक उपयोग मार्गनिर्देशन तथा पर्यवेक्षण के अधीन परिचर्चा करने, प्रदर्शन करने, अवलोकन करने तथा अभ्यास में करना चाहिए ।

(क) अनेक दाइयां प्रौढ़ व अनुभवी स्त्रियां हो सकती हैं परन्तु वे सीखने के लिए उत्सुक नहीं होती । प्रशिक्षकों अथवा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) को अत्यन्त धैर्यवान होना चाहिए तथा उसे दाइयों को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए ।

(ख) पाठ -सरल एवं व्यवहारिक हों और अधिक लम्बे नहीं होना चाहिए । सरल भाषा और शब्दों का प्रयोग करें जिनसे वे परिचित हों तथा जब कभी संभव हो स्थानीय-बोली का ही प्रयोग करें ।

(ग) आप जो बात स्पष्ट करने का प्रयास कर रही हैं उसे उदाहरण के साथ समझाने के लिए सरल साधनों का उपयोग करें । यदि आपके पास श्रोणि (पेलविस) या फीटल-गुड़िया का शिक्षण मॉडल नहीं है. तो यह दिखाने के लिए कि किस प्रकार सिर को बाहर निकलने देने के लिए गर्भाशय (सर्विक्स) खुलता है पर्स खोलने की डोरी सहित कपड़े के बैग का उपयोग करते हुए कपड़े की गुड़िया बना कर काम चलाऊ प्रबंध किया जा सकता हैं । प्रजननीय अंगों, गर्भाधान तथा भ्रूण की वृद्धि आदि दिखाने के लिए सरंल मॉडलों, चित्रों, फलालेन ग्राफ तथा पलैश कार्ड को माध्यम बनाया जा सकता है ।

(घ) जहां पर संभव हो प्रदर्शित करने के लिए वास्तविक सामग्री का उपयोग करें । उदाहरण के लिए विचार-विमर्श के दौरान कक्षा में परिवार नियोजन के मॉडल, "कॉपर-टी"., गर्भ निरोधक गोलियों के पैकेट, निरोध पैकेट, आदि दाई को दिखाए जा सकते हैं ।

(ङ) जहाँ तक संभव हो प्रदर्शित करने तथा पुन: प्रदर्शित (रिटर्न डिमास्ट्रेशन) करने के तरीके का उपयोग करें । जब प्रशिक्षार्थी प्रतिफल या रिटर्न प्रदर्शन करता है, तो अन्य प्रशिक्षार्थियों को उसे देखने तथा उस पर टिप्पणी करने के लिए कहें कि क्या प्रक्रिया को ठीक ढंग से अपनाया जा रहा है या नहीं ।

(च) प्रशिक्षक अथवा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) यह पता लगाए कि दाइयों के रिवाज क्या हैं तथा उनके पीछे कारण क्या हैं और क्या किसी अच्छी बात के आधार पर बने हैं । सभी पुराने तरीकों की आलोचना, आरम्भ में ही नहीं करनी चाहिए ।

(छ) प्रदर्शन के लिए जिस सामग्री की आपको आवश्यकता हो उसे तैयार रखें । उदाहरण के लिए "सामान्य प्रसव के लिए तैयारी" की चर्चा के लिए देखें कि आपके पास दाई की किट, स्टोव, पानी का साफ बरतन, शिशु के कपडों का जोड़ा आदि हैं । यदि संभव हो, तो गृह-प्रसव करने के लिए नमूने (मॉडल) के रूप मे एक छोटे कमरे की व्यवस्था करें ।

(ज) जहां तक संभव हो दाइयों को अपनी निगरानी में प्रसव पूर्व परीक्षण, मूलाधार (पेरिनीअल) देखभाल, नाल (कॉर्ड) ड्रैसिंग जैसी तकनीकों तथा घर-पर या क्लिनिक में वास्तविक केसों का अभ्यास करवाएं ।

(झ) "बच्चों के प्रतिरक्षण (इम्यूनाइजेशन) के लिए माता-पिता को कैसे प्रेरित किया जाऐ" या "एक बच्चे और दूसरे बच्चे के जन्म समय में अन्तर डालने या अपने परिवार को सीमित करने के लिए पात्र दम पतियों को कैसे प्रेरित किया जाए" जैसे कुछ विषय सिखाने के लिए रोल-प्ले तरीका अच्छे प्रभाव हेतु उपयोग किया जा सकता है । "अधिक क्रियाशील स्थिति" बनाने के लिए इन्हें दाई की पृष्ठभूमि तथा अनुभव पर के आधार पर सकता है।

(त) यथासम्भव अनौपचारिक ढंग से कक्षा को व्यवस्थित करें । चटाई पर एक घेरे में दाइयों को अपने साथ बिठाएं । प्रशिक्षण साधन जैसे कि फलालेनग्राफ और. पलैश-कार्ड को जमीन पर सुगमता से समझाया व प्रदर्शित किया जा सकता है प्रशिक्षार्थी इस तरह इसे सुगमता से समझेंगे।

(थ) जब गृह-परीक्षण पर दाइयां प्रशिक्षक या महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता, जनस्वास्थ्यकर्ता के साथ हो तो शिशुओं के प्रसव, स्तनपान, गर्भनिरोधक उपायों के उपयोग आदि के बारे में जो कुछ वे जानती हैं उसके लिए सदैव आदर व्यक्त करना चाहिये तथा जब कभी संभव हो, उन्हें इसमें सहायता करने दें ।

(द) गृह-परीक्षण के समय परिवार के सदस्यों के सामने दाई की गलती को तब तक न बताएं जब तक कि वह कोई ऐसा कार्य न करे जिससे माता व बच्चे को कोई हानि हो । बाद में व्यक्तिगत रूप से उसका ध्यान इस ओर दिलाया जा सकता है ।

पाठ्यक्रम के लिए दाई के नामांकन के समय उसे यह बता देना चाहिए कि गांव की माताओं की अधिक सेवा करने के लिए ही उसे प्रशिक्षण दिया जा रहा है अत: उसे माताओं का ध्यान रखना चाहिए ।

प्रशिक्षण के सफलतापूर्वक सम्पन्न होने पर प्रत्येक दाई का नाम चिकित्सालय अथवा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र मे दर्ज किया जाता है । उन्हें प्रमाण पत्र भी दिया जाता है । वर्तमान में दाई प्रशिक्षण का कार्य जिला प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य अधिकारी (DRCHO) मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी (CMHO)की देखरेख में होता है ।

1.4.8 स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं तथा दाइयों के बीच संबंध

अपने काम में निरन्तर प्रोत्साहन, मार्गदर्शन या सहायता प्राप्त करना प्रशिक्षित दाइयों के लिए आवश्यक है । यदि ऐसा नही किया गया तो वे अपने पुराने ढंग से ही प्रसव कार्य करने लगेंगी । इस प्रकार उन्हें दिए गए प्रशिक्षण का कोई लाभ नहीं होगा ।

हेल्थ विजिटर/ महिला स्वास्थ्य कार्यकता (ए.एन.एम.) स्वास्थ्य सहायक (महिला) तथा लेडी हेल्थ विजिटर अथवा प्रसूति विज्ञान सहायिका जब कभी भी प्रशिक्षित दाई के गांव में जाएं तो प्रत्येक प्रशिक्षित दाई के पास जाना चाहिए । दाई के पास जाने के दौरान उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि दाई की किट साफ रखी गई है तथा उसमें पर्याप्त मात्रा में गर्भ निरोधक है । यदि आवश्यक हो तो उसमें लोशन, रोगाणुहीन सामान और दवाइयां फिर से भर लेनी चाहिए ।

उन्हें जन्म तथा मृत्यु और प्रतिरक्षित (इम्यूनाइजड) बच्चों की संख्या सम्बंधी जांच- पड़ताल करनी चाहिए तथा दाइयों की देखरेख अधीन माताओं व बच्चों के परीक्षण का प्रयास करना चाहिए । अपसामान्य केस को रैफर करने के लिए दाइयों को प्रेरित करते रहना चाहिए ।

महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता को अपने क्षेत्र की दाइयों के साथ सदैव अच्छे संबंध बनाए रखने का प्रयत्न करना चाहिए । इसके लिए वह दाई द्वारा किए गए कार्य का आदर करे और अपनी देखभाल अधीन सभी सामान्य प्रसवपूर्व केस उसे सौंप दे । अपने केसों के बारे मे दाई जो कुछ कहना चाहती है उसे ध्यानपूर्वक सुने । उपकेन्द्र में भाता और बच्चे के लिए क्लिनिक" कार्य में दाई को शामिल करे । स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं से एक मित्र व मार्गदर्शक के रूप में परामर्श व सहायता लेने के लिए उन्हें प्रेरित करने का प्रयास करती रहे ।

1.5 महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (फीमेल हेल्थ वर्कर या ए.एन.एम.FHW/ANM)

भारत वर्ष में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (फीमेल हेल्थ वर्कर) को स्वास्थ्य सेवाओं, विशेषकर ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं की रीढ़ कहा जा सकता है । ग्रास-रूट स्तर तक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच के लिए स्वास्थ्य उपकेन्द्रों पर, उपयुक्त संख्या में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का होना आवश्यक है । करतार सिंह कमेटी की अनुशंसाओं के आधार पर बहु-उद्देश्यीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया । वर्तमान में 142611 (2005) उपकेन्द्रों का संचालन महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं द्वारा किया जाता है, यह उल्लेखनीय है कि बहु उद्देश्यीय कार्यक्रम लाग होने के उपरान्त भी महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (FHW या फीमेल हेल्थ वर्कर) के स्थान पर ए.एन.एम. (ANM)नाम अधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय है ।

1.5.1 महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण

महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण पूर्व में 2 वर्ष का होता था किन्तु वर्तमान में यह अवधि 1 1/2 वर्ष है । इसमें चयन हेतु न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता दसवीं कक्षा (उत्तीर्ण) है । एफ.एच. डब्ल्यू. या ए.एन.एम. प्रशिक्षण हेतु वर्तमान में 478(2005) प्रशिक्षण केन्द्रों का संचालन हो रहा है । जिनकी प्रवेश क्षमता लगभग 26000 के आसपास है । यह योजना शत-प्रतिशत केन्द्र सरकार द्वारा संचालित होती है । महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता प्रशिक्षण को भारतीय नर्सिंग परिषद (INC) की मान्यता मिली हुई है तथा विभिन्न राज्यों की राज्य नर्सिंग परिषद (स्टेट नर्सिंग कॉन्सिल) इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की निगरानी करती हैं । देश में संचालित महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण केन्द्रों में, केन्द्र एवं राज्य सरकारी द्वारा संचालित केन्द्रों के अलावा स्वैच्छिक संगठनों द्वारा अपने संसाधनों से चलाये जा रहे, कुछ प्रशिक्षण केन्द्र भी शामिल हैं । ये प्रशिक्षण संस्थान उपकेन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों हेतु उपयुक्त संख्या में बहु-उद्देशीय महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (FHW/ANM) तैयार करने में अपना योगदान दे रहे हैं ।

इनके अतिरिक्त बहु उद्देशीय पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं तथा महिला स्वास्थ्य सहायिकाओं हेतु भी अलग से प्रशिक्षण केन्द्रों का संचालन किया जा रहा है ।

1.5.2 महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाएँ एवं कार्य

एक महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) को जन समुदाय को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के दौरान अनेक भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं, उनमें कुछ निम्न प्रकार से हैं -

- स्वास्थ्य सेवा प्रदाता के रूप में
- स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने वाले दल की एक प्रमुख सदस्य के रूप में
- स्वास्थ्य शिक्षा/ प्रशिक्षक एवं परामर्शदाता के रूप में
- समन्वयक के रूप में
- व्यवस्थापक के रूप में

महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता को उपरोक्त भूमिकाओं का निर्वहन इस कुशलता के साथ करना चाहिए कि समाज को उत्तम व गुणवत्तापूर्ण सेवाएं प्राप्त हो सकें । अपनी भूमिकाओं से अच्छी तरह परिचित होने के लिए महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता को अपने कर्त्तव्य व जिम्मेदारियों को साथ रख कर देखना होगा । इनका वर्णन निम्न प्रकार है :

(क) सेवा प्रदाता की भूमिका

महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता को सेवा प्रदाता के रूप निम्न कार्य करने होते हैं :

(i) सुरक्षित मातृत्व शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम

- गर्भवती महिलाओं का शीघ्र पंजीकरण कर उन्हें सभी आवश्यक सेवाएं प्रदान करना ।
- गर्भवती महिलाओं के पेशाब में एल्ब्यूमिन एवं शर्करा (यूरीन शुगर) तथा हीमोग्लोबिन की जांच करना ।
- प्रसव पश्चात् माँ की आवश्यक देखभाल करना ।
- उपकेन्द्र पर प्रसव पूर्व व प्रसव पश्चात् सेवाओं हेतु नियत दिवस पर सेवाएं प्रदान करना।
- गर्भावस्था के दौरान सम्भावित खतरे के लक्षण वाली महिलाओं, यौन रोग व यौन संक्रमण वाली महिलाओं तथा कठिन प्रसव वाली महिलाओं को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र / सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र में आवश्यक इलाज हेतु रेफर करना ।
- प्रसव के समय सफाई के पाँच नियमों की पालना सुनिश्चित करना ।
- नवजात शिशु की जांच कर कम वजन वाले व असामान्य शिशुओं की पहचान कर उनकी आवश्यक देखभाल करना व आवश्यक हो तो इलाज हेतु रेफर करना ।
- शिशु का यथासमय टीकाकरण करना ।
- टीकाकरण से हुए साधारण दुष्प्रभावों का उपचार करना ।

(ii) परिवार कल्याण कार्यक्रम

- योग्य दम्पत्तियों का पंजीकरण कर उन्हें गर्भनिरोधक दवाइयां / उपकरण उपलब्ध कराना।
- परिवार कल्याण कार्यक्रम के लाभार्थी दम्पत्तियों को गर्भ निरोधक दवाइयों / उपकरणों के असामान्य अथवा उत्पन्न दुष्प्रभावों का आवश्यक उपचार करना ।
- गर्भ निरोधक उपकरणों / दवाइयों की नियमित आपूर्ति करना ।

- प्रजनन योग्य दम्पत्ति रजिस्टर का संधारण करना ।

(iii) चिकित्सीय गर्भ समापन (MTP) सेवाएँ

- गर्भ समापन के लिए इच्छुक महिलाओं की पहचान कर उन्हे समीपस्थ पंजीकृत गर्भ समापन केन्द्र को रेफर करना ।

(iv) संक्रामक बीमारियाँ

- उप केन्द्र क्षेत्र में होने वाली आम बीमारियों मे असामान्य रूप से वृद्धि होने पर तुरन्त प्रा. स्वा.केन्द्र के चिकित्साधिकारी को सूचित करते हुए बीमारी के नियन्त्रण व उपचार हेतु आवश्यक कदम उठाना ।
- गृह सम्पर्क के दौरान बुखार का रोगी पाए जाने पर उसके खून की रक्त पट्टिका (स्लाइड) बनाना व मलेरिया का प्राथमिक उपचार देना ।
- गृह सम्पर्क के दौरान पाए गए क्षय व कुष्ठ रोगियों की पहचान कर उन्हें नियमित इलाज लेने हेतु प्रेरित करना ।

(v) प्राथमिक चिकित्सा

- उपकेन्द्र क्षेत्र में जन साधारण को सामान्य बीमारियों का उपचार देना ।
- दस्त से पीड़ित बच्चों को जीवन रक्षक घोल उपलब्ध कराना ।
- सर्दी जुकाम से पीडित बच्चों की घरेलू देखभाल हेतु माताओं को सक्षम बनाना तथा साधारण निमोनिया की शीघ्र पहचान कर आवश्यक उपचार करना ।
- गंभीर निमोनिया व गंभीर बीमारी के लक्षण वाले बच्चों की पहचान कर, उन्हे उपयुक्त अस्पताल मे तुरन्त इलाज हेतु रेफर करना ।
- रतौंधी से पीडित बच्चों को उपचार देना ।

(ख) स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने वाले दल की प्रमुख सदस्य के रूप में भूमिका

- उपकेन्द्र क्षेत्र में होने वाले 50 प्रतिशत प्रसव यथासंभव स्वयं कराना तथा प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं, स्थानीय दाइयों द्वारा कराए जाने वाले प्रसव के मामलों मे पर्यवेक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका निभाना व आवश्यक होने पर दाइयों की सहायता करना । "
- डिपो होल्डर स्थापित करना व उन्हें नियमित सप्लाई सुनिश्चित करना ।
- परिवार कल्याण के संतुष्ट लाभार्थियों, प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं, स्थानीय दाइयों, स्वास्थ्यकर्मी / जनमंगल जोड़े व आंगनबाडी कार्यकर्ताओ / आशा (ASHA) मे परस्पर समन्वय स्थापित कर मातृ स्वास्थ्य को अधिक बेहतर व प्रभावी बनाने की दिशा मे कार्य करना।

चित्र : महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाएँ

- स्थानीय स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने वाले दल के सदस्यों या प्रसूति विज्ञान सहायिका, दाई, आशा, आँगनबाडी कार्यकर्ता, महिला स्वास्थ्य संघ की सदस्यों व औपचारिक समूहो की मदद से ज्यादा से ज्यादा महिलाओं एवं शिशुओं को आवश्यक सेवाएं प्रदान करने हेतु प्रेरित करना ।
- बीमारियों में असामान्य रूप से वृद्धि होने पर स्थानीय स्वास्थ्य सेवा दल के सदस्यों, औपचारिक समूहों की मदद से उन पर नियन्त्रण करना ।
- नियत दिन पर टीकाकरण हेतु गर्भवती महिलाओं व शिशुओ को टीकाकरण केन्द्र, उपकेन्द्र या प्रा. स्वा. केन्द्र पर लाने के लिए महिला स्वास्थ्य संघ, महिला मण्डल व औपचारिक समूहों के सदस्यों को प्रेरित करना, शत-प्रतिशत टीकाकरण सुनिश्चित करना ।
- क्षय रोग व कुष्ठ रोग के रोगियों की पहचान मे सभी औपचारिक समूहो के सदस्यों का सहयोग प्राप्त करना ।
- कुपोषण से पीडित बच्चो की पहचान कर व उनका उचित पोषाहार द्वारा उपचार करने के लिए महिला मण्डल, महिला स्वास्थ्य संघ के सदस्यों के सहयोग से, उनकी माताओ को सक्षम बनाना।
- शिशुओं को जन्म से एक घण्टे के भीतर स्तनपान कराने व उचित उम्र पर ऊपरी अर्ध ठोस आहार प्रारम्भ कर उन्हें कुपोषण से बचाने हेतु महिला संगठनों के माध्यम से माताओं को सक्षम बनाना ।

(ग) स्वास्थ्य शिक्षक की भूमिका

- सभी गर्भवती महिलाओं को प्रसव पूर्व आवश्यक सेवाओं का महत्व बता कर, उन्हे प्राप्त करने के लिए शिक्षित करना ।
- प्रसव पश्चात् माताओं को मातृ कला मे निपुण बनाने हेतु शिक्षित करना ताकि वे अपने सामान्य नवजात शिशुओं की अच्छी तरह देखभाल कर सकें ।
- मातृ मृत्यु दर व शिशु मृत्यु दर कम करने व माताओं के अच्छे स्वास्थ्य की देखरेख, परिवार नियोजन. पोषाहार, टीकाकरण, संक्रमण से होने वाली बीमारियों से बचाव, व्यक्तिगत व वातावरण की स्वच्छता के बारे में, परिवार के सदस्यों को शिक्षित कर स्वस्थ एवं खुशहाल परिवार के निर्माण मे सहायता करना ।
- उपकेन्द्र क्षेत्र की स्थानीय दाइयों को सूचीबद्ध कर उन्हे संक्रमण रहित प्रसव कराने मे प्रशिक्षित करना ।
- दस्त व निमोनिया से पीड़ित बच्चों की उचित घरेलू देखभाल व उपचार के लिए महिलाओं को शिक्षित करना ।

(घ) समन्वयक की भूमिका

- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्साधिकारी व महिला स्वास्थ्य सहायक को प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम को सुचारू रूप से चलाने में सहायता करना ।
- संक्रामक रोगों के उन्मूलन व नियन्त्रण कार्यक्रमों को चलाने में चिकित्साधिकारी के निर्देशानुसार पूरे मनोयोग से सहयोग करना । किसी रोग की असामान्य वृद्धि होने पर चिकित्साधिकारी को सूचित कर उसके नियन्त्रण हेतु निर्देशानुसार कार्य करना ।

- गांव के स्थानीय व चुने हेतु प्रतिनिधियों, प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं, दाइयों, औपचारिक समूहों व आंगनबाडी कार्यकर्ता, आशा इत्यादि से समन्वय कर परिवार कल्याण कार्यक्रमो का प्रसार व प्रचार करना ।
- महिला स्वास्थ्य संघ व अन्य औपचारिक समूहों की स्थानीय बैठकों में भाग लेकर उनके ज्ञान व कौशल में वृद्धि कर, उनका सहयोग प्राप्त करना ।
- कुपोषण, दस्त व निमोनिया से होने वाली शिशुओं की मृत्यु से बचाव हेतु माताओं को सक्षम बनाने में महिला स्वास्थ्य संघ, प्रसूति विज्ञान सहायिका, दाई, आंगनबाड़ी कार्यकर्ता का सहयोग प्राप्त कर, माताओं को जागरूक बनाना ।
- क्षय रोग नियन्त्रण, कुष्ठ रोग उन्मूलन, इत्यादि राष्ट्रीय कार्यक्रमों में पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता को रोगी की पहचान करने, रक्त व कफ पट्टिका बनाने, रोगी द्वारा नियमित उपचार लेने हेतु प्रेरित करते रहने जैसे कार्यो में अपने भ्रमण के दौरान, सहयोग करना ।
- पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता को क्षय व टी. बी. के रोगियों के रिकॉर्ड को सही रूप से संधारित करने मे सहयोग करना ।
- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की मासिक बैठकों में भाग लेना व अपने उपकेन्द्र क्षेत्र की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु चिकित्साधिकारी का सहयोग व मार्गदर्शन करना ।
- अपने उप केन्द्र में लगने वाले स्वास्थ्य शिविरों / परिवार कल्याण शिविरों में तथा चिकित्सा अधिकारी के निर्देशानुसार प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के अन्य क्षेत्रों में लगने वाले शिविरों में एक दल के सदस्य के रूप में सम्मिलित होना व सहयोग करना ।

(य) जनसहभागी की भूमिका

- गाँव के चुने हुए प्रतिनिधियों, विशेषकर महिला प्रतिनिधियों व अन्य प्रमुख व्यक्तियों से निरन्तर सम्पर्क बनाए रख कर उन्हें अपने क्षेत्र की स्वास्थ्य समस्याओं की जानकारी देकर, समाधान हेतु उनका सहयोग प्राप्त करना ।
- महिला मण्डल, महिला स्वास्थ्य संघ, महिला बाल विकास समिति, किशोरी बालिका समूह, युवा मण्डल जैसे औपचारिक समूहो के गठन में सक्रिय भूमिका निभाना ।
- औपचारिक समूहों की बैठकों मे भाग लेकर उन्हें हमेशा सक्रिय बनाए रखना ।
- अपने उप केन्द्र क्षेत्र मे स्थित आंगनबाडी केन्द्र पर स्वास्थ्य दिवस के दिन गर्भवती व धात्री महिलाओं व बालकों की स्वास्थ्य जांच व टीकाकरण के अलावा स्वास्थ्य शिक्षा द्वारा आंगनबाडी कार्यकर्ता व लाभार्थी महिलाओं का ज्ञान बढ़ा कर उन्हे जागरूक करना ।
- परिवार कल्याण के संदेशों व सेवाओं की जानकारी प्रत्येक योग्य दम्पत्ति तक पहुंचाने मे औपचारिक व अनौपचारिक समूहों मे काम कर उनका सहयोग प्राप्त करना ।
- आंगनबाड़ी केन्द्र पर आने वाले कुपोषित लाभार्थी बच्चों की माताओं व जन समुदाय को कुपोषण के घरेलू उपचार हेतु पोषाहार सम्बन्धी आवश्यक जानकारी देकर कुपोषण दूर करने में जनसहयोग प्राप्त करना ।

- खून की कमी (एनीमिया), रतौंधी व आयोडीन की कमी से होने वाले कुपोषण को दूर करने के लिए समुचित पोषाहार की जानकारी प्रदान कर सूक्ष्म तत्वो से होने वाले कुपोषण को रोकने मे जनसहयोग प्राप्त करना ।
- गर्भावस्था, प्रसव व प्रसव के बाद की आपातकालीन परिस्थितियों व शिशुओं तथा बालकों में बीमारी की आपात परिस्थितियों में जन प्रतिनिधियों / सम्पन्न व्यक्तियों से सहयोग प्राप्त कर उन्हें अस्पताल पहुंचाने हेतु वाहन की व्यवस्था करवाना ।
- जीवन रक्षक घोल, ममता किट व गर्भ निरोधक उपकरणों को जरूरतमन्द बच्चों, महिलाओं व पुरूषो मे वितरण हेतु जन सहयोग प्राप्त करना व उन्हे नियमित उपलब्ध कराना ।

(र) प्रबन्धक की भूमिका

- उपकेन्द्र पर दवाइयाँ व उपकरणों की सही देखभाल व भण्डारण करना ।
- फर्निचर व अन्य सामान की उचित देखभाल व संधारण करना ।
- उपकेन्द्र भवन के रख रखाव, रंग रोगन, पानी व बिजली की व्यवस्था, चिकित्साधिकारी के सहयोग से बनाए रखना ।
- उपकेन्द्र के गन्दे पानी के निकास की उचित व्यवस्था करना व कचरे के निस्तारण की व्यवस्था कर उपकेन्द्र के भीतर व बाहर के वातावरण की स्वच्छता बनाए रखना ।
- निकट भविष्य मे व्यर्थ हो जाने वाली दवाइयों, जिनका उपयोग अवधि पार (Expiry Date) के कारण संभव नहीं हो, उन्हे समय पूर्व प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र को भेजना ।
- अनुपयोगी उपकरणों का चिकित्सा अधिकारी के सहयोग से निस्तारण करना ।
- सर्वेक्षण रजिस्टर व सेवा रजिस्टर को समय-समय पर पूर्ण करना व उसके आधार पर सेवाओं की माँग का आंकलन करना व उनकी आपूर्ति करना ।
- आने वाले टीकाकरण सत्र में टीकों की अनुमानित मात्रा का आंकलन कर उनकी आपूर्ति करना व टीकाकरण तक शीत श्रृंखला (Cold Chan) बनाए रखना ।
- सभी आवश्यक रिकॉर्ड व रजिस्टर का सही संधारण करना व सेवा-पुस्तिका में उसका इन्द्राज करना ।
- रिकॉर्ड व रजिस्टर के आधार पर प्रत्येक कार्यक्रम के अन्तर्गत किए गए कार्यो की रिपोर्ट निर्धारित प्रपत्र मे तैयार कर प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्साधिकारी को प्रेषित करना।
- उपकेन्द्र के मुख्य ऑकडों या जीवन समंकों (Vital Statistics) का रिकॉर्ड संधारित करना व ग्राफ अथवा चार्ट के माध्यम से उन्हें उपकेन्द्र मे प्रदर्शित करना ।
- स्थायी व अस्थायी प्रकृति के सामान का अलग-अलग स्टॉक रजिस्टर्स मे इन्द्राज कर संधारण करना ।
- उपकेन्द्र पर प्रतिमाह होने वाले आकस्मिक खर्चा जैसे कैरोसिन तेल, झाडू इत्यादि पर होने वाले खर्च का हिसाब रखना । बिजली पानी के बिलो का भुगतान समय पर करना तथा खर्च हुई रकम की चिकित्साधिकारी के मार्फत पुन: आपूर्ति करना ।
- फर्निचर व उपकरणों की समय-समय पर होने वाली मरम्मत के लिए आवश्यक खर्च की व्यवस्था कर उनकी मरम्मत कराना ।

1.5.3 भूमिका हेतु - कुशलता एवं दक्षता

सेवाएँ प्रदान करना मात्र एक कार्य है, लेकिन इसे प्रभावी व गुणवत्ता युक्त बनाने के लिए स्वास्थ्य कार्यकर्ता को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है । इसमें कौशल / दक्षता की आवश्यकता होती है । यह निम्न तालिका से स्पष्ट होता है:

भूमिका	दक्षताएँ / कुशलताएँ
(i) सेवा प्रदाता	(i) स्थानीय सेवा प्रदान करने वालों के साथ मिलजुल कर काम करना। (ii) समय-समय पर उनको स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यक जानकारी प्रदान करना। (iii) प्रसूति विज्ञान सहायिका, दाई,आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, आशा को, स्वास्थ्य, विशेषकर, माँ व शिशु के बारे में मार्गदर्शन देना । (iv) स्वयं की क्षमताओं में लगातार वृद्धि करते रहना । (v) उपकेन्द्र स्तर पर उपलब्ध कराई जा सकने वाली सभी सेवाओं की पूर्ण जानकारी रखना ।
(ii) स्वास्थ्य शिक्षक	(i) विषयवस्तु का पूर्ण शान व उसके उपयोग की क्षमता । (ii) प्रभावी सम्प्रेषण । (iii) समस्याओं, शंकाओं के समाधान की क्षमता ।
(iii) समन्वयक	(i) स्थानीय स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं के दल का नेतृत्व करने की क्षमता विकसित करना । (ii) स्वास्थ्य गतिविधियों के निरीक्षण व उसके समुचित मूल्यांकन करने की क्षमता । (iii) परिस्थितियों के अनुकूल आवश्यक कदम उठाने की क्षमता। (iv) स्थानीय सहयोगी दल के सदस्यों, समुदाय. स्वयं सेवी संस्थाओं विभागीय कर्मचारी, अधिकारी व विकास से सम्बन्धित अन्य विभागों के कर्मचारियों, आधिकारियों के साथ प्रभावी सम्प्रेषण की क्षमता ।
(iv) सामाजिक संगठनकर्ता	(i) प्रभावी. सम्प्रेषण व सम्पर्क स्थापित करने की दक्षता बढ़ाना । (ii) नेतृत्व करने की क्षमता । (iii) औपचारिक समूहों के गठन व उन्हें निरन्तर सक्रिय बनाए रखने की क्षमता । (iv) समय की पाबन्दी रखना । (v) व्यक्तिगत व्यवहार व आचरण, जो अन्य को प्रेरित कर

सके ।

(v) व्यवस्थापक

(i) उपकेन्द्र भवन के रखरखाव व उसके सामान के सही व्यवस्थित रूप से भण्डारण की क्षमता उत्पन्न करना ।

(ii) भवन के अन्दर व आस-पास के वातावरण को स्वच्छ बनाए रखने की क्षमता ।

(iii) अनुपयोगी व अनावश्यक हुए सामान का नियमानुसार निस्तारण कराने की क्षमता ।

(iv) दवाइयों, उपकरणों की नियमानुसार आपूर्ति करने की क्षमता ।

(v) सभी तरह के रजिस्टर व रिकॉर्ड के संधारण की क्षमता ।

(vi) सभी आवश्यक प्रतिवेदनों को पूर्ण रूप से भरने व समय पर प्रेषित करने की क्षमता ।

उपरोक्त भूमिकाओं का सही तरह से निष्पादन, जन समुदाय में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के प्रति निष्ठा व विश्वास की भावना उत्पन्न करेगा और लोग सेवाओं के लिए आकर्षित होगे । उदाहरण के लिए उपकेन्द्र पर यदि सब सामान अव्यवस्थित पड़ा है तब भी बुखार के रोगी को, उसके खून की जाँच कर दवा देंगे । परन्तु यदि उपकेन्द्र व उसके आस-पास का वातावरण स्वच्छ है, उपकेन्द्र में हर सामान व्यवस्थित रूप से सही स्थान पर रखा है, तब भी उपचार सही है, मगर रोगी व्यवस्थित व स्वच्छ उपकेन्द्र को देख कर अच्छे व्यवस्थापक के रूप में उपकेन्द्र से प्रभावित होता है । ऐसे व्यक्ति जो कार्यो से प्रभावित होते हैं, हमेशा आवश्यकता होने पर सहयोग करेंगे । सेवाऐं प्रदान करने का अपना महत्व है, परन्तु सेवाऐं प्रदान करने का तरीका, सुचारू ढंग से काम करना व नियमित जन सम्पर्क, उपकेन्द्र का भीतरी व बाहरी वातावरण. उपकेन्द्र की व्यवस्था व स्वास्थ्य समस्याओं के निस्तारण में रूचि व नेतृत्व, कार्यो, सेवाओं को और अधिक प्रभावी बनाने में मदद करते हैं । अत: प्रत्येक स्वास्थ्य कार्यकर्ता को सेवाएं प्रदान करते समय अपनी भूमिका को प्रभावी बनाने का लगातार प्रयास करना चाहिए ।

1.6 ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का संगठन

हमारे देश की लगभग 75 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में रहती है । स्वतन्त्रता के पश्चात् काफी प्रयत्नों के बावजूद भी अभी तक ग्रास रूट स्तर तक उपयुक्त स्वास्थ्य सेवाएं नहीं पहुंच पाई हैं । इसी कमी को पूरा करने हेतु अप्रैल 2005 से राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन नामक एक नवीन योजना भी प्रारम्भ की गई है । ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएं मुख्यत: "त्रिस्तरीय प्रणाली" के अन्तर्गत दी जा रही हैं । यहाँ पर ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का संगठन तथा कार्यो का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है ।

1.6.1 ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाएं

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के अन्तर्गत ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं को जनसंख्या के आधार पर त्रिस्तरीय प्रणाली (थ्री टायर सिस्टम) के रूप में विकसित किया गया है । इस त्रिस्तरीय प्रणाली के जनसंख्या मानदण्ड निम्न प्रकार है-

जनसंख्या मानदण्ड

स्वास्थ्य केंद्र का नाम	मैदानी क्षेत्र	पर्वतीय/ आदिवासी क्षेत्र
उपकेंद्र या सबसेंन्टर	5,000	3,000
प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र	30,000	20,000
सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र	1,20,000	80,000

इनका संक्षिप्त विवरण आगे दिया हुआ है ।

उपकेन्द्र मैदानी क्षेत्र मे 5000, जबकि पर्वतीय क्षेत्र में 3000 की जनसंख्या पर होना चाहिए ।

1.8.2 उपकेन्द्र (sub Centre)

उपकेन्द्र प्राथमिक देखभाल एवं जन्म समुदाय के बीच, स्वास्थ्य हेतु सम्पर्क का प्राथमिक एवं सर्वाधिक परिधीय बिन्दु है । उपकेन्द्र मुख्यत: मातृ और बाल स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, पोषण, रोग प्रतिरक्षण. डायरिया नियंत्रण, संक्रामक रोगों पर नियंत्रण आदि कार्यक्रमों से सम्बंधित सेवाएं एवं शैक्षणिक कार्य करते हैं । उपकेन्द्र पर प्राथमिक चिकित्सा एवं महिला तथा बच्चों की आवश्यक स्वास्थ्य समस्याओं की देखभाल हेतु छोटी मोटी दवाएं भी दी जाती हैं ।

उपकेन्द्र का संचालन एक बहुउद्देशीय कार्यकर्ता (महिला) / ए.एन.एम. तथा एक बहुउद्देशीय कार्यकर्ता (पुरूष) करते है । वर्तमान में 1.42,611(2005) उपकेन्द्र चल रहे हैं । उपकेन्द्र ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के मुख्य आधार हैं ।

- **उपकेन्द्र का स्टाफ**

  महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता - 1

  पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता - 1

  अंशकालीन (पार्ट टाइम कर्मचारी) - 1

  उपकेन्द्रों का सुपरविजन या पर्यवेक्षण कार्य महिला स्वास्थ्य दर्शिका/ सहायिका करती है । एक महिला स्वास्थ्य -दर्शिका (L.H.V.) 6 उपकेन्द्रों के पर्यवेक्षण करती है ।

- **उपकेन्द्र पर कार्यरत महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के कार्य**

  (i) प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करना ।

  (ii) परिवार नियोजन / कल्याण सम्बंधी सेवाएं देना ।

  – गर्भ का चिकित्सीय समापन (M T P सेवाएं)

  – परिवार नियोजन शिविर / कैम्पों में भागीदारी ।

  – छोटे परिवार को बढावा देना ।

  (iii) पोषण सम्बंधी सेवाएं देना ।

(iv) टीकाकरण सेवाएं देना ।

(v) दाइयों / आशा के चयन एवं प्रशिक्षण मे भाग लेना ।

(vi) जीवन समंकों /आंकडों / रिपोर्ट-रिकॉर्ड सम्बंधी कार्य ।

(vii) प्राथमिक चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करना ।

(viii) स्वास्थ्य दल के सदस्य के रूप में कार्य करना ।

(ix) सूचना, शिक्षा, सम्प्रेषण (IEC) सेवाओं में भाग लेना ।

(नोट: पूर्व में वर्णित महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के कार्यो का भी अवलोकन करें ।)

1.6.3 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (Primary Health Centre)

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र. जन समुदाय और चिकित्सा अधिकारी के बीच पहला सम्पर्क बिन्दु होता है । प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के काम की देखभाल एक चिकित्सा अधिकारी द्वारा की जाती है । इसके अधीन अन्य चिकित्सा कर्मी होते हैं । प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से, 6 उपकेन्द्र सम्बंधित होते हैं । प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के कार्यो में उपचार, रोग निवारण, स्वास्थ्य उन्नति एवं परिवार कल्याण सेवाएं आती हैं । वर्तमान मे इनकी संख्या 22974 (2005) है ।

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र मैदानी क्षेत्र मे 30,000 जबकि पर्वतीय/आदिवासी क्षेत्र में 20,000 की जनसंख्या को कवर करता है ।

- **प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का स्टाफ**

चिकित्सा अधिकारी	– 1	
नर्स	– 1	
महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.)	– 1	
फार्मेसिस्ट	– 1	
प्रखण्ड विस्तार शिक्षक	– 1	
स्वास्थ्य सहायक (पुरूष)	– 1	
स्वास्थ्य सहायक (महिला / एल.एच.वी.)	– 1	
वरिष्ठ लिपिक	– 1	
कनिष्ठ लिपिक	– 1	
लैब टेक्मीशियन	– 1	
ड्राईवर	– 1	(वाहन की उपलब्धता के आधार पर)
चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी	– 4	

- **प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के कार्य**

(i) चिकित्सा देखभाल

(ii) स्थानिक बीमारियों की रोकथाम एवं सम्बंधित उपचार ।

(iii) स्वच्छ आपूर्ति एवं स्वच्छता बनाये रखना ।

(iv) प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य (परिवार नियोजन सहित) सेवाएं देना ।

(v) जैविक सांख्यिक एवं अन्य रिकॉर्ड का संग्रहण तथा रिपोर्टिंग

(vi) स्वास्थ्य शिक्षा एवं परामर्श सेवाएं ।

(vii) प्रयोगशाला (जांच) सेवाएं ।

(viii) ग्राम स्वास्थ्य / मार्गदर्शक / दाई / आशा के चयन एवं प्रशिक्षण में भाग लेना।

(ix) राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों में सहभागिता ।

1.6.4 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र (Community Health Centre)

सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र अपने क्षेत्र के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के लिए रेफरल केन्द्र का काम करता है । साथ ही प्रसूति देखभाल और विशेषज्ञ परामर्श हेतु सुविधाएं भी प्रदान करता है । सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र का संचालन 4 चिकित्सा विशेषज्ञ करते हैं । सामान्यतया एक स्वास्थ्य केन्द्र से, 4 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र सम्बंधित होते हैं । वर्तमान मे सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 3215(2005) है ।

सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र मैदानी क्षेत्र में 1,20,000 जबकि पर्वतीय/आदिवासी क्षेत्र मे 80,000 की जनसंख्या की स्वास्थ्य सेवाओं को देखता है ।

- **सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र का स्टाफ**

चिकित्सक	–	4
(स्त्रीरोग, शिशु रोग, सर्जरी तथा मेडिसिन में एक-एक विशेषज्ञ)		
नर्स (नर्स श्रेणी II / नर्स	–	7
श्रेणी I / मिडवाईव्ज)	–	
ड्रेसर	–	1
फार्मेसिस्ट / कम्पाउण्डर	–	1
प्रयोगशाला सहायक	–	1
रेडियोग्राफर	–	1
वार्ड ब्वाय	–	2
सफाई कर्मचारी	–	3
धोबी	–	1
माली	–	1
चौकीदार	–	1
आया	–	1
चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी	–	1
कुल	–	**25**

- **सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र के कार्य**

(i) प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य सेवाएं (परिवार नियोजन सहित) प्रदान करना ।

(ii) विशेषज्ञ चिकित्सा सेवाएं देना ।

(iii) सम्बन्धित क्षेत्र में आने वाले प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो की देखभाल ।

(iv) परामर्श सुविधाएं प्रदान करना ।

(v) रैफरल सेवाएं ।

(vi) राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों मे प्रभावी तरीके से भाग लेना ।

(vii) प्रयोगशाला सेवाएं देना ।

(viii) उपचार एवं रोग निवारण सेवाएं देना ।

1.6.5 अन्य सेवाएं (ग्रामीण क्षेत्र में)

(क) **ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक योजना**

त्रिस्तरीय प्रणाली के बाद भी अनेक ग्रामों में स्वास्थ्य सेवाओं के लिए कोई तन्त्र नहीं हो पाने की स्थिति में ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक योजना का आरम्भ 2 अक्टूबर 1977 को, समुदाय स्वास्थ्य कर्मी योजना के रूप में किया गया । 1981 मे इसे ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक योजना का नाम दिया गया ।

त्रिस्तरीय स्वास्थ्य प्रणाली के क्रियान्वयन के उपरान्त भी अनेक ग्रामों में स्वास्थ्य सेवा का कोई अधिकृत प्रतिनिधि नहीं है । इस कमी की पूर्ति, ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक योजना के माध्यम से की जाती है । ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक (VHG) का चयन, ग्राम में से ही किसी व्यक्ति का स्वयंसेवक के रूप में किया जाता है तथा उसे प्रशिक्षण दिया जाता है । देश के प्रत्येक ग्राम अथवा 1000 की जनसंख्या पर, एक ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक रखने की योजना है। ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक (VHG), ग्राम, समुदाय तथा सरकारी स्वास्थ्य प्रणाली के बीच सम्पर्क कड़ी का काम करता है, ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक मुख्यत: स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करता करती है । उसे संक्रामक रोगों पर नजर रखनी होती है । मातृ एवं बाल-स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण सेवाओं के बारे में जागरूकता पैदा करनी होती है तथा ग्राम में प्राथमिक चिकित्सा देनी होती है। ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक को 50 रूपये प्रतिमाह मानदेय मिलता है । इनकी सेवा शर्तो एवं मानदेय में सुधारों हेतु एक समिति की सिफारिशों पर विचार चल रहा है ।

ग्राम स्वास्थ्य मार्ग दर्शक के चयन के आधार निम्न हैं

- उस क्षेत्र का स्थायी निवासी होना, महिला को अधिक प्राथमिकता दी जाती है ।
- लिखने पढ़ने में सक्षम हो कम से कम 6ठीं कक्षा उत्तीर्ण हो ।
- ग्रामीण समुदाय को स्वीकार्य हो ।
- सामुदायिक स्वास्थ्य कार्य के लिए कम से कम 2-3 घण्टे प्रतिदिन का समय प्रदान कर सके ।.

(ख) **दाइयां**

इन्हें स्थानीय दाई या परम्परागत जन्म सहायक (TBA-Traditional Birth Attendant) कहा जाता है । ग्रामों में प्रसूति सेवाएं प्रदान करने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है । राष्ट्रीय लक्ष्य, प्रत्येक ग्राम में एक प्रशिक्षित दाई रखने का है । दाई, महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की सहायक

के रूप मे कार्य करती है । ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के अन्तर्गत प्रत्येक अप्रशिक्षित दाई को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य रखा गया है ।

(नोट: दाई - प्रशिक्षण का भी अवलोकन करे)

(ग) **आंगनबाड़ी कार्यकर्ता**

समेकित बाल विकास योजना (ICDS) के तहत् प्रत्येक 1000 की आबादी पर 1 आंगनबाड़ी कार्यकर्ता ग्राम मे स्वास्थ्य जांच टीकाकरण, पूरक आहार, स्वास्थ्य शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा तथा रेफरल सेवाएं प्रदान करती है ।

आंगनबाड़ी योजना से मुख्यत: स्तनपान करा रही माँ, प्रजनन वर्ग की महिलाएं (15-45 वर्ष) तथा 6 वर्ष से छोटे बच्चों को सेवाएं प्रदान की जाती है ।

आंगनबाड़ी कार्यकर्ता, ग्रामीण स्वास्थ्य मार्गदर्शक की तरह ही अंशकालीन कार्यकर्ता हैं । जिन्हें 4 माह का प्रशिक्षण देने के बाद रखा जाता है तथा 200-250 रूपये प्रतिमाह मानदेय मिलता है । केन्द्रीय सरकार का मानना है कि आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओ के मानदेय में कमी को राज्य सरकारें मदद देकर पूरी कर सकती हैं । एक अन्य योजना के अनुसार केन्द्र सरकार आंगनबाड़ी केन्द्रों तक नही पहुंच पा रहे बच्चों के लिए, शीघ्र ही चलते-फिरते आंगनबाड़ी केन्द्र प्रारम्भ करने जा रही है ।

1.6.6 ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन

ग्रामीणों विशेषकर महिलाओं, बालकों और अशिक्षित एवं उपेक्षित वर्ग को समान रूप से वहन कर सकने योग्य, उत्तरदायी, कारगर और बेहतर प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्या सुविधाऐं प्रदान करने हेतु भारत सरकार ने अप्रैल 2005 मे राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का शुभारम्भ किया है । इस मिशन के अन्तर्गत, भारत सरकार ने मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता-आशा (Accnedited Social Health-ASHA) की नई योजना के साथ ग्राम पंचायतों तक पहुचनें का निर्णय लिया है जो कि गांव (1000 लोगों पर) में स्वास्थ्य सम्पर्क का पहला बिन्दु होगी और वहीं के लोगों की बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाएँ और परामर्श प्रदान करेगी ।

1.6.7 आशा

एक मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता-आशा, ग्रामीण समुदाय और स्वास्थ्य तन्त्र को जोड़ने वाली पहली सम्पर्क कड़ी होगी । **'आशा'** राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की प्रमुख घटक है।

(क) आशा की मुख्य भूमिका व दायित्व

- आशा ग्रामीण समुदाय मे जागरूकता पैदा करने के उपाय करेगी और लोगों को स्वस्थ रहने के बारे मे जरूरी बातों की जानकारी देगी ।
- आशा लोगों को गांव / उपकेन्द्र / प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र मे उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं का उपयोग करने के बारे में जानकारी देगी तथा टीकाकरण, प्रसव पूर्व जांच, प्रसवोत्तर जांच

समन्वित बाल विकास सेवा योजना, सफाई और सरकार द्वारा प्रदान की जा रही अन्य सेवाओं का लाभ उठाने में सहायता प्रदान करेगी ।

- आशा जरूरत होने पर गर्भवती महिलाओं और बच्चों के इलाज कराने, भर्ती कराने के लिए पहले से निर्धारित निकट के स्वास्थ्य सुविधा केन्द्र पर भेजने की व्यवस्था करेगी अथवा उनके साथ जायेगी ।
- आशा छोटी-मोटी बीमारियों के लिए प्राथमिक चिकित्सा परिचर्या प्रदान करेगी ।
- आशा संशोधित राष्ट्रीय क्षय रोग नियन्त्रण कार्यक्रम के अन्तर्गत सीधे देख-रेख में दिए जाने वाली अल्पावधि (डाट्स) औषधियाँ भी प्रदान करेगी ।
- आशा प्रत्येक व्यक्ति को प्रदान की जा रही अनिवार्य सुविधाओं को प्रदान करने के लिए डिपो होल्डर के रूप में कार्य करेगी जैसे ओरल रिहाइड्रेशन थिरेपी, आयरन फॉलिक एसिड गोलियाँ. क्लोरोक्विन, डिस्पोजेबल डिलिवरी किट, खाई जाने वाली गर्भनिरोधक गोलियां और कण्डोम आदि । प्रत्येक आशा को एक औषधि - किट प्रदान किया जायेगा ।
- आशा अपने गांव में जन्म और मृत्यु तथा किसी भी असामान्य समस्या / रोग फैलने के बारे मे उपकेन्द्र / प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र को सूचित करेगी ।
- आशा सम्पूर्ण स्वच्छता कार्यक्रम के अन्तर्गत, घरों मे शौचालय निर्माण को भी बढ़ावा देगी।

(ख) **आशा: कार्य एवं समय**

आशा के काम का कोई खास निश्चित समय नहीं होगा और कभी कभार कहीं आने-जाने तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों के सिवाय, उसका कार्य सप्ताह में चार दिन तथा प्रतिदिन दो-तीन घण्टो तक ही सीमित होगा ।

- **आंगनबाड़ी केन्द्र में** : उसे टीकाकरण /प्रसव पूर्व जांच सत्र के दिन तथा स्वास्थ्य दिवस मनाये जाने के दिन आंगनबाड़ी केन्द्र में उपस्थित होना होगा ।
- **घर पर :** आशा घर पर उपलब्ध होगी ताकि वह जरूरतमंद लोगों को आपूर्तियों (Supplies) का वितरण कर सके अथवा किसी महिला को प्रसव परिचर्या केन्द्र / प्रथम रेफरल यूनिट अथवा आरसीएच शिविर ले जाने में उसका साथ दे सके ।
- **समुदाय में :** आशा ग्राम महिला / स्वास्थ्य समितियों और अन्य बैठको तथा पंचायत स्वास्थ्य समितियों की बैठकों का आयोजन करेगी अथवा उनमें भाग लेगी । वह परिवारों को अपनी भूमिका और दायित्व के अनुसार सेवायें प्रदान करेगी ।

(ग) **आशा और ए.एन.एम. की सहभागिता**

- ए.एन.एम. हर सप्ताह / पाक्षिक में आशा के साथ बैठक करेगी और इस दौरान हुई गतिविधियों की चर्चा करेगी । वह आशा को कार्य सम्बन्धित समस्या के निराकरण के लिए मार्गदर्शन देगी ।
- आशा मातृ शिशु एवं पोषण दिवस के सत्र की तिथि व समय बतायेगी तथा लाभान्वितों को लाने के लिए पथ प्रदर्शित करेगी ।
- आशा योग्य दम्पत्ति रजिस्टर के नवीनीकरण में सहयोग करेगी ।

- आशा गर्भवती महिलाओं के प्रारम्भिक परीक्षण और विवाहित जोडों को परिवार कल्याण के लिए उपकेन्द्र पर जाने के लिए प्रोत्साहित करेगी ।
- आशा गर्भवती महिलाओं को आयरन फॉलिक एसिड की गोलियों और टेटनस का कोर्स पूरा करने के लिए प्रेरित करेगी ।
- आशा महिलाओं को ओरल गोलियों को लेने की सारणी अथवा उसके अन्य प्रभावों के बारे में बताएगी ।
- आशा गर्भवती महिलाओं के खतरे के निशानों की पहचान कर लाभान्वितों को समय रहते चिकित्सा लेने में सहायता करेगी ।

(घ) **आशा और आंगनबाड़ी की सहभागिता**

- आशा स्वास्थ्य दिवस के आयोजन में सहयोग करेगी । ग्रामीण महिलाओं, किशोरियों और बच्चों को इकट्ठा कर स्वास्थ्य संम्बन्धित जानकारी देगी ।
- आशा पोस्टर व लोक गीत द्वारा लाभान्वितों को स्वास्थ्य सम्बन्धी विषयों के प्रति सचेत कर सूचना का प्रचार-प्रसार करेगी ।
- आशा आंगनबाड़ी कार्यकर्ता जो कि डिपो होल्डर होगी, से दवाई लेगी ।
- योग्य दम्पत्तियों और एक वर्ष से कम आयु के बच्चों की सूची का नवीनीकरण करेगी ।
- गर्भवती व धात्री माताओं और बच्चों को पोषण (पूरक) लेने के लिए प्रोत्साहित करेगी ।
- मातृ शिशु एवं पोषण दिवस पर लाभान्वितों को टीकाकरण व स्वास्थ्य निरीक्षण के लिए आंगनबाड़ी केन्द्र तक लाने मे सहयोग करेगी ।

(य) **आशा के चयन के मापदण्ड**

- प्रति 1000 लोगों के लिये एक आशा होगी ।
- आदिवासी, पहाड़ी और रेगिस्तानी क्षेत्रों में इस मापदण्ड में ढील दी जा सकती है और वहां पर प्रति बस्ती, कार्यभार आदि के अनुसार एक आशा हो सकती है ।
- उसकी आयु 25 से 45 वर्ष के मध्य होनी चाहिये ।
- वह कम से कम आठवीं तक पढ़ी-लिखी हो । इसमें तभी ढील दी जाए जब, ऐसी योग्यता वाली अन्य उपयुक्त महिला उपलब्ध न हो ।
- आशा में प्रभावी सम्प्रेषण कौशल, नेतृत्व और लोगों तक पहुँचने की क्षमता होनी चाहिए ।

(र) **आशा को क्षतिपूर्ति**

- आशा एक स्वयं सेवी कार्यकर्त्ता होगी, इसे किसी प्रकार का वेतन या मानदेय नहीं दिया जायेगा । प्रशिक्षण अवधि में जाने पर आशा को यात्रा व भोजन भत्ते के अलावा, उन दिवसों की उसकी आर्थिक क्षति की भरपाई के लिए,निश्चित राशि दी जायेगी ।

1.7 सारांश

वर्णित इकाई मे नर्सिंग के इतिहास, परिचय एवं परिभाषाओं के आधार पर प्रसूति विज्ञान सहायिका को नर्सिंग की संक्षिप्त जानकारी दी गई है । इसी प्रकार धाय एवं दाइयों के प्रशिक्षण के बारे में तथा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्यो तथा ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के संगठन तथा '**आशा**' से सम्बन्धित जानकारी से प्रसूति विज्ञान सहायिका के ज्ञान में वृद्धि का

प्रयास किया गया है । इस इकाई के अध्ययन की सार्थकता इस तथ्य में निहित है कि विभिन्न बिन्दुओं में वर्णित जानकारी के आधार पर प्रसूति विज्ञान सहायिका प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य सेवाओं में गुणवत्ता का ध्यान रखे तथा नर्सिंग के विभिन्न पक्षों का प्रसूति विज्ञान से सम्बन्ध जोड़कर अपने कार्यो का सही प्रकार से निर्वहन करे ।

1.8 प्रश्न

1. नर्सिंग क्या है ? विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर नर्सिंग को समझाइये ।
2. "नर्सिंग के इतिहास" पर प्रकाश डालिये ।
3. धाय एवं दाइयों के प्रशिक्षण सम्बन्धी विभिन्न बिन्दुओं को वर्णित करें ।
4. महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका एवं कार्यो को लिखिये ।
5. ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं के संगठन से आप क्या समझती है?
6. "आशा" एवं "ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन" पर एक संक्षिप्त लेख लिखिये ।
7. निम्न के स्टाफिंग एवं कार्यो का वर्णन करें ।
   (i) उपकेन्द्र
   (ii) प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र
   (iii) सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र

इकाई-2 प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रसूति विज्ञान: अर्थ, अवधारणा एवं परिभाषा

- 2.2.1 प्रसूति विज्ञान के क्षेत्र
- 2.2.2 प्रसूति विज्ञान तथा प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य
- 2.2.3 संक्षिप्त एवं पारिभाषिक शब्दावली
- 2.2.4 प्रसूति विज्ञान के सामाजिक पक्ष

2.3 प्रसूति विज्ञान सहायिका : अवधारणा, उद्देश्य, परिभाषा

- 2.3.1 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति-2000
- 2.3.2 राज्य जनसंख्या नीति के उद्देश्य
- 2.3.3 प्रसूति विज्ञान सहायिका के उद्देश्य
- 2.3.4 प्रसूति विज्ञान सहायिका की परिभाषा

2.4 प्रसूति विज्ञान सहायिका का महत्व

2.5 स्वास्थ्य दल

- 2.5.1 स्वास्थ्य दल के सदस्य
- 2.5.2 स्वास्थ्य दल के सदस्यों के कार्य
- 2.5.3 स्वास्थ्य दल के सदस्यों के मध्य सम्बन्ध
- 2.5.4 दल निर्माण चक्र
- 2.5.5 प्रभावी स्वास्थ्य दल की विशेषताएं
- 2.5.6 स्वास्थ्य दल तथा प्रसूति विज्ञान सहायिका

2.6 प्रसूति विज्ञान सहायिका: भूमिका, कार्य, आचरण संहिता

- 2.6.1 प्रसूति विज्ञान सहायिका के कार्य
- 2.6.2 प्रसूति विज्ञान सहायिका की आचरण संहिता

2.7 प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग का सह-सम्बन्ध

2.8 सारांश

2.9 प्रश्न

2.0 प्रस्तावना

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार "प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य' पर समुचित ध्यान देकर ही किसी राष्ट्र के स्वास्थ्य स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है । प्रजनन स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण घटक प्रसूति विज्ञान है । इस इकाई के प्रारम्भ मे हमने प्रसूति विज्ञान की अवधारणा, उसके

सामाजिक पक्ष तथा उसका आर.सी.एच. से सम्बन्ध बताया है । तदुपरान्त राष्ट्रीय एवं राज्य जनसंख्या नीति के उद्देश्यों का वर्णन करते हुए प्रसूति विज्ञान सहायिका के उद्देश्य, परिभाषा एवं महत्व से अवगत कराने का प्रयास किया है, चूंकि स्वास्थ्य का उत्तरदायित्व किसी अकेले कंधे पर डालना संभव नही है अत: स्वास्थ्य दल तथा उसके सदस्यों के कार्य इत्यादि का वर्णन भी इस इकाई में प्रस्तुत है । इकाई के अत में प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका, कार्य एवं आचरण संहिता वर्णित कर यह अपेक्षा की जाती है कि प्रसूति विज्ञान सहायिका इस इकाई का अध्ययन कर, प्रसूति कार्य मे सहायिका की भूमिका निभाने हेतु तैयार हो सके ।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपनी भमिका एवं कार्यों से अवगत कराना है । इसके साथ ही उन्हे प्रसूति विज्ञान से जुड़े अन्य पक्ष, स्वास्थ्य दल, पारिभाषिक शब्दावली इत्यादि से भी परिचित कराना है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के विषय मे जानकारी तथा प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ हो सकेगी:

1. प्रसूति विज्ञान क्या है एवं उसके क्षेत्र तथा प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य के सम्बन्ध में जानकारी ।
2. प्रसूति विज्ञान से जुड़ी पारिभाषिक शब्दावली ।
3. प्रसूति विज्ञान सहायिका की अवधारणा, उद्देश्य, परिभाषा एवं महत्व की जानकारी ।
4. स्वास्थ्य दल क्या है? उसके सदस्यों के सम्बन्ध कार्य तथा दल निर्माण चक्र के बारे में जानना ।
5. प्रसूति विज्ञान सहायिका के कार्य क्या हैं ? उनकी भूमिका एवं आचरण संहिता के विषय में जानना ।

2.2 प्रसूति विज्ञान: अर्थ एवं परिभाषा

यदि हम प्रसूति विज्ञान' का प्रारम्भ जानने की कोशिश करे तो यह तथ्य स्पष्ट उभर कर सामने आता है कि जब से मानव का जन्म हुआ अथवा सृष्टि का निर्माण हुआ तभी से प्रसूति कार्य भी प्रारम्भ हुआ होगा । बिना 'प्रसव" के सृष्टि की रचना की परिकल्पना संभव नहीं है । यद्यपि कुछ प्राचीन ग्रंथों में मानव का जन्म स्त्री शरीर के अलावा अन्य मार्गो से भी दिखाया गया है किन्तु इन सब अपवादों मे चमत्कार श्राप, वरदान अथवा अतिश्योक्ति देखी जा सकती है । इसी प्रकार आधुनिक युग मे "क्लॉन" के द्वारा डॉली भेड़ या मानव का प्रतिरूप बनाने के दावे किये जा रहे हैं. किन्तु ये सब गैर स्वाभाविक एवं प्रकृति के विरूद्ध माने जा रहे हैं । यहाँ तक कि अधिकांश आनुवांशिकी वैज्ञानिक भी इस तरह के प्रयत्नों के खिलाफ हैं अर्थात प्रसव द्वारा जन्म तथा सृष्टि की रचना को तथा निरंतरता के सिद्धान्त को सर्व सहमति एवं स्वीकृति प्राप्त है ।

अब प्रश्न यह उठता है कि प्रथम प्रसवकर्ता किसे माना जावे । इस विषय पर बहस न करके यह स्वीकार करना अधिक अच्छा रहेगा कि प्रसूति विज्ञान, चिकित्सा शास्त्र की अति प्राचीन

शाखा है जिसमें प्रसूति कर्म से जुड़े सभी पक्ष शामिल रहते हैं । अर्थात प्रसूति विज्ञान चिकित्सा विज्ञान की गर्भावस्था एवं प्रसव से सम्बन्धित एक शाखा है । इसमें महिला प्रजनन तंत्र की क्रियाएं, रोगजनक अवस्थाएं, गर्भावस्था के पूरे समय, प्रसव तथा प्रसव के शीघ्र पश्चात माता तथा शिशु की देखभाल शामिल है। प्रसूति विज्ञान में कला एवं विज्ञान दोनों पक्ष ही पाये जाते हैं । एक कुशल प्रसूति विज्ञान सहायिका अपने ज्ञान, अनुभव तथा कला के सहारे स्वस्थ और सुरक्षित प्रसव करवाने हेतु सक्षम है तथा प्रसव जटिलताओं को समझ, आवश्यक्तानुसार केस को रैफर करना भी जान सकती है ।

2.2.1 प्रसूति विज्ञान के क्षेत्र

परिभाषा के आधार पर प्रसूति विज्ञान के निम्न क्षेत्र हैं:

(i) महिला प्रजनन तंत्र की सरचना एवं क्रियाएं ।

(ii) प्रजनन तंत्र की रोगजनक अवस्थाएं

(iii) गर्भावस्था मे माता एवं गर्भस्थ शिशु की देखभाल (एन्टीनेटल केअर)

(iv) प्रसव क्रिया

(v) प्रसवोत्तर देखभाल (पोस्टनेटल केअर)

2.2.2 प्रसूति विज्ञान तथा प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य (आर.सी.एच.)

वर्तमान में चलाये जा रहे प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य (RCH) कार्यक्रम में प्रसूति विज्ञान के सभी महत्वपूर्ण घटक शामिल हैं । अत: प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य को प्रसूति विज्ञान के संदर्भ में समझना जरूरी है ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार प्रजनन स्वास्थ्य. प्रजनन अंगों व उनकी कार्यविधि के स्वास्थ्य से सम्बंधित है तथा इनमें प्रजनन भी सम्मिलित है । कैरो सम्मेलन मे 1994 में आर.सी.एच. को परिभाषित किया गया । तदनुसार 15 अक्ट्रबर 1997 को भारत में प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम लागू किया गया । यह कार्यक्रम ऐसी स्थिति बनाना चाहता है जिसमें लोग प्रजनन को अपनी इच्छा के अनुरूप रख पायेगें, महिलाओं को गर्भावस्था, प्रसव और बच्चे के जन्म के समय आने वाली अड़चनो का सामना नहीं करना पडेगा, गर्भावस्था के नतीजे बेहतर तथा माता और बच्चे की जान सुरक्षित होगी, यौन सम्बन्ध रखने मे दम्पतियों के मन मे गर्भ धारण का डर नही रहेगा तथा यौन सम्बन्धों के कारण उन्हे किसी प्रकार को बीमारी का सामना नहीं करना पड़ेगा ।

इस प्रकार प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य में निम्न पक्ष सम्मिलित हैं

(i) मातृ स्वास्थ्य सेवाएं ।

(ii) बाल स्वास्थ्य सेवाएं ।

(iii) परिवार नियोजन सेवाएं, अवांछित गर्भो को रोकना । गर्भनिरोधक सेवाएं, सुरक्षित गर्भपात सेवाएं इत्यादि ।

(iv) प्रजनन तंत्र संक्रमण / एस.टी.डी. (एस.टी.आई.) / एच. आई. वी. / एड्स का प्रबंधन (यौन संचारित रोगों से सुरक्षा)

(v) किशोर स्वास्थ्य ।

(vi) पुरूष उत्तरदायित्व बढाना ।

उक्त छह घटको में से अधिकांश घटक प्रसूति विज्ञान से सम्बंधित होने के कारण प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य कार्यक्रम का महत्व अत्यधिक बढ गया है ।

2.2.3 संक्षिप्त एवं पारिभाषिक शब्दावली

यहाँ पर प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए उपयोगी प्रसूति विज्ञान / प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य / परिवार कल्याण / नर्सिंग / सामुदायिक स्वास्थ्य इत्यादि से सम्बंधित कुछ संक्षिप्त शब्द दिये जा रहे हैं।

(i) संक्षिप्त शब्द

(ए) A

AIDS	–	एड्स	:	एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिशिएन्सी सिन्ड्रोम
ANC	–	ए.एन.सी.	:	एन्टीनेटल केअर (प्रसव पूर्व देखभाल)
ANM	–	ए.एन.एम	:	आक्लीलियरी नर्स मिडवाइफ
APH	–	ए.पी.एच.	:	एन्टी पार्टम हैमरेज (प्रसव पूर्व रक्त स्त्राव)
AWW	–	ए.डब्ल्यू. डब्ल्यू	:	आंगनबाडी बर्कर

(बी) B

BCG	–	बी.सी.जी.	:	बैसिलस काल्मेटी गुएटिन (टी.बी. का टीका)
BP	–	बी.पी.	:	ब्लड प्रेशर (रक्त चाप)

(सी) C

C H C	–	सी.एच.सी.	:	कम्यूनिटि हेल्थ सेन्टर (सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र)
Cu.T.	–	सी. यू. टी.	:	कॉपर टी

(डी) D

D.D.K.	–	डी.डी.के.	:	डिस्पोजेबल दाई किट
D.D.T.	–	डी.डी.टी.	:	डाईक्लोरो-डाईफिनायल-ट्राईक्लोरोइथैन
D.P.T.	–	डी.पी.टी.	:	डिस्थीरिआ, परट्यूसिस, टेटनस

(ई) E

E.D.D.	–	ई.डी.डी.	:	एक्सपेक्टेड डेट ऑफ डिलीवरी

(एफ) F

F.A.	–	एफ.ए.	:	फॉलिक एसिड
F.R.U.	–	एफ.आर.यू.	:	फर्स्ट रैफरल यूनिट

(जी) G

G.D. – जी.डी : जनरल डीविलिटी (सामान्य अस्वस्थता)

(एच) H

H.Mole – एच. मोल : हाईडेटिडी फार्म मोल

Hb – एच.बी. : हीमोग्लोबिन

H g – एच.जी. : मरक्यूरी (पारा)

H.I.V. – एच.आई.वी. : हयूमन इम्यूनोडेफिशिएन्सी वायरस

HW(F) – एच.डब्ल्यू (एफ) : हेल्थ वर्कर (फीमेल)/ महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता

(आई) I

I.M. – आई.एम. : इन्ट्रामस्वयूलर (अन्त: पेशीय-इंजेक्शन)

I.V. – आई.वी. : इन्ट्रावीनस (अन्त: शिरीय इंजेक्शन)

I.D. – आई.डी. : इन्ट्राडर्मल (अधत्वचीय इंजेक्शन)

I.F.A. – आई.एफ.ए. : आइरन एण्ड फॉलिक एसिड

I.L.R. – आई.एल.आर. : आइस लाइन्ड रेफ्रिजरेटर्स

I.U.D. – आइ.यू.डी. : इन्ट्रा यूट्राइन (कॉट्रासेप्टिव) डिवाइस

L.U.G.R. – आई.यू.जी.आर. : इन्ट्रायूटराइन ग्रोथ रिटार्डेशन

(के) K

K.U.B. – के.यू.बी. : किडनी, यूरेटर ब्लैडर

(एम) M-

M.O. – एम.ओ. : मेडिकल ऑफिसर

M.R.Syringe – एम.आर. सिरिज : मेसूरल रेगुलेशन सीरिंज

M.T.P. – एम.टी.पी. : मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेन्सी

(एन) N-

NGOs – एन.जी.ओ.स. : नॉन गवर्नमेटंल आर्गेनाइजेशन्स

NMEP – एन.एम.ई.पी. : नेशनल मलेरिया इरैइडिकेशन प्रोग्राम

NNT – एन.एन.टी. : निओ नेटल टेटनस

NSV – एन.एस.वी. : नॉन स्काल्पेल वैसेक्टॉमी

(ओ) O

O.C. – ओ.सी. : ऑरल कॉंट्रासेप्टवस

O.P.V. – ओ.पी.वी. : ऑरल पोलियो वैक्सीन

O.R.S. – ओ.आर.एस. : ऑरल रिहाइड्रेशन साल्ट

(पी) P

P.A. – पी.ए. : पर अब्डोमेन

P.V. – पी.वी. : पर वेजिनम

P.H.C. – पी.एच.सी. : प्राइमरी हेल्थ सेन्टर (प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र)

P.I.H. – पी.आई.एच. : प्रेग्नेंसी इन्हयूस्ट हाइपरटेंशन

PPH – पी.पी.एच. : पोस्ट पार्ट हैमरैज

PROM – पी.आर.ओ.एम. : प्रिमैचुअर ऑफ मैम्ब्रैस

(आर) R

R.C.H – आर.सी.एच. : रिप्रॉडक्टिव एण्ड चाइल्ड हेल्थ

R.T.I. – आर.टी.आई. : रिप्रोडक्टिव ट्रैक्ट इकेक्शन (प्रजनन व मार्ग संक्रमण)

(एस) S

S.C. – एस.सी. : सब क्युटिनैस

S.D. – एस.डी. : सिंगल डोजं

S.T.D.- – एस.टी.डी. : सेक्सयूली ट्रांस्मिटिड डिजीज (यौन संचारित रोग

S.T.I. – एस.टी.आई. : सेक्सयूली ट्रास्मिटिड इफेक्शन (यौन संचारित संक्रमण)

(टी) T

T.T. – टी.टी. : टेटनस टॉक्साइड

(यू) U

U.S.G. – यू.एस.जी. : अल्ट्रा सोनोग्राफी

U.T.I – यू.टी.आई. : यूरीनरी ट्रैक्ट इंफेक्शन (मूत्रीय मार्ग संक्रमण)

(वी) V

V.D.R.L. – वी. डी.आर.एल. : वेनरल डिजीज रिसर्च लैबोरेटरी

V.V.M. – वी.वी.एम. : वैक्यूनि वायल मॉनीटर

V.H.G. – वी.एच जी. : विलेज हैल्थ गाईड (ग्रामीण स्वस्थ्य मार्गदर्शक)

(ब) पारिभाषिक शब्दावली

दर्द निवारक (Analgesics) : ऐसा पदार्थ जो स्थानीय रूप से स्नायु अंत: सिरों को अवरूद्ध करके स्नायु-आवेगों मे रूकावट उत्पन्न कर देता है । उदाहरणार्थ - प्यूडेन्टल नर्व ब्लॉक

एनिस्थेटिक (Anaestgetic) : बैहोशी पैदा करने वाली दवाई

एन्टिबॉडी (Antibody) : यह सीरम प्रोटीन है, एन्टिजन के उत्तेजक प्रभाव से बनता है और उसी एन्टिजन के प्रति विशेष रूप ये प्रतिक्रिया करता है ।

ऑटोसोमस् (Autosomes) : ऐसे क्रोमोसोम्स जो लिंग निर्धारण से सम्बन्धित नहीं होते हैं उन्हे ऑटोसोम्स कहा जाता है । मानव कोशिका में 22 जोड़े आटोसोमस के और एक जोड़ा सेक्स क्रोमोसोम्स का होता है ।

काल्पनिक रेखा में खिंचाव (Axix-traction) : इस शब्द का प्रयोग तब किया जाता है जब गर्भस्थ शिशु का सिर श्रोणि मार्ग की काल्पनिक रेखा (एक्सिस) की दिशा में खीचा जाता है । इसके लिये प्रासूतिक फॉरसेप्स जिसमे स्पेशल एकिन्स ट्रेक्शन हैण्डल लगा रहता है, का उपयोग किया जाता है ।

बायोप्सि (Biopsy) : जीवितोतक परीक्षा - जीवित शरीर में परीक्षण के लिये ऊतक काटकर निकालना. उदाहरणार्थ संभावित कार्सिनोमा के मामलों में सर्विक्स से, बन्धयता के मामलों में एन्डोमेट्रिअम से जीवित ऊतक लेना ।

ब्रेस्ट पम्प (Breast pump) : काँच की बनी हुई कीप के साथ रबर का बल्ब लगा हुआ उपकरण, जिसके द्वारा स्तनपान अवधि के दौरान चूषण द्वारा स्तनों से दूध निकाला जाता है । इसे या तो हाथ या इलेक्ट्रिक के द्वारा काम में लेते है ।

क्रोमोसोम्स (Chromosomes) : कोशिका के न्यूक्लिअस में स्थित धागे जैसी रचनाएँ हैं जिनके द्वारा आनुवांशिक विशेषताऐं संचरित होती हैं । सेक्स क्रोमोसोम्स व्यक्ति में लिंग का निर्धारण करते हैं, स्त्रियों मे XX और पुरूषों में XY ।

क्लाइमेक्टेरिक (Climecteric) : स्त्री के जीवन मे परिवर्तन होने वाला या रजोनिवृति (मेनोपॉज) ।

काल्पोस (Colpos) : योनि मार्ग, उदाहरणार्थ काल्पोरैफी (योनि मार्ग में टांके लगाने की क्रिया)

सायेयिस (Cyesis) : गर्भावस्था के लिये प्रयुक्त:उदाहरणार्थ स्यूडोसायेसिस (मिथ्यागर्भावस्था)

साइटोलॉजि (Cytology) : ऊतक कोशिकाओ का अध्ययन वाला विज्ञान ।

डेसिड्येअल कास्ट (Decidual Cast) : जब डेसिड्यूआ गर्भाशय से पूर्ण रूप में निकलता है तब यह त्रिकोणाकार होता है, जैसा कि ट्यूबल गर्भावस्था के कुछ मामलों में होता है, किन्तु डेसिड्यूआ प्राय: टुकडों मे ही निकलता है ।

डिस्टोशिआ (Dystocia) : कष्टप्रद प्रसव या कठिन प्रसव ।

बहिर्गर्भाशयिक गर्भावस्था (Extrauterine preganancy) : गर्भाशय के बाहर होने वाली गर्भावस्था, उदाहरणार्थ ट्यूबल एवं उदरीय गर्भावस्था ।

फेकन्डेशेन (Fecundation) : अन्तःस्थापन या गर्भधारण ।

फेटेशेन (Fetation) : अन्त:स्थापन या गर्भधारण ।

फीटोस्कोपि (Fetoscopy) : यह एक प्रकार की तकनीक है जिसे गर्भावस्था के 16वें -18वें सप्ताह के दौरान किया जाता है । इसके द्वारा गर्भस्थ शिशु की बाहरी सतह का निरीक्षण किया जा सकता है और असामान्य स्थितियों जैसे कि स्पाइना बिफिडा या अमस्तिष्कता का निदान हो सकता है । यदि निर्देशित हो तो गर्भस्थ शिशु के रक्त का नमूना और बायोप्सि भी कर सकते हैं।

फॉन्टेनेल (Fontenelle) : गर्भस्थ शिशु की खोपड़ी की दो या दो से अधिक सधि रेखाओ के जुड़ने के स्थान पर होने वाला झिल्लीमय स्थान है । यह नामकरण रक्त परिसचरण की खोज के पहले इस स्थान पर महसूस की जाने वाली धड़कन, छोटे झरने में बुलबुले पैदा होने की आवाज के समान होने के कारण रखा गया ।

फ्यूनिस (Funis) : नाभि-नाल, नाभि-नाल मर्मर (फ्यूनिक सॉफल)

जीन् (Gene) : आनुवांशिक इकाई, जो डिम्ब और शुक्राणु के क्रोमोसोम्स में उपस्थित रहती है, और ये वंशानुगत विशेषताओं को संचारित करती है ।

जेनिटेलिआ (Genitalia) : प्रजनन के अंग-बाहय एवं आंतरिक जननांग ।

गेस्टेशन (Gestation) : गर्भावस्था जैसे - अस्थानिक गर्भावस्था ।

गोनैड (Gonad) : प्रजनन ग्रंथि, उदाहरणार्थ स्त्रियाँ मे डिम्ब ग्रन्थियों जैसे - पुरूषों में टेस्टीज।

गोनेडोट्राफिक (Gonadotrophic) : वह पदार्थ या हार्मोन जो प्रजनन-ग्रन्थियों को उत्तेजित करता है ।

ग्रैविड (Gravid) -गर्भवती या गर्भस्थ, उदाहरणार्थ रीट्रॅवर्टीड गर्भाशय ।

ग्रैविडेरम (Gravidarum) : गर्भवती स्त्री से सम्बन्धित, उदाहरणार्थ हाइपर इमैसिस ग्रैविडेरम।

हर्मोफ्रोडिटिज्म (Hermophroditism) : एक ऐसी स्थिति जिसमें दोनों ही लिंग के जननांग उपस्थित रहते हैं ।

हेटरोजाइगस (Heterozygous) : यह वंशानुगत स्थिति है जिसमें जाइगोट्स विपरीत पदार्थो का बना होता है । इस शब्द का प्रयोग RH असंगतता के मामलों में Rh पॉजिटिव पिता के जीनोटाइप का वर्णन करने के लिए किया जाता है ।

होमोजाइगस (Homozygous) : यह भी वंशानुगत स्थिति है जिसमें जाइगोट समान प्रकार के पदार्थो से बना होता है ।

हाइड्रोरीआ ग्रैविडेरम (Hydrorrhoea Gravidarum) : यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें गर्भावस्था के दौरान गर्भाशय से साफ द्रव का निष्कासन थोड़ी थोड़ी देर में होता रहता है । यह अवस्था एम्निऑटिक थैली के फटने के कारण एम्निऑटिक द्रव के निकलने से उत्पन्न होती है।

इम्पेक्शन (Impaction) : तंग रूप से जम जाना, रूकावट, उदाहरणार्थ श्रोणि मार्ग मे नितम्ब. चेहरे या कंधा गर्भप्रस्तुति की रूकावट ।

संसूचक अंग (Indicating point) : निर्धारक अंग या गर्भप्रस्तुति का वह भाग जो माता की श्रोणि के 6 क्षेत्रों का सम्बन्ध गर्भस्थ शिशु की स्थिति के अनुसार बतलाता है ।

इन्ट्रा-लगामेन्टॉस गर्भावस्था (Intra-Ligamentous Pregnancy) : जब फैलोपिअन ट्यूबस फट जाती है तब ऐसा होता हैं तथा गर्भस्थ शिशु ब्रॉड लिगामेन्ट्स की तहों में विकसित होने लगता है।

मेनार्क (Menarche) : रजोधर्म चक्र का पहली बार आरम्भ होना, प्रथम रजोदर्शन ।

मेनोपॉज (Menopause) : रजोधर्म की समाप्ति - रजोनिवृत्ति ।

मिसकेरिज (Miscarriage) : यह शब्द गर्भपात के समान है । कुछ व्यक्ति स्वत: होने वाले गर्भपात के लिये मिसकेरिजं और "एबॉरशन" शब्द का सम्बन्ध अपराधिक गर्भपात से मानते है।

मल्टिग्रैबिडा (बहु गर्भा) (Multigravida) : मल्टि, मतलब एक से अधिक, ग्रैविडा, मतलब गर्भवती । जो स्त्री एक से अधिक बार गर्भवती हो चुकी है उसे बहु गर्भा कहते हैं ।

मल्टिपारा (बहु प्रसवा) (Multipara) : मल्टि, मतलब एक से अधिक. पारा, मतलब धारण करना । जो स्त्री एक से अधिक शिशु को जन्म दे चुकी है उसे "बहु प्रसवा" कहते है । प्रथमगर्भा स्त्री जिसे शिशु नहीं हुआ है । उसे "पारा 0" और दूसरी बार गर्भवती होने वाली स्त्री को 'पारा-I" लिखा जाता है ।

केन्द्रिक परिवार (Nuclear family) : घर पर आधारित सामाजिक रचना, माता-पिता और उनके बच्चे स्थाई रूप से एक साथ रहते हैं । इन्हे एकल परिवार भी कहते है ।

नलिपारा (अ-प्रसवा) (Nullipara) : ऐसी स्त्री जिसने कभी भी शिशु को जन्म नहीं दिया है ।

प्लेसिन्टा मेम्ब्रेनेशिआ (Placenta membranacea) : प्लेसेन्टल ऊतक की एक पतली तह जो एक क्षेत्र तक सीमित रहने की बजाए पूरी एम्निऑब्कि थैली को ढंक लेती है । यह स्थिति विरले ही होती है ।

प्रिवायेबल शिशु (पूर्णावधि पूर्व जीवित शिशु (Previable baby) : 28 सप्ताह से कम अवधि के गर्भ धारण वाला जीवित शिशु ।

प्राइमिग्रैविडा (Primegravida) : पहली बार गर्भवती होने वाली स्त्री ।

रेक्टोसिल (Rectocele) : योनिमार्ग मे मलाशय के प्रोलैप्स को रेक्टोसिल कहा जाता है ।

रेक्टोबैं जाइनल फिस्ट्यूला (Rectovaginal fistula) : मलाशय और योनिमार्ग के बीच यह एक कृत्रिम छिद्र है. जो प्राय: तब होता है जब टांके लगी हुई तृतीय श्रेणी के पेरिनिअल फटन उचित रूप से ठीक नहीं हो पाती है । जब कशनअल पेड पर मलवस्तु साफ दिखाई दे, तब प्राय: प्रसवपश्चात् तीसरे या चौथे दिन, इसकी आशंका हो सकती है ।

लिंग निर्धारण (Sex determination) : एम्निऑटिक द्रव में टेस्टोस्टेरॉन की सान्द्रता नापकर गर्भस्थ शिशु के लिंग का निर्धारण किया जा सकता है । जब गर्भस्थ शिशु पुरूष लिंग का होता है, गर्भावस्था में दूसरी तिमाही के दौरान टेस्टोस्टेरॉन की मात्रा अधिक रहती है ।

स्वत: निष्कासन (Spontaneous evolution) : यह वह प्रक्रिया है जिसमें कंधा गर्भप्रस्तुति के मामलों में गर्भस्थ शिशु निष्कासित हो सकता है । ऐसा सिर्फ तब ही संभव है जब श्रोणि बड़ी और गर्भस्थ शिशु छोटा होता है और मुख्यत: जब शिशु समय से पूर्व गला हुआ रहता है । एक भुजा और कंधा श्रोणि की निचली सतह पर निकल आता है एवं प्यूबिक आर्च के नीचे रूक जाता है । धड़, नितम्ब और पैर इस क्रम में शरीर, बाहर निकला है । सिर सबसे अत में निकलता है ।

स्यूपरफीकन्डेशन (Superfecundation) : एक ही रजोधर्म अवधि के बीच संभोग के कारण दो अलग-अलग डिम्ब के निषेचन की प्रक्रिया है । इसके परिणामस्वरूप द्विडिम्बीय (डाइजाइगोटिक) जुडवाँ शिशु पैदा होते हैं । स्यूपरफीकन्डेशन की प्रक्रिया को सिद्ध करने का कोई उपाय नही है ।

टेरेटोजन (Teratogen) : कोई भी दवाई या जीवाणु, जिसके द्वारा गर्भस्थ शिशु में जन्मजात असामान्यता पैदा होने की सम्भावना रहती है, उदाहरणार्थ थैलिडोमाइड दवाई, रूबेला वाइरस ।

उदासीन तापक्रम वातावरण (Thermo-neutral Environment) : यह वह तापक्रम है जिसमें शिशु गरमी बनायें रखने के लिये कम से कम ऊर्जा का उपयोग करता है, जैसे कि गरम नर्सरी में, गरम इन्ययूवेटर में ।

ट्राइमेस्टर (तिमाही) (Trimestar) : तीन महीनों की अवधि । गर्भावस्था की 9 महीनो की अवधि को तीन तिमाहियो मे विभक्त किया जा सकता है । (a) प्रथम तिमाही (b) दूसरी या मध्य तिमाही (c) तीसरी तिमाही ।

पी. एच. (PH) : रक्त में अम्लता और क्षारता को प्रदर्शित करने का यह एक सांकेतिक शब्द है । रक्त का सामान्य pH 7.35 से 7.4 है । जब गर्भस्थ शिशु में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है और अधिक अम्ल बनता है उससे रक्त की अम्लता बढ़ जाती हे तथा pH का स्तर कम हो जाता है । जब इसका स्तर 7.3 से कम हो जाता है तब गर्भस्थ शिशु अधिक जोखिम मे रहता है, अत: उसकी इस स्थिति का सतर्कतापूर्वक ध्यान रखना चाहिये । यदि इसका सार 7.2 या इससे कम है तो तुरन्त प्रसूति करना आवश्यक है । 6.9 pH घातक हो सकता है ।

2.2.4 प्रसूति विज्ञान के सामाजिक पक्ष

प्रसूति विज्ञान का सीधा सम्बन्ध सामाजिक व्यवस्था से है क्योंकि सामाजिक संरचना में प्रसूति विज्ञान की महत्वपूर्ण भूमिका है । यहाँ पर प्रसूति विज्ञान से जुड़े विभिन्न सामाजिक पक्षों पर विचार विमर्श किया जा रहा है ।

(अ) रहन-सहन का स्तर

महिला के गर्भस्थ जीवन, शैशव काल, बाल्यावस्था और किशोरावस्था के दौरान निम्न स्तर की सामाजिक स्थिति के कारण उसकी प्रजनन क्षमता प्रभावित हो जाती है । उसके स्वास्थ्य तथा अस्थि संरचना पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है । इसी प्रकार गर्भाशय में उपस्थित शिशु, भविष्य का संभावित पालनकर्ता है । स्वाभाविक तौर पर अच्छी सामाजिक स्थितियों के कारण गर्भस्थ शिशु की वृद्धि एवं प्रजनन पर लाभकारी परिणाम पड़ता है ।

विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कारक जैसे गरीबी, खराब आवासीय स्थिति, अत्यधिक भीड-भाड़, कुपोषण इत्यादि के कारण गर्भवती स्त्री का रहन-सहन का स्तर प्रभावित होता है । ऐसे मामलो मे समय से पूर्व प्रसव (प्रिमैच्योर डिलिवरी) होना सामान्य बात है । यह देखने मे आया है कि निम्न सामाजिक एवं आर्थिक कारणों का प्रसूति जन्य (परिनेटल) मृत्यु एवं शिशु मृत्यु दर पर सीधा प्रभाव होता है ।

(ब) रीति-रिवाज एवं अंधविश्वास

अनेक रीति रिवाज एवं समाज में व्याप्त अंधविश्वास प्रसूति जन्य (पेरिनेटल) बीमारियों एवं मृत्यु दर बढ़ाने मे सहायक होते हैं । अप्रशिक्षित दाइयों या घर की महिलाओं से ही प्रसव कराने पर जोर देना, प्रसव पूर्व देखभाल की उपेक्षा करना. पोषण सम्बन्धी अंधविश्वास (जैसे अधिक घी या चिकनाई युक्त भोजन देना. कुछ फलो का परित्याग करना, प्रसवोपरान्त खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्ध इत्यादि) प्रसव के समय गंदे, घरेलू कपडों का उपयोग, शीघ्र प्रसव हेतु किये जाने वाले जादू-टोने या टोटके, माँ के प्रथम दूध को अशुद्ध मानना इत्यादि कारक, उच्च मातृ मृत्यु एवं शिशु मृत्यु दर के लिए उत्तरदायी हो सकते है ।

इसी प्रकार गर्भावस्था के समय महिला द्वारा मद्यपान अथवा धूम्रपान (स्मोकिंग) की सामाजिक बुराई, गर्भस्थ शिशु पर प्रभाव डालती हैं । यही तक कि गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क की कोशिकाएं भी क्षतिग्रस्त हो सकती है ।

(स) सामाजिक दबाव

हमारे देश मे "पुत्रेष्णा'' अर्थात् बेटे की चाह का जनसंख्या विस्फोट में प्रभावी योगदान है । विभिन्न रीति रिवाज में पुत्र की अनिवार्यता के सामाजिक दबाव ने स्त्री-पुरूष लिंगानुपात' में असमानता उत्पन्न कर दी है तथा लड़कियों को दोयम दर्जे मे रख दिया है । स्वाभाविक तौर पर इससे प्रासविक स्थितियां प्रभावित हो रही हैं । इसी प्रकार गर्भ निरोधकों के उपयोग, गर्भपात के बारे मे धार्मिक फतवे अथवा दृष्टिकोण. यौन व्यवहार एवं यौन शिक्षा सम्बन्धी सामाजिक दबाव, मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य पर गहरा प्रभाव डालते हैं तथा इनसे प्रसूति सम्बन्धी निर्णयो पर प्रभाव पडता है ।

(द) वैवाहिक एवं पारिवारिक स्थितियां

शांतिपूर्ण एवं सदभावना युक्त वैवाहिक जीवन सफल प्रसूति हेतु नींव के पत्थर का कार्य करते हैं । उत्तरदायी अभिभावकता (पेरेन्ट हुड) के अन्तर्गत लिये गये निर्णयों से गर्भावस्था एवं प्रसूति स्वास्थ्य पर सीधा असर होता है । पति-पत्नी के मध्य संतुलन तथा समन्वय से महिला के प्रजनन स्वास्थ्य का स्तर बढ़ता है । वही पर आने वाले शिशु के लिये अच्छा वातावरण तैयार मिलता है । जल्दबाजी मे लिये गये निर्णय, तलाक, स्वच्छन्द यौन व्यवहार, गैर वैवाहिक सम्बन्ध, पारिवारिक संघर्ष. कलहपूर्ण वातावरण इत्यादि से महिला की गर्भावस्था तथा प्रसूति क्रियाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है । अधिक सदस्यों वाले परिवार से भी प्रसूति स्वास्थ्य पर असर पडता है. यद्यपि वह नकारात्मक अथवा सकारात्मक, दोनों प्रकार का हो सकता है ।

(य) शिक्षा एवं यौन शिक्षा

शिक्षित दम्पती अथवा महिलाएं, गर्भाधान से लेकर प्रसूति विज्ञान के प्रत्येक चरण के विषय में जानकारी प्राप्त करने हेतु उत्सुक रहती हैं । उनके निर्णयों के पीछे कोई न कोई कारण पाया जाता है । विभिन्न सर्वेक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि शिक्षा के बढ़ते प्रतिशत वाले क्षेत्र अथवा समुदायों मे मातृ मृत्यु एवं शिशु मृत्यु दर तुलनात्मक रूप से कम पाई जाती है । परिवार नियोजन के प्रति उनका रूख सकारात्मक रहता है तथा ऐसे समुदायों मे गर्भावस्था एवं प्रसूति से जुड़े खतरों की संख्या कम हो जाती है । इसी प्रकार यौन शिक्षा का भी प्रसूति विज्ञान से सीधा सम्बन्ध हे । यौवनारम्भ (प्यूवर्टि) के समय दी गई यौन शिक्षा, जहाँ किशोरवय में युवक एवं युवतियों को अनेक यौन रोगों तथा यौन भ्रान्तियों से बचाती है वहीं उनमें जिम्मेवार पति या पत्नी तथा जागरूक अभिभावक बनने की सम्भावनाएं उत्पन्न करती है । स्पष्ट है कि यौन शिक्षा के माध्यम से गर्भावस्था एवं प्रसूति क्रिया को सुरक्षित बनाया जा सकता है ।सारांश में कहा जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक स्थितियां "प्रसूति विज्ञान" को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष तरीके से कम अथवा अधिक प्रभावित करती हैं ।

2.3 प्रसूति विज्ञान सहायिका: अवधारणा. उद्देश्य, परिभाषा

यह एक स्पष्ट तथा पूर्णत: स्थापित तथ्य है कि प्रसूति स्वास्थ्य, जन स्वास्थ्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है । विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थाओं द्वारा प्रजनन स्वास्थ्य पर दिये जा रहे महत्व से भी यह भली भांति उजागर होता है कि मातृ स्वास्थ्य का स्तर सुधारे बिना व्यक्तिगत से लेकर राष्ट्रीय स्वास्थ्य का ऊँचा स्तर प्राप्त करना कठिन है । यही कारण है कि प्रत्येक देश अपनी स्वास्थ्य नीति में प्रजनन स्वास्थ्य को प्रमुख स्थान देता है ।

भारत जैसे विकासशील एवं जनसंख्या विस्फोट का सामना कर रहे देश में तो प्रजनन स्वास्थ्य ' की भूमिका अत्यन्त प्रभावी एवं महत्वपूर्ण है । जनसंख्या पर नियंत्रण तथा जनसंख्या स्थिरीकरण के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए जनसंख्या नीति का निर्माण करने वाले देशों में भारत का प्रथम स्थान है किन्तु यह भी उल्लेखनीय है कि हम अभी तक बढ़ती जनसंख्या की बाढ़ को रोक नहीं पाये हैं, उसके पीछे अनेक कारण हैं किन्तु उनमें से एक प्रमुख कारण संसाधनो की कमी होना है।

यहाँ पर प्रसूति विज्ञान के संदर्भ में राष्ट्रीय तथा राजस्थान राज्य की जनसंख्या नीति का संक्षिप्त वर्णन करना ठीक रहेगा ।

2.3.1 राष्ट्रीय जनसंख्या नीति-2000

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति का तात्कालिक उद्देश्य दम्पती संरक्षण, स्वास्थ्य ढांचे का सुदृढीकरण, बुनियादी स्वास्थ्य विशेषत: प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य की देखभाल तथा एकीकृत स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धि में बढोतरी है । नई जनसंख्या नीति 2000 में 14 राष्ट्रीय - सामाजिक जननांकी लक्ष्यों को वर्ष 2010 तक प्राप्त करने का उद्देश्य निर्धारित किया है, ये लक्ष्य निम्न हैं :

1. प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य की अनुपूरित मांग की आपूर्ति एवं संस्थागत ढांचे का सुदृढीकरण।
2. 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा ।
3. शिशु मृत्यु दर को 30 प्रति हजार से नीचे लाना ।
4. मातृ मृत्यु दर को 100 से नीचे लाना ।
5. टीकाकरण के द्वारा बचाव किये जाने वाली बीमारियों के विरूद्ध शत प्रतिशत प्रतिरक्षण (टीकाकरण)
6. लड़कियों की विवाह की न्यूनतम आयु 18 वर्ष हेतु प्रोत्साहित करना ।
7. संस्थागत प्रसव 80 प्रतिशत एवं प्रशिक्षित व्यक्ति द्वारा प्रसव कराने का शत प्रतिशत लक्ष्य ।
8. गर्भ निरोधक साधनों में से इच्छित पसंद और सूचना परामर्श सेवाओं की सभी तक पहुंच ।
9. एड्स के प्रसार को, प्रजनन तंत्र. संक्रमण और यौन संचारित रोगों के प्रयत्न एवं राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) के मध्य समन्वय को प्रोत्साहित कर नियंत्रित करना

10. संचारी रोगों से बचाव व नियंत्रण ।
11. प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य सेवाओं मे भारतीय चिकित्सा पद्धति का समावेश ।
12. छोटे परिवार के मापदंडों के महत्व को बढ़ावा देना ।
13. सम्बन्धित सामाजिक क्षेत्रों के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सामंजस्य स्थापित करना ।
14. जन्म, मृत्यु, विवाह एवं गर्भधारण का शत प्रतिशत पंजीयन ।

2.3.2 राज्य जनसंख्या नीति के उद्देश्य

इसका प्रारम्भ राजस्थान में 20 जनवरी 2000 से किया गया । राजस्थान राज्य की जनसंख्या नीति के प्रमुख उद्देश्य.इस प्रकार है:

1. सन् 2016 तक कुल प्रजनन दर को 3.74 के वर्तमान स्तर से 2.1 पर लाना ।
2. दम्पती संरक्षण दर 68 प्रतिशत का स्तर, वर्ष 2016 में लाना ।
3. वर्ष 2010 तक लड़कियों के विवाह की न्यूनतम आयु 18 वर्ष सुनिश्चित करना ।
4. वर्ष 2010 तक 90 प्रतिशत गर्भवती महिलाओं के लिए आइरन फौलिक एसिड गोलियों एवं टेटनस टाक्साइड इंजेक्शन की उपलब्धि सुनिश्चित करना ।
5. समस्त गर्भवती महिलाओं की प्रसवपूर्व देखभाल ।
6. संस्थागत प्रसव का अनुपात 2016 मे 50 प्रतिशत तक बढ़ाना ।
7. वर्ष 2005 तक शत प्रतिशत प्रसव, प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा कराया जाना ।
8. जटिल प्रसव के लिए चिकित्सकीय सुविधाओं का विस्तार ।
9. वर्ष 2007 तक न्यूनतम 90 प्रतिशत बच्चों के लिए पूर्ण टीकाकरण ।
10. पोलियो का उन्मूलन ।
11. दस्त एवं पेचिश रोग तथा निमोनिया पर नियन्त्रण ।
12. पोषाहार व्यवस्था में सुधार ।
13. प्रजनन मार्ग संक्रमणों की रोकथाम ।
14. बांझपन वाले दम्पतियों को परामर्श एवं उन्हे चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराना ।

राष्ट्रीय एवं राज्य जनसंख्या नीतियों पर विचार विमर्श किया जाये तो यह स्पष्ट कि इन नीतियों के प्रमुख उद्देश्य प्रजनन स्वास्थ्य, तथा उससे जुड़े विभिन्न पक्षो यथा परिवार नियोजन, शिशु स्वास्थ्य जन्म-मृत्यु पंजीकरण, टीकाकरण आदि से सम्बन्धित है । वस्तुत: जनसंख्या का सीधा सम्बन्ध प्रजनन व्यवहार से है जो विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं चिकित्सकीय कारणो से प्रभावित होता है । इसी प्रकार महिलाओं के स्वास्थ्य एवं पोषण स्तर मे सुधार कर ही, महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य पाया जा सकता है ।

जनसंख्या नीति की सफलता हेतु प्रचुर संसाधनों का होना आवश्यक है, जिनके माध्यम से प्रसूति एवं प्रजनन स्वास्थ्य का स्तर बढाया जा सकता है । इन संसाधनों मे कार्मिक प्रबंधन अर्थात प्रचुर संख्या स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है जो प्रजनन स्वास्थ्य के क्षेत्र मे कार्य कर सके ।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में मातृ मृत्यु दर तथा शिशु मृत्यु दर, शहरों की तुलना मे अधिक है यद्यपि वर्तमान मे संस्थागत प्रसवों (Instituional Deliveries) या हॉस्पियटल डिलीवरी पर अधिक जोर दिया जा रहा है, किन्तु कुछ क्षेत्रों को छोड़कर कस्बाई एवं ग्रामीण क्षेत्रों में जन स्वास्थ्य एवं सुरक्षा का उत्तरदायित्व ऐसी महिलाओं ने संभाल रखा है जिन्हें प्रसूति विद्या का कोई औपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त न ही है । इन महिलाओं को दाई अथवा परम्परागत जन्म सहायिका (TBA -Traditional Birth Attendent) के नाम से जाना जाता है, स्वास्थ्य केन्द्रों की पहुंच से दूर ग्रामीण महिलाएं प्रसव काल मे इन अप्रशिक्षित दाइयों के भरोसे ही रहती हैं । जननी के स्वास्थ्य की तथा भावी संतान की सुरक्षा, इन्हीं के अप्रशिक्षित हाथों मे है ।

यद्यपि केन्द्र एवं राज्य सरकारें प्रजनन स्वास्थ्य के समुचित संरक्षण हेतु दाइयों के प्रशिक्षण हेतु कार्यक्रम चला रही हैं । वन्देमात्रम एवं जननी स्वास्थ्य सुरक्षा जैसे कार्यक्रम भी प्रगति पर हैं । नवीनतम राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के अन्तर्गत 'आशा' नाम से सामाजिक स्वास्थ्य सक्रिय कार्यकर्ताओ का मनोनयन भी किया जा रहा है फिर भी प्रसूति स्वास्थ्य की उचित देखभाल हेतु प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी का अभाव है । **प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं के माध्यम से इस कमी या गेप को भरा जाना संभव है ।**

इसी प्रकार प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं के रूप मे ग्रामीण क्षेत्रों मे महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता तथा अन्य स्वास्थ्य कर्मियों को, एक ऐसी महिला स्वास्थ्य सहायिका मिल जावेगी जो स्थानीय निवासी होने के कारण प्रसूति स्वास्थ्य ही नही अपितु अन्य स्वास्थ्य सेवाओं हेतु भी अत्यन्त उपयोगी कड़ी के रूप मे कार्य करेगी । साथ ही शहरी क्षेत्रों में भी प्रजनन स्वास्थ्य के लिए प्रशिक्षित स्वैच्छिक स्वास्थ्यकर्मी उपलब्ध हो सकेंगे ।

2.3.3 प्रसूति विज्ञान सहायिका के उद्देश्य

प्रसूति विज्ञान सहायिका का प्रमुख उद्देश्य प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य का संरक्षण करना है । अन्य सामान्य उद्देश्य निम्न प्रकार हैं:

1. प्रशिक्षित प्रसूति सहायक के तौर पर कार्य करना ।
2. मातृ मृत्यु एवं शिशु मृत्यु दर कम करना ।
3. ग्रास रूट स्तर पर स्थानीय स्वास्थ्य सहायिका के रूप मे कार्य करना ।
4. महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) तथा अन्य स्वास्थ्य कर्मियों के मध्य स्वास्थ्य विषयक मामलों मे सम्पर्क कड़ी के रूप मे कार्य करना ।
5. परिवार कल्याण सेवाओं, राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की सफलता मे योगदान देना ।
6. स्वास्थ्य क्षेत्र मे जनभागीदारी को बढ़ाने हेतु कार्य करना ।
7. स्थानीय क्षेत्र मे स्वास्थ्य मार्गदर्शक की भूमिका निभाना ।
8. प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य हेतु अपनी सीमाओं के अन्तर्गत परामर्शदाता के रूप मे कार्य करना ।

2.3.4 प्रसूति विज्ञान सहायिका की परिभाषा

प्रसूति विज्ञान अर्थात आब्स्टेट्रिक्स के अन्तर्गत मिडविफरी आती है किन्तु आब्स्टेट्रिक्स या प्रसूति विज्ञान अधिक व्यापक एवं अर्थ बोधक है । इस सम्बन्ध मे इन्टरनेशनल कौंसिल आव मिडवाईव्ज (ICM)) की 1973 मे स्वीकृत "मिडवाइफ" की परिभाषा पर भी विचार करना जरूरी है । जिसके अनुसार :-

"मिडवाइफ एक ऐसी महिला है जिसने अपने देश मे विधिवत् मान्यता प्राप्त मिडवाइफ शिक्षा कार्यक्रम मे भाग लिया हो तथा सफल प्रशिक्षण के पश्चात पंजीकृत एवं मिडविफरी की प्रेक्टिस करने का लाइसेंस प्राप्त किया हो । वह स्त्रियो को गर्भावस्था, प्रसवकाल एवं प्रसव के बाद आवश्यक देखभाल और सलाह देने, स्वयं की जवाबदारी मे प्रसव कराने और नवजात शिशु की देखभाल करने में समर्थ हो । वह स्वास्थ्य शिक्षा एवं परामर्श देने में सक्षम हो तथा अस्पतालों, नर्सिंग होम, निदानगृहों, स्वास्थ्य इकाइयों, गृह नर्सिंग तथा अन्य चिकित्सा संस्थानो मे प्रैक्टिस कर सकती है ।"

हमारे देश मे महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता या ए.एन.एम. (आक्जिलरी नर्स मिडवाइफ) को स्वास्थ्य सेवाओं की रीढ कहा जा सकता है । किन्तु उसका कार्य मात्र मिडविफरी तक ही कभी सीमित नही रहा । प्रसूति कार्य के अतिरिक्त अन्य स्वास्थ्य कार्यक्रमो मे भी उसकी प्रभावी भूमिका रही है । करतार सिह कमेटी (1973) की अनुशंसा के आधार पर बहुउद्देशीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता कार्यक्रम प्रारम्भ होने पर ए.एन.एम. का नाम बदलकर महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (Female Health Worker) कर दिया गया है तथा उसका कार्य क्षेत्र भी विस्तृत हो गया है । यद्यपि प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाएं प्रदत्त करना, अभी भी उसकी प्रमुख भूमिकाओं मे से एक है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन / यूनिसेफ एवं अन्य स्वास्थ्य अभिकरणों की यह स्पष्ट मान्यता है कि हमारे देश में ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का अधिकांश उत्तरदायित्व महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (अभी भी इनको ए.एन.एम. नाम से जाना जाता है ।) पर है । अत. इनकी सहायता हेतु तथा स्वास्थ्य कार्यक्रमो के बेहतर संचालन हेतु ग्रामीण क्षेत्रों के स्थानीय व्यक्तियों को सेवाओं हेतु जोड़ना आवश्यक है । इसी क्रम मे सरकार द्वारा दाइयों या परम्परागत जन्म सहायकों को प्रशिक्षित किया जा रहा है । ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक (Village Healthe Guide)/आंगनबाड़ी कार्यक्रम चलाया जा रहा है अथवा राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के अधीन "आशा" का चयन किया जा रहा है ।

स्वास्थ्य सेवाओं हेतु प्रसूति विज्ञान सहायिका भी ग्रासरूट स्तर पर महत्वपूर्ण सम्पर्क सूत्र सिद्ध हो सकती है । यह दाइयों / परम्परागत जन्म सहायकों के स्थान पर अधिक प्रशिक्षित एवं कुशल स्वास्थ्य सहायिका की भूमिका का निर्वहन कर सकती हैं तथा स्वास्थ्य दल मे महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के लिए महत्वपूर्ण सहायक सिद्ध हो सकती है । इस अवधारणा के आधार पर प्रसूति विज्ञान सहायिका को निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता है

"प्रसूति विज्ञान सहायिका प्रसूति विज्ञान मे प्रमाण पत्र प्राप्त ऐसी महिला है जो गर्भधारण से लेकर प्रसव कर्म तथा नवजात शिशु की देखभाल मे महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (FHWयाANM) अथवा महिला स्वास्थ्य पर्यवेक्षक अथवा कम्यूनिटि हेल्थ नर्स अथवा महिला चिकित्सक (स्त्री

रोग एवं प्रसूति विशेषज्ञ) की सहायिका के रूप में कार्य करे । साथ ही इनकी अनुपस्थिति में जननी सुरक्षा, प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य मे अपनी सीमाओं के अन्तर्गत योगदान करे तथा जटिलता की स्थिति मे गर्भवती/ प्रसूता को उपयुक्त उपचार हेतु रैफर करे अथवा परामर्श हेतु भिजवाये ।"

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि प्रसूति विज्ञान सहायिका एक ऐसी स्वास्थ्य सहायिका है जिसका मुख्य कार्य प्रसूति कार्य में सहायता प्रदान करना है किन्तु प्रसूति विद्या के साथ प्रजनन एवं शिशु स्वास्थ्य से जुडे विभिन्न क्षेत्रों मे भी उसकी प्रभावी भूमिका है ।

2.4 प्रसूत विज्ञान सहायिका का महत्व

प्रसूत विज्ञान सहायिका की मुख्य भूमिका प्रसूति कार्य में सहायता करना है । महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम) अथवा चिकित्सक के प्रसूति के समय उपस्थित रहने से उसे अपने कार्यों में मार्गदर्शन एवं मदद मिलती है किन्तु गर्भावस्था के समय से ही प्रसव का प्रबन्ध शुरू हो जाने से प्रसूति विज्ञान सहायिका का महत्व अपने आप ही बढ़ जाता है । प्रसूति से सम्बन्धित विभिन्न चरणों में प्रसूति विज्ञान सहायिका को अनेक प्रकार की जिम्मेदारियाँ निभानी होती हैं । अत. प्रसूति विज्ञान सहायिका का महत्व उसके कार्यो से सम्बन्धित है । प्रसूति कर्म मे प्रसूति विज्ञान सहायिका का महत्व निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत वर्णित किया जा सकता है:

(अ) सामाजिक महत्व

प्रत्येक समाज में "जन्म" को एक विशेष सामाजिक घटना माना जाता है । "जन्म" के द्वारा ही संतानोत्पत्ति होती है तथा मानव समाज का विकासक्रम जारी रहता है । शिशु का जन्म होना एक पारिवारिक सुअवसर होने के अतिरिक्त, किसी महिला के जीवन की अविस्मरणीय घटना होती है, ऐसे महत्वपूर्ण अवसर का सम्बंध प्रसूता के जीवन से सीधा जुड़ा होता है । इस प्रकार गर्भावस्था से लेकर प्रसव तथा उसके उपरांत प्रसवोत्तर अवधि मे, प्रसूति विज्ञान सहायिका अपनी उपस्थिति से इस जन्म की घटना को सुरक्षित बनाने तथा प्रसूता को जोखिमों से बचाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । प्रसूता के अलावा परिवार के सदस्यों, रिश्तेदारों, मित्रों आदि को भी गर्भावस्था एवं प्रसूति के विभिन्न चरणों के बारे में जानकारी देकर प्रसूति विज्ञान सहायिका जन्म की सामाजिक घटना को बैचेनी रहित, कम से कम कष्टप्रद बनाकर अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को निभाती है ।

(ब) मनोवैज्ञानिक महत्व

गर्भावस्था से लेकर प्रसूति काल तक महिला की मानसिक स्थिति में अनेक प्रकार के उतार चढ़ाव आते है । एक ओर शिशु के सृजन की खुशी, उसके जन्म की उत्सुकता जबकि दूसरी ओर गर्भावस्था के कारण होने वाले शारीरिक परिवर्तन एवं प्रसूति के अनजाने खतरे, उसके मन को अस्थिर एवं डांवाडोल तथा आशंकित करते रहते हैं, इन परिस्थितियों में उसे घर, पति एवं रिश्तेदारों की ओर से मानसिक सहारा मिलना जरूरी है । यहां पर प्रसूति विज्ञान सहायिका दोहरी भूमिका निभा सकती है । एक तरफ स्वयं गर्भवती अथवा प्रसूता को अपनी जानकारी के आधार पर सहारा प्रदान कर, होने वाले

शारीरिक परिवर्तन तथा प्रसूति के बारे में निश्चित कर सकती है वहीं दूसरी ओर पति, परिवार तथा अन्य रिश्तेदारों को इस बात के लिए प्रेरित कर सकती है कि वे गर्भावस्था मे महिला को पूर्णतया मानसिक सम्बल प्रदान करें । महिला की शंकाओं का समाधान तथा उपयुक्त एवं पर्याप्त सूचनाओं से उसे मानसिक शांति मिलती है ।

यह स्पष्ट है कि भावनात्मक, सहारा, परिचय, समीपता एवं उपलब्धता के कारण प्रसूति विज्ञान सहायिका का गर्भ एवं प्रसूतिकाल में महत्वपूर्ण स्थान है ।

(स) चिकित्सीय महत्व

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है गर्भावस्था एवं प्रसूतिकाल में महिला को अनेक शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तनों से गुजरना होता है । महिला स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाली कई छोटी-मोटी समस्याओं का समाधान घरेलू एवं स्थानीय स्तर पर ही हो सकता है । स्वाभाविक तौर पर प्रसूति विज्ञान सहायिका अपने स्वास्थ्य-ज्ञान के आधार पर इस विषय में प्रसूता को सहायता पहुंचा सकती है । स्वास्थ्य केन्द्र, चिकित्सक अथवा ए.एन.एम. की सेवाएं सब जगह नहीं हो पाने की स्थिति में प्रसूति विज्ञान सहायिका का महत्व और अधिक बढ़ जाता है । प्रसूति विज्ञान सहायिका गर्भवती के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों को देख सकती है । अपनी सीमाओं के अन्दर उपचार प्रदान कर सकती है तथा जटिलता की स्थिति में महिला को रैफर कर सकती है । इस प्रकार प्रसूता के स्वास्थ्य पक्ष मे प्रसूति विज्ञान सहायिका महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है ।

(द) आर्थिक महत्व

हमारे देश मे स्वास्थ्य सेवाओं पर किया जाने वाला प्रति व्यक्ति खर्च अन्य विकसित देशों की तुलना मे काफी कम है । स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता तथा मजबूती हेतु पर्याप्त आर्थिक संसाधन होना जरूरी है । विशेषकर मातृ रूग्णता, मातृ मृत्यु दर तथा शिशु मृत्यु दर में कमी के लिए उपयुक्त मात्रा मे वित्तीय व्यवस्था होनी आवश्यक है । यहा यह महत्वपूर्ण है कि मातृ स्वास्थ्य / गर्भावस्था की अनेक जटिलताओं एवं उन पर होने वाले भारी खर्चे के पीछे मूल कारण, प्रारम्भिक अवस्था में रोग का उपचार नहीं करना अथवा स्वास्थ्य की उपेक्षा करना है । ग्रामीण स्तरों पर महिला स्वास्थ्य की स्थिति दयनीय है, ऐसी अवस्था में प्रसूति विज्ञान सहायिका शुरू से ही मातृ स्वास्थ्य पर सतर्कता पूर्वक ध्यान देकर गर्भवती / प्रसूता को अनेक स्वास्थ्य संकटो से बचा सकती है तथा अनावश्यक महंगे इलाज की स्थिति टाल सकती है।

प्रसूति विज्ञान सहायिका से जुड़ा एक अन्य आर्थिक पक्ष और भी महत्वपूर्ण है चूँकि प्रसूति विज्ञान सहायिका के प्रशिक्षण अथवा संस्थापन सम्बंधी खर्चे ना के बराबर अथवा अति अल्प हैं । अत: स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च में स्वत: कमी हो जाती है । देश की मातृ स्वास्थ्य एवं आर्थिक रीढ़ को मजबूत करने में प्रसूति विज्ञान सहायिका एक महत्वपूर्ण स्तम्भ का कार्य कर सकती है ।

(य) राजनैतिक महत्व

स्वास्थ्य के प्रति व्यक्ति, परिवार, समुदाय के साथ राष्ट्र एवं अर्न्तराष्ट्रीय संस्थाएं भी उत्तरदायी हैं । किसी भी स्तर पर ढील से व्यक्ति का स्वास्थ्य खतरे में पड सकता है । राजनैतिक नेतृत्व एवं सरकारों की इस में विशेष भूमिका है । अत: सरकारें नागरिको के स्वास्थ्य हेतु अनेक योजनाए, संसाधन उपलब्ध कराती हैं । प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य, टीकाकरण, परिवार नियोजन, संचारी रोग नियंत्रण कार्यक्रम, राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम इत्यादि के माध्यम से सरकार देश मे स्वास्थ्य स्तर बढाने मे लगी हुई हैं । ग्रास रूट स्तर पर मातृ स्वास्थ्य सेवाएं पहुंचाने हेतु महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की प्रमुख भूमिका है किन्तु विशाल जनसंख्या तथा संसाधनो की कमी के कारण इनकी संख्या पर्याप्त नही है । अत: आंगनबाडी कार्यकर्ता, ग्राम स्वास्थ्य मार्गदर्शक (Village Health Guide), आशा (Accreduted Social Health) इत्यादि योजनाओं को प्रोत्साहन दिया जा रहा है । प्रसूति विज्ञान सहायिका भी ग्रामीण एवं शहरी स्तर पर मातृ स्वास्थ्य सेवाओं मे अपना उल्लेखनीय योगदान कर सकती है तथा सरकारों को स्वास्थ्य के विषय में अनावश्यक बोझ से बचा सकती है । प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा प्रदत्त स्थानीय प्रसूति सेवाएं, सरकारों को श्रेय एवं राजनीतिक लाभ प्रदान करवाने मे सक्षम हैं ।

इस प्रकार प्रसूति विज्ञान सहायिका की विभिन्न भूमिकाएं, सामाजिक, आर्थिक चिकित्सीय, मनोवैज्ञानिक तथा राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं ।

2.5 स्वास्थ्य दल

(अ) दल (Team)'

दो या दो से अधिक व्यक्तियों का ऐसा समूह जो समान उद्देश्य के लिए, मिल-जुल कर कार्य करे, दल (टीम) कहलाता है, यद्यपि दल के सदस्यों का ज्ञान, व्यक्तित्व, योग्यता एवं कुशलता अलग अलग हो सकते हैं किन्तु वह एक दूसरे के पूरक बन कर प्रभावशाली ढंग से अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु एक इकाई के रूप मे कार्य करते हैं ।

हम यह कह सकते हैं कि :-

- दल का उद्देश्य होता है ।
- दल नियमों का पालन करता है ।
- दल के सदस्य उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अपने को संगठित करते हैं ।
- दल के सदस्य आपस में सहयोग करते हैं ।

एक अन्य विचार के अनुसार दल ऐसे व्यक्तियों का एक समूह है जिनके उद्देश्य समान हैं और उनकी पूर्ति के लिये जो एक दूसरे से, कार्य के प्रति समर्पित भावना से जुड़े हैं । ये सभी सदस्य या कार्यकर्ता समान उद्देश्यो अर्थात समुदाय के आम सदस्यों के विकास और कल्याण के लिए कार्य करते हैं ।

(ब) टीमवर्क (Team Work)

अनेक व्यक्तियों अथवा, कार्यकर्ताओं द्वारा संगठित होकर किसी समान उद्देश्यो के साथ कार्य करने के लिए जुट जाना-कार्य चाहे दिया गया हो अथवा स्वयं प्रेरित होकर किया

जा रहा है उसे टीमवर्क कहते हैं । इसमें हर व्यक्ति जो कुछ कार्य करता है उसे टीम का कार्य माना जाता है । तथा दूसरों के कार्य के साथ, इसका समन्वय बैठाया जाता है । मिल जुलकर लगातार कार्य को बढ़ाने का नाम है टीमवर्क । इस प्रक्रिया में टीम के हित में प्रत्येक व्यक्ति कार्य करता है।अत: टीमवर्क कोई इत्तेफाक से नहीं बनता, इसके लिये विशिष्ट दिशा में प्रयास किये जाते हैं । अच्छे टीम - वर्क के लिये आवश्यक है कि टीम के सदस्य एक दूसरे की कार्य पद्धति से परिचित रहें तथा एक दूसरे की मानसिकता का सही आंकलन करें ।

लेकिन प्रभावी टीम वर्क के लिये मूलत: समान उद्देश्य एवं समान रूचि होनी आवश्यक है । टीम-वर्क की अहं बात प्रभावी नेतृत्व एवं सक्षम नेतृत्व है ।

(स) स्वास्थ्य दल (Health Team)

ऐसे व्यक्तियों का समूह जो समुदाय के स्वास्थ्य संरक्षण अथवा स्वास्थ्य वृद्धि हेतु मिल कर कार्य करे, स्वास्थ्य दल (हैल्थ टीम) कहलाता है । स्वास्थ्य दल विभिन्न स्तरों पर, विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं । स्वास्थ्य दल स्वास्थ्य कार्यक्रमो के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । स्वास्थ्य दलो को केन्द्र सरकार अथवा सम्बंधित राज्य सरकार के स्वास्थ्य विभाग के नियमों का पालन करना होता है । स्वास्थ्य दल में स्वास्थ्य कर्मचारियों का प्रमुख स्थान होता है ।

2.5.1 स्वास्थ्य दल के सदस्य (Members of Health Team)

स्वास्थ्य प्रशासन के विभिन्न संगठनों के स्वास्थ्य कार्मिक एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र मे कार्य करने वाले सामाजिक एवं स्थानीय कार्यकर्ता स्वास्थ्य दल के सदस्य हो सकते हैं ।

स्थानीय स्तर पर स्वास्थ्य से सम्बंधित व्यक्ति मिलकर उस क्षेत्र के स्वास्थ्य दल का निर्माण करते हैं । उदाहरणार्थ प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर कार्यरत सभी स्वास्थ्य कार्यकर्ता, स्वास्थ्य सहायक, वहां पर कार्यरत नर्सिंग एवं अन्य कर्मचारी, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का स्वास्थ्य दल (हैल्थ टीम) कहलाता है । यह दल चिकित्सा अधिकारों के नेतृत्व में लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निरंतर कार्य करता रहता है । स्थानीय स्वास्थ्य दल में, कुछ सदस्य प्रत्यक्ष रूप से स्वास्थ्य कार्यों से जुडे हुए होते हैं जबकि कुछ अप्रत्यक्ष रूप से अथवा आवश्यकता पडने पर सहायक हो सकते हैं ।

स्वास्थ्य दल के सदस्यों का चयन निम्न में से किया 'जा सकता है:

- **स्वास्थ्य से सम्बंधित सदस्य**

  महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता – पुरूष स्वास्थ्य कार्यकर्ता
  महिला स्वास्थ्य सहायक – पुरूष स्वास्थ्य सहायक
  दाई / आंगनबाडी कार्यकर्ता – डिपो-होल्डर
  ग्रामीण स्वास्थ्य मार्गदर्शक (VHG) – स्वयंसेवी स्वास्थ्य संस्थाएं

- **स्वास्थ्य से अप्रत्यक्ष सम्बंधित या अन्य सदस्य**

  अध्यापक – आयुर्वेदिक चिकित्सक

मुखिया / समुदाय के नेता / महिला नेता – चयनित जनप्रतिनिधि
ग्राम सेवक – पटवारी आदि ।

2.5.2 स्वास्थ्य दल के सदस्यों के कार्य

स्वास्थ्य दल के सदस्यों का कार्य, स्वास्थ्य दल में उनकी स्थिति, योग्यता अथवा स्वास्थ्य दल नेता द्वारा उन्हे प्रदत्त भूमिका पर निर्भर करता है । स्वास्थ्य दल के अधिकांश सदस्यों का कार्य उनके पद क्रम के अनुकूल अथवा उनकी कार्यतालिका (Job Chart) के अनुसार निर्धारित होता है। दल के अन्य सदस्य भी (जो प्रत्यक्षत: स्वास्थ्य सेवाओं से सम्बंधित नही होते हैं) उन्हे सौंपें गये कार्यो को संपादित कर, स्वास्थ्य दल के उद्देश्यों की पूर्ति मे सहायता प्रदान करते हैं ।

- **दल नेता के कार्य**

प्रत्येक दल का एक नेता होता है जिसका मुख्य कार्य, दल को संगठित रखना और उद्देश्यों की प्राप्ति करना होता हैं । दल नेतृत्व के अन्य कार्य हैं:

- दल मे दल भावना (टीम स्प्रिट) बनाये रखना ।
- दल सदस्यों मे सहयोग एवं समन्वय बनाये रखना ।
- दल मे अनुशासन बनाये रखना ।

  दल के प्रत्येक सदस्य को उसके ज्ञान एवं योग्यता का उपयोग करने के समुचित अवसर प्रदान करना ।

  आवश्यकतानुसार उपयुक्त निर्णय लेना ।

  दल एवं उसके सदस्यों का मान-सम्मान बनाये रखना ।

  अधिकारियों / संस्था को उपयुक्त एवं समय के अनुसार रिपोर्टिग करना ।

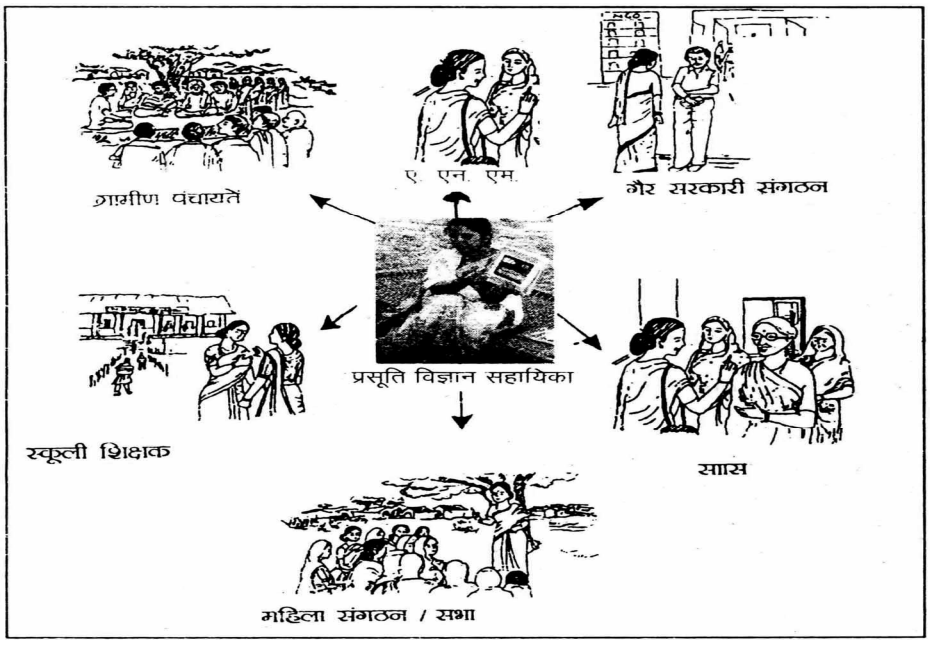

चित्र :प्रसूति विज्ञान सहायिका एवं स्वास्थ्य दल के संभावित अन्य सदस्य

2.5.3 स्वास्थ्य दल के सदस्यों के मध्य सम्बंध

स्वास्थ्य दल के सदस्यों के मध्य अच्छे सम्बंधों के लिए दल भावना का विकसित करना आवश्यक है । अपने कार्यो के अतिरिक्त अपने दूसरे साथी की हर सम्भव सहायता प्रदान करने से अच्छे सम्बंधों की स्थापना होती है तथा लक्ष्यों की पूर्ति आसान हो जाती है।

स्वास्थ्य दल के सदस्यों के मध्य मुख्यत: निम्न प्रकार के सम्बंध हो सकते हैं

(i) कार्यात्मक सम्बंध (Functional or Working Relationship)

सदस्यों के मध्य ऐसे सम्बंध जो उनकी कार्य तालिका (Job Chart) के अनुसार अथवा पद के अनुसार निर्धारित होते हैं, कार्यात्मक सम्बंध कहलाते हैं । प्रारम्भ में ऐसे सम्बंध औपचारिक तरह के होते हैं किन्तु कालान्तर में इनके आधार पर व्यक्तिगत सम्बंध विकसित होने की संभावना होती है ।

(ii) व्यक्तिगत सम्बंध (Personal Relationship)

आपसी सम्पर्क, एक लक्ष्य, समान हित तथा दल भावना के कारण. स्वास्थ्य दल के सदस्यों के मध्य व्यक्तिगत, सम्बंध विकसित हो जाते हैं । इनमें अनौपचारिकता अधिक पाई जाती है । स्वास्थ्य दल के सदस्यों के मध्य अच्छे व्यक्तिगत सम्बंध, स्वास्थ्य दल को सुदृढता प्रदान करते हैं ।

स्वास्थ्य दल के सदस्यों में अच्छे सम्बंधों के लिए निम्नलिखित गुण होने चाहिये:

- सदस्यों में दल के नेता के प्रति पूरी आस्था एवं विश्वास होना चाहिये ।
- दल के सदस्यों को अपने ज्ञान एवं कौशल का उपयोग, सही समय एवं सही स्थान पर करने की जानकारी होनी चाहिये ।
- दल के उद्देश्यों के बारे मे सदस्यों को पूर्ण जानकारी होनी चाहिये ।
- सदस्यों में उद्देश्य पूर्ति की योग्यता होनी चाहिये ।
- दल के सदस्यों के बीच खुल कर एवं ईमानदारी से बात करने की समझ होनी चाहिये ।
- सदस्यों मे समय एवं दल के नियमों के प्रति वचनबद्धता होनी चाहिये ।
- सदस्यों में सहयोग एवं समन्वय का गुण होना चाहिये ।

2.5.4 दल निर्माण चक्र (Team Building Cycle)

दल निर्माण के समय, कार्य में आने वाली संभावित समस्याओं का पता लगाने के लिए जिस विधि का प्रयोग किया जाता है, उसे दल निर्माण चक्र (Team building Cycle) कहा जाता है । कार्य के दौरान आ रही बाधाओं के विश्लेषण एवं उन्हें दूर करने लिए भी इस चक्र का प्रयोग किया जाता है । दल निर्माण चक्र, कार्य योजना एवं उनके क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन का महत्वपूर्ण आधार है । दल निर्माण चक्र को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है :

- **दल निर्माण चक्र के चरण**

1. समस्या की पहचान करना ।

   इस चरण में जनसमुदाय से विचार विमर्श कर उनकी स्वास्थ्य समस्याओं को जानकर, प्राथमिकता तय कर, समस्या की गंभीरता का पता लगाया जा सकता है ।

2. स्वास्थ्य समस्या से सम्बंधित तथ्यों का संग्रहण करना ।
3. प्राप्त तथ्यों के आधार पर स्वास्थ्य समस्या का विश्लेषण करना ।
4. कार्य योजना बनाना, इसमें सहयोगियों का चयन, वित्तीय प्रबंधन, जन सहयोग की प्राप्ति, संभावित बाधाओं तथा उनके हल पर विचार करना आवश्यक है ।
5. कार्य योजना को लागू करना (क्रियान्वयन)
6. मूल्यांकन

2.5.5 प्रभावी स्वास्थ्य दल की विशेषताएं

- उपयुक्त नेतृत्व तथा नेता में सदस्यों का विश्वास पाया जाना ।
- स्वास्थ्य लक्ष्यों की स्पष्टता ।
- सभी सदस्यों को स्वास्थ्य दल के उद्देश्यों की पूर्ण जानकारी होना ।
- उच्च किन्तु अर्जित एवं मापे जा सकने वाले लक्ष्य ।
- स्वास्थ्य दल के सदस्यों को अपने कार्यो एवं भूमिका की स्पष्ट जानकारी होना ।
- स्वास्थ्य दल का सदस्यों के कल्याण एवं व्यावसायिक उन्नति से सम्बंधित होना ।
- सदस्यों के ज्ञान एवं कौशल का अधिकतम संभव उपयोग करना ।
- सदस्यों मे लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु आवश्यक योग्यताओं का होना ।
- स्पष्ट, खुला एवं प्रभावी सम्प्रेषण ।
- प्राथमिकताओं का स्पष्ट निर्धारण होना ।
- सदस्यों में सहयोग एवं समन्वय की भावना होना ।
- संघर्ष एवं समस्या समाधान हेतु 'दल-समस्या समाधान तकनीक' (Team problem solving Techniques) अपनाना ।
- समय तालिका होना ।
- परिणामों का समय-समय पर मूल्यांकन ।

2.5.6 स्वास्थ्य दल तथा प्रसूति विज्ञान सहायिका

प्रसूति विज्ञान सहायिका स्वास्थ्य दल के सदस्य के रूप मे निम्न कार्यों मे सहायता कर सकती है

- घर-घर जाकर सर्वे करने में मदद देना ।
- कौन से बच्चों को टीकाकरण की आवश्यकता है, यह देखना ।
- टीकाकरण शिविरों तथा सत्रों का आयोजन करने हेतु मदद करना ।
- गर्भवती महिलाओं की पहचान करना और उन्हें ए.एन.सी. (एन्टिनेटल केअर) हेतु रजिस्ट्रेशन कराने के लिए बुलाना ।
- जिन गर्भवती महिलाओं को जोखिम भरे हालत से प्राणों पर संकट या जान जाने की संभावना है, उन्हें ढूंढने मे महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (ए.एन.एम.) को मदद करना।
- अपने क्षेत्र मे कोई मृत्यु या जन्म हुआ हो तो दर्ज करना ।
- डायरिया तथा अन्य बीमारियों की रिपार्ट करना ।

- परिवार नियोजन पद्धतियों को अपनाने मे योग्य युगलों को प्रेरणा देना ।
- महिला मंडलों की बैठकें आयोजित करने के लिए मदद करना ।
- डीपो होल्डर बनकर कंडोम्स और ओरल पिल्स बांटना ।
- परामर्श हेतु उपभोक्ताओं तथा मरीजों को भेजने मे मदद करना ।
- अन्य स्वास्थ्य कर्मियों की सहायता करना ।
- मीटिंगों के आयोजनों में मदद करना ।

2.6 प्रसूति विज्ञान सहायिका: भूमिका, कार्य एवं आचरण संहिता

स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को अनेक भूमिकाओं में कार्य करना होता है । प्रसूति विज्ञान सहायिका से भी यह अपेक्षा की जाती है कि वह प्रसूति स्वास्थ्य मे अपनी सक्रिय भूमिका निभाने के साथ-साथ जनस्वास्थ्य के विभिन्न पक्षो मे भी अपने उत्तरदायित्वों की जानकारी रखें तथा समय एवं आवश्यकतानुसार अपनी उपयुक्त भूमिका का निर्वहन करे ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को स्वास्थ्य सहायक, स्वास्थ्य परीक्षक, परामर्शदाता प्रेरक इत्यादि भूमिकाओं में काम करना पड़ सकता है । आगे दिये गये बिन्दुओं में इन भूमिकाओं से सम्बंधित कार्यों का विवरण दिया गया है:

2.6.1 प्रसूति विज्ञान सहायिका के कार्य

प्रसूति विज्ञान सहायिका का मुख्य कार्य प्रसूति कर्म में एक प्रशिक्षित, तत्पर तथा कर्तव्यपरायण सहायक की भूमिका निभाना है । जैसा कि स्पष्ट किया जा चुका है प्रसूति, प्रजनन स्वास्थ्य का प्रमुख घटक है, अत: प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रजनन स्वास्थ्य एप्रोच रखने की आवश्यकता है । प्रजनन स्वास्थ्य संबंधी एप्रोच से यह अभिप्राय है कि (i) पुरूषों एवं महिलाओं को प्रजनन के बारे में भली भांति सूचित किया जांवे । (ii) उन्हें सुरक्षित एवं प्रभावी गर्भनिरोधक उपाय सुलभ हों । (iii) महिलाएं सुरक्षित ढंग से गर्भधारण कर सकने मे समर्थ हो सकें तथा शिशु को सुरक्षित ढंग से जन्म दे सकें, और (iv) दम्पतियों को अपना बच्चा स्वस्थ रखने के श्रेष्ठ अवसर उपलब्ध हों । इन सभी उद्देश्यो की पूर्ति किसी अकेले स्वास्थ्यकर्मी के बस की बात नहीं है अपितु इसके लिए उपयुक्त नीति निर्माण, श्रेष्ठ प्रबंधन तथा बेहतर क्रियान्वयन आवश्यक है, साथ ही पूरे स्वास्थ्य दल (हेल्थ टीम) के द्वारा टीम भावना सहित कार्य करना आवश्यक है । प्रसूति विज्ञान सहायिका, सरकारी तंत्र की सदस्य न होते हुए भी हेल्थ टीम की महत्वपूर्ण एवं ग्रासरूट स्तर की प्रभावी सदस्या है । अत: उसे अपने कर्तव्यों का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य के अतिरिक्त स्थानीय निवासी होने तथा स्वास्थ्य सेवाओं से विज्ञान सहायिका का जुड़ाव होने के कारण उससे व्यक्तिगत स्वास्थ्य पोषण, संक्रामक रोगों से बचाव. प्राथमिक चिकित्सा, परिवार नियोजन सेवाएं, स्वास्थ्य शिक्षण, रिकॉर्ड एवं रिपोर्ट इत्यादि अनेक कार्यो मे भी सक्रिय भाग लेने की अपेक्षा की जाती है । प्रसूति विज्ञान सहायिका के मुख्य कार्य निम्न प्रकार हैं :

(1) प्रजनन सम्बंधी कार्य

प्रसूति विज्ञान सहायिका की मुख्य भूमिका प्रसूति कर्म में सहायता प्रदान करना है । प्रजनन स्वास्थ्य (प्रसूति क्रिया सहित) से सम्बंधित अन्य कार्य निम्न हैं:

- गर्भ होने की पहचान करना (गर्भ-जांच करना)
- गर्भावस्था एवं प्रसव पूर्व देखभाल
- प्रसवपूर्व (एन्टिनेटल) क्लिनिक की सेवाओं का लाभ गर्भवती महिलाओं तक पहुँचाना ।
- एन्टिनेटल क्लिनिक की व्यवस्था में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (FHW/ANM) की सहायता करना ।
- गर्भावस्था की प्रारम्भिक जटिलताओं की पहचान करना तथा अपनी सीमाओं के अन्तर्गत प्रारम्भिक उपचार देना (यह उपचार चिकित्सक के निर्देशो तथा महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की सलाह के अनुरूप ही होना चाहिये) ।
- एन्टिनेटल देखभाल के अन्तर्गत माता के टेटनस टॉक्साइड टीकाकरण की व्यवस्था करना ।
- गर्भावस्था के तीनों चरणों में माता की देखभाल करना ।
- प्रसव की संभावित तिथि को महिला एवं उसके पारिवारिक जनो को बताना ।
- यदि आवश्यक हो तो, प्रसूता के लिए ट्रांसपोर्टेशन / वाहन की व्यवस्था करना, मार्ग में देखभाल के लिए स्वयं जाना ।
- होम डिलिवरी हेतु "प्रसव स्थल"" का चयन करना, उसकी स्वच्छता तथा प्राईवेसी का ध्यान रखना ।
- प्रसव हेतु प्रसव किट एवं उपकरण तैयार रखना ।
- प्रसव के लक्षणों की पहचान करना ।
- प्रसव हेतु महिला को मानसिक रूप से तैयार करना ।
- प्रसूति में एसेप्सिस का ध्यान रखना । (संक्रमण से बचाव)
- प्रसव की तीनों अवस्थाओं में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / चिकित्सक की सहायता करना ।
- प्रसव में होने वाली जटिलताओं की जानकारी रखना ।
- प्रसव के दौरान प्रसूता को मानसिक सहारा प्रदान करना तथा परिवार के सदस्यों को सही स्थिति से अवगत कराना ।
- नवजात शिशु की तत्काल देखभाल करना ।
- प्रसवोपरान्त उपकरणों एवं स्थान की सफाई करना ।
- प्रसवोपरान्त क्लिनिक (पोस्टनेटल क्लिनिक) की व्यवस्था में सहयोग देना ।
- प्रसवोपरान्त परीक्षण हेतु क्लिनिक पर जाने हेतु महिला को प्रेरित करना ।
- प्रसवोपरान्त किये जाने वाले सामान्य परीक्षणों की जानकारी रखना, परीक्षणों/ जाँच में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / चिकित्सक की सहायता करना ।
- प्रसवोत्तर जटिलताओं की जानकारी रखना तथा उनका प्राथमिक उपचार करना (चिकित्सक / महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के निर्देशन मे) तथा जटिल प्रकरणों में आवश्यकतानुसार महिला को रैफर करना ।

- महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता / चिकित्सक द्वारा प्रसूति के दौरान दिये गये निर्देशों की अनुपालना करना ।

(2) व्यक्तिगत स्वास्थ्य का संरक्षण एवं प्रोत्साहन

प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भवती महिला के "सिर से लेकर पांव"" (Head to Toe) तक के स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिये । यह तथ्य भी गौर करना चाहिये कि गर्भावस्था में शारीरिक स्वच्छता की उपेक्षा से चर्मरोग, एलर्जी आदि की सम्भावनाएं बढ़ जाती हैं । अत: उसकी त्वचा, हाथ, पैर, मुख, बालों आदि की देखभाल में उपेक्षा नहीं करनी चाहिये । इनके अलावा उपयुक्त व्यायाम, पर्याप्त निद्रा, उत्सर्जन इत्यादि पर भी निगाह रखनी चाहिये । शारीरिक स्वास्थ्य के अलावा गर्भावस्था मे मानसिक स्वास्थ्य पर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रजनन स्वास्थ्य के साथ, अपने क्षेत्र के नागरिकों में व्यक्तिगत स्वास्थ्य के महत्व को रेखांकित करना चाहिये तथा ऐसी गतिविधियों को प्रोत्साहन देना चाहिये जो कि व्यक्तिगत स्वास्थ्य के संरक्षण में सहायक हो ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को स्वयं के व्यक्तिगत स्वास्थ्य का स्तर ऊँचा रख कर अन्य व्यक्तियों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिये । (नोट : इसी पाठ्यक्रम की इकाई 3 संदर्भित करें)

(3) अवलोकन एवं परीक्षण सम्बन्धी कार्य

प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रसूति स्वास्थ्य से सम्बन्धित निम्न अवलोकन एवं परीक्षणों की जानकारी होनी चाहिये :

- गर्भवती महिला का वजन, ऊँचाई मापना ।
- मूत्र में शर्करा एवं प्रोटीन एल्ब्युमिन) कीं जांच करना (क्लिनिस्टिक्स या अन्य विधि की सहयता से)
- रक्त की कमी के सामान्य लक्षणों की जाँच करना (इनमें हीमोग्लोबिन मीटर की सहयाता से महिला के हीमोग्लोबिन का स्तर जांचना शामिल है) ।
- तापक्रप, नाडी एवं श्वसन की गणना करना ।
- आवश्यकतानुसार रक्तचाप (विशेषकर सिस्टोलिक) जांचना ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका, इन सामान्य अवलोकन एवं परीक्षणों के सहारे अपने क्षेत्र की जनता को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करने में योगदान कर सकती है । (नोट. इसी पाठ्यक्रम की इकाई 4 संदर्भित करें)

(4) पोषण स्तर बढ़ाना

प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भावस्था, प्रसूति अवधि तथा स्तनपान काल में महिला की आवश्यकतानुसार पोषण प्रदान कराने हेतु वातावरण बनाना चाहिये । पोषण स्तर में बढ़ोतरी से प्रजनन स्वास्थ्य का स्तर ऊँचा उठता है । अत: महिला तथा बालकों के

भोजन में पर्याप्त प्रोटीन, खनिज, विटामिन्स एवं कैलोरी होनी आवश्यक है । (नोटCOAIII में इकाई 3 संदर्भित करें ।)

प्रसूति विज्ञान सहायिका को स्थानीय तौर पर उपलब्ध आहारों की जानकारी रखनी चाहिये तथा कम खर्च में अधिकतम पोषण प्राप्त करने की तकनीक सीखनी चाहिये । आहार रूपान्तरण की विधि से भी उसे परिचित होना आवश्यक है । स्कूल मिड डे मील, आइरन एवं फॉलिक एसिड गोलियों का वितरण, विटामिन A की खुराक इत्यादि पोषण कार्यक्रमो में उसे सक्रिय भाग लेना चाहिये । इसी प्रकार प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भावस्था में होने वाले एनीमिया तथा उसकी रोकथाम के उपायों की जानकारी भी होनी चाहिये ।

(5) भागीदारी विकसित करना

प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रजनन स्वास्थ्य हेतु जागरूकता उत्पन्न करने के लिए "जनभागीदारी" पर अधिक ध्यान देना चाहिये । प्रसूति विज्ञान सहायिका में अच्छी भागीदारी विकसित करने हेतु साक्षात्कार, समन्वय तथा अच्छे व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाने की क्षमता होनी आवश्यक है । गाँवों के अन्दर विभिन्न घटकों के साथ भागीदारी बनाई जा सकती है । (नोट : कृपया तालिका का अवलोकन करें ।)

भागीदार को किस तरह से पहचानें?

आप किस प्रकार की स्वास्थ्य सेवाओं को प्रदान करने की योजना बना रहे हों, इस पर निर्भर रहेगा कि आपके भागीदार कौन से हैं? यही एक चार्ट दिया गया है उसके आधार पर आप निश्चित कर पाओगी कि आप किसे, कब व कैसे भागीदार बनाएं ।

नोट कृपया आगे पृष्ठ पर तालिका का अवलोकन करें ।

स्वास्थ्य सेवाएं	**प्रमुख भागीदार**	**समय सारिणी**
युवावर्ग मे गर्भ निरोधकों के उपयोग को बढ़ावा देना ।	• महिला मण्डल • युवा वर्ग जो पुरूषों को प्रेरणा दें ।	साल भर कर सकते हैं। विशेषत: शादियों के दिनों में कर सकते हैं।
टीकाकरण	• युवा संगठन • अध्यापक वर्ग • पंचायतें • गैर सरकारी संस्थाएं	साल भर कर सकते हैं ।
डिलिवरी के इमरजेंसी केस को वाहन उपलब्ध कराना।	• पंचायतें • गैर सरकारी चिकित्सक • स्थानीय वाहन चालक संघ • महिला मंडल • युवा वर्ग	गंभीर अवस्था वाले मरीजों के लिये एक कार्यवाही योजना बनाना और उन्हें स्थिति के के अनुसार प्राथमिकता देना

(6) परिवार कल्याण सम्बंधी कार्य

- समाज में परिवार नियोजन का महत्व स्थापित करना ।
- प्रजनन समाज योग्य दम्पति पंजिका (Eligeble Couple Register) बनवाने में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता की सहायता करना ।
- गर्भ निरोधक साधनों (कॉपर-टी, गोलियां, निरोध आदि) की उपलब्धता बढ़ाना ।
- छोटे परिवार का आदर्श (Small Family Norm) अपनाने हेतु नागरिकों को प्रोत्साहित करना ।
- डीपो होल्डर का कार्य करना ।
- परिवार नियोजन शिविरों (नसबंदी कैम्पस) की व्यवस्था मे स्वास्थ्य कर्मियों की सहायता करना।

(7) प्राथमिक चिकित्सा देना

प्रसूति विज्ञान सहायिका को यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि उसका कार्य उपचार करना नहीं है बल्कि निर्देशित उपचार में सहायता प्रदान करना हे । फिर भी प्रसूति विज्ञान सहायिका प्राथमिक चिकित्सा में निम्न प्रकार सहायक हो सकती है:

- गर्भावस्था की सामान्य स्थितियों यथा जी घबराना, वमन आदि मे निर्देशित उपचार देना ।
- छोटे घाव इत्यादि की मरहम पट्टी करना ।
- बुखार, न्यूमोनिया आदि मे पैरासिटामोल, कोट्राईमोक्सीजोल, क्लोरोक्वीन की गोलियां देना (यह दवाइयां बिना डॉक्टरी पर्चे के बाजार मे आसानी से उपलब्ध हैं) ।

(8) रिकॉर्ड एवं रिपोर्टिंग

प्रसूति विज्ञान सहायिका अपने क्षेत्र मे स्वास्थ्य विषयक सूचनाओं के संग्रहण एवं रिपोर्टिंग में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है । उसके द्वारा संग्रहित सूचनाएं महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता तथा अन्य स्वास्थ्य कर्मियों के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं । ग्रामीण स्तर पर रखे जाने वाले रिकॉर्ड एवं रिपोर्ट के एकत्रीकरण तथा उनकी देखभाल के अलावा जन्म-मृत्यु रिपोर्टिंग मे प्रसूति विज्ञान सहायिका की प्रभावी भागीदारी होनी अवश्यक है ।

(9) अन्य कार्य

- पोषण, व्यक्तिगत स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, पर्यावरण संरक्षण इत्यादि पर स्वास्थ्य शिक्षण (Health Education) देना ।
- संक्रामक रोगों की स्थिति में स्वास्थ्य प्रशासन को तत्काल सूचित करना ।
- स्वास्थ्य बैठकों. कॉंफ्रेंस स्वास्थ्य मेलों में भाग लेना ।
- राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों मे सक्रिय भाग लेना ।

2.6.2 प्रसूति विज्ञान सहायिका की आचरण संहिता

आचरण (Ethics) ऐसे सिद्धान्त या नियम हैं जिनके द्वारा "सही व्यवहार" निर्देशित होता है । आचरण शब्द के समानार्थक नैतिकता (Morality) का प्रयोग भी किया जाता है । जिसका

आशय भी व्यवहार के सही या गलत होने से लगाया जाता है । अर्थात नैतिकता के नियमो से व्यक्ति का चरित्र, प्रवृत्ति एवं व्यवहार नियन्त्रित होता है । प्रत्येक व्यवसाय की एक आचरण संहिता ((Code of ethics) होती है । प्रसूति विज्ञान सहायिका समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई होने के अतिरिक्त स्वास्थ्य दल की सदस्य भी होती है । अत: उसके आचरणों से समाज का 'स्वास्थ्य व्यवहार' (Health Behaviour) प्रभावित हो सकता है ।

मूलत: परम्परागत जन्म सहायक या दाइयों तथा प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए अलग से कोई आचरण संहिता उपलब्ध नहीं है । अत: स्वास्थ्य अथवा नर्सिंग कार्मियों की आचरणसंहिता के अधार पर इनके कार्य एवं व्यवहार को निर्देशित किया जा सकता है । यहाँ पर प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए उपयुक्त आचार व्यवहार के कुछ सिद्धान्तों एवं नियमों को उल्लेखित किया जा रहा है:

- प्रसूति विज्ञान सहायिका का मूल उत्तरदायित्व प्रजनन स्वास्थ्य का संरक्षण, प्रसूता की पीड़ा कम करना, उसे रोगों से बचाना तथा प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य का सम्वर्द्धन करना है ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने कार्य एवं व्यवहार मे आयु, लिंग जाति, वर्ग, सामाजिक एवं राजनैतिक स्तर पर कोई भेदभाव नही करना चाहिये ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने कार्यक्षेत्र की आबादी को यथा सम्भव अच्छी से अच्छी स्वास्थ्य सेवाएं देने का प्रयत्न करना चाहिये ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को किसी भी महिला के रोग, प्रजनन स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या, गर्भपात, बलात्कार इत्यादि के बारे मे गोपनीयता बनाये रखनी चाहिये तथा महिला के विश्वास को भंग नहीं करना चाहिये । व्यक्तिगत सूचनाओं को इधर- उधर करना विश्वासघात एवं अनैतिक है।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपनी सीमाओं में रहकर ही प्रसूति स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य करने चाहियें तथा स्वयं के द्वारा किये गये कार्यो की जिम्मेदारी स्वीकार करनी चाहिये । उपचार के विषय मे चिकित्सक / महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता के निर्देशो को मानना चाहिये ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को स्वास्थ्य विषयक जन भागीदारी बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिये । बिना जन-सहभागिता के प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य के उद्देश्यो को प्राप्त करना कठिन है । अत: स्वास्थ्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकारी संसाधनों पर निर्भरता कम करते हुए, जन सहयोग को बढ़ावा देना चाहिये ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने क्षेत्र के सभी स्वास्थ्य कर्मियों से अच्छे सम्बन्ध बनाये रखने चाहिये । सभी सरकारी एवं गैर सरकारी स्वास्थ्य संगठनो से भी उसे परिचित होना चाहिए ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपने निजी व्यवहार मे भी अच्छे आदर्शों की पालना करनी चाहिए, कथनी-करनी के भेद से प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा प्रदत्त "स्वास्थ्य शिक्षण एवं स्वास्थ्य संदेश" प्रभावित हो सकता है ।
- प्रसूति विज्ञान सहायिका को ऐसा कोई भी कार्य नहीं करना चाहिये जो अन्य स्वास्थ्य कर्मियों की गरिमा कम करे अथवा प्रजनन या जन-स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक हो ।

- प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य सम्बंधी नवीनतम ज्ञान प्राप्त करते रहना चाहिए ।

2.7 प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग का सह-सम्बन्ध

नर्सिंग के क्षेत्र एवं विषय विस्तृत हैं, प्रसूति विज्ञान भी नर्सिंग का एक महत्वपूर्ण घटक है । प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग का सह सम्बन्ध, इस तथ्य से भली भांति अवगत होता है कि प्रारम्भिक तौर पर नर्सिंग का अर्थ ही प्रसूति कर्म से माना जाता रहा है तथा नर्सो को धाय, दाइयों. परिचारिकाओं के तौर पर लिया जाता था । वर्तमान मे नर्सिंग की अवधारणाएं एवं नवीन के क्षेत्र विकसित होते जा रहे हैं, नर्सिंग मात्र महिलाओं तक सीमित न होकर "पुरूष नर्सिंग भी प्रारम्भ हो गई है । फिर भी नर्सिंग के बिना प्रसूति विज्ञान की कल्पना नही की जा सकती है ।

हमारे देश की आबादी मे महिलाओं का प्रतिशत तथा उच्च प्रजनन दर, बढ़ी हुई मातृ मृत्यु एवं शिशु दर के कारण, प्रसूति कर्म तथा प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य का अधिकांश उत्तरदायित्व नर्सिंग प्रोफेशन पर है. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों मे कार्यरत महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता (FHW) या ए. एन. एम. महिला स्वास्थ्य पर्यवेक्षक, परम्परागत जन्म सहायक, आशा, प्रसूति विज्ञान सहायिका इत्यादि स्वास्थ्य कर्मी प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग से सीधे जुडे हैं । अत: नर्सिंग के एक महत्वपूर्ण अंग के तौर पर प्रसूति विज्ञान एवं नर्सिंग का अभिन्न सह-सम्बन्ध है । (इस सम्बन्ध में प्रथम इकाई मे वर्णित नर्सिंग के इतिहास का भी अवलोकन करे ।)

2.8 सारांश

वर्णित इकाई में प्रसूति विज्ञान का अर्थ, उसके सामाजिक पक्ष, प्रसूति विज्ञान सहायिका की अवधारणा, उद्देश्य, महत्व, स्वास्थ्य दल तथा उसका निर्माण. जनभागीदारी, प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका एवं कार्यों आदि पर जानकारी दी गई है, प्रसूति विज्ञान सहायिका इनके अध्ययन के पश्चात् प्रसूति कर्म में श्रेष्ठ सहायिका की भूमिका निभा सकेगी । साथ ही प्रसूति विज्ञान सहायिका समाज में प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने मे समर्थ हो सके. तभी इस इकाई की विषयवस्तु की सार्थकता सिद्ध हो सकेगी ।

2.9 प्रश्न

1. प्रसूति विज्ञान की परिभाषा एवं क्षेत्र स्पष्ट करिये ।
2. प्रसूति विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली में से कोई 20 शब्दों का वर्णन करें ।
3. प्रसूति विज्ञान सहायिका की परिभाषा दीजिये ।
4. राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 तथा राजस्थान राज्य में इस नीति के उद्देश्यों पर लेख लिखिये।

5. निम्न पर टिप्पणी लिखो
   (अ) प्रसूति विज्ञान सहायिका की आवश्यकता एवं महत्व
   (ब) स्वास्थ्य दल
   (स) जन भागीदारी
6. प्रसूति विज्ञान सहायिका के कार्यो का विस्तार से वर्णन कीजिये ।

इकाई-3 व्यक्तिगत स्वास्थ्य

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 व्यक्तिगत स्वास्थ्य

- 3.2.1 स्वास्थ्य एवं सर्वोत्तम स्वास्थ्य
- 3.2.2 व्यक्तिगत स्वास्थ्य के उद्देश्य
- 3.2.3 व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लाभ
- 3.2.4 व्यक्तिगत स्वास्थ्य हेतु गतिविधियाँ
- 3.2.5 व्यक्तिगत स्वास्थ्य के सिद्धान्त
- 3.2.6 स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक
- 3.2.7 स्वास्थ्य विकार

3.3 आदतें

- 3.3.1 अच्छी आदतों के लाभ
- 3.3.2 आदत एवं लत
- 3.3.3 आदतों का निर्माण

3.4 त्वचा

3.5 बाल

3.6 हांथ एवं पैरों की देखभाल

- 3.6.1 हाथ
- 3.6.2 पैर

3.7 नेत्रों की देखभाल

3.8 मुख आरोग्य एवं स्नान

- 3.8.1 मुख आरोग्य
- 3.8.2 स्नान

3.9 व्यायाम

3.10 निद्रा एवं आराम

3.11 मनोरंजन

3.12 उत्सर्जन

3.13 बहुमूत्रता एवं कब्ज

- 3.13.1 बहुमूत्रता
- 3.13.2 कब्ज

3.14 सारांश

3.15 प्रश्न

3.0 प्रस्तावना

निरोगी शरीर को मनुष्य का प्रथम सुख माना गया है । महिला स्वास्थ्य के विभिन्न पक्षों में गर्भावस्था एवं प्रसूति स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण स्थान है । इस इकाई मे व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लिए आवश्यक सभी घटकों के बारे में जानकारी देने का प्रयास किया गया है तथा उनको प्रसूति विज्ञान सहायिका के उत्तरदायित्वों से जोड़ने का भी प्रयत्न किया है । इकाई के प्रारम्भ मे स्वास्थ्य, सर्वोत्तम स्वास्थ्य, व्यक्तिगत स्वास्थ्य के उद्देश्य एवं सिद्धान्तों की जानकारी दी गई है । इसके पश्चात् स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक. स्वास्थ्य विकार एवं आदतों का महत्व बताया गया है । इकाई के मध्य मे शरीर के विभिन्न अंगों तथा उनकी देखभाल के विषय में विवरण दिया गया है । व्यक्तिगत स्वास्थ्य के अन्य आवश्यक पक्ष निद्रा, आराम, मनोरंजन. उत्सर्जन इत्यादि के विषय में इकाई के अन्त में जानकारी देकर, उनमें प्रसूति विज्ञान सहायिका की भूमिका वर्णित की गई है ।

3.1 उद्देश्य

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विज्ञान से सम्बन्धित प्रत्येक स्वास्थ्य कर्मी अथवा नर्सिंग कर्मी को व्यक्तिगत स्वास्थ्य के विषय में पूर्ण जानकारी होनी आवश्यक है । प्रसूति विज्ञान सहायिका का मातृ स्वास्थ्य से सीधा सम्बन्ध है । इस इकाई में व्यक्तिगत स्वास्थ्य के सभी पक्षों को शामिल कर प्रसूति विज्ञान सहायिका को व्याक्तिगत स्वास्थ्य का अच्छा स्तर प्राप्त करने मे, सहायक बनाने का लक्ष्य है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के विषय में जानकारी अथवा देखभाल में सक्षम हो सकेगी:

1. व्यक्तिगत स्वास्थ्य के उद्देश्य, लाभ एवं व्यक्तिगत स्वास्थ्य हेतु गतिविधियाँ ।
2. आदत एवं अच्छी आदतों के लाभ ।
3. त्वचा, बाल, हाथ एवं पैरों की देखभाल ।
4. नेत्रों की देखभाल ।
5. मुख आरोग्य एवं स्नान ।
6. निद्रा, आराम एवं मनोरंजन ।
7. उत्सर्जन, बहुमूत्रता एवं कब्ज तथा उसका उपचार ।

3.2 व्यक्तिगत स्वास्थ्य

व्यक्तिगत स्वास्थ्य' अथवा व्यक्तिगत आरोग्य का अर्थ स्वच्छता एवं स्वास्थ्य के उन सिद्धान्तों से है जो किसी मनुष्य द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर व्यवहार में लाये जाते हैं । व्यक्तिगत स्वास्थ्य का विषय, अति प्राचीन है तथा प्रत्येक धर्म में व्यक्तिगत स्वच्छता को विशेष महत्व दिया गया है । हाइजीन शब्द की व्युत्पत्ति 'Hygeia या हाइजीआ से हुई है जिसका अर्थ ही 'स्वास्थ्य की देवी' होता है । व्यक्तिगत स्वास्थ्य का पर्यावरण स्वास्थ्य (Environmental Health) से गहरा सम्बन्ध है । व्यक्तिगत स्वास्थ्य के स्तर में वृद्धि से समस्त समुदाय एवं

देश के स्वास्थ्य स्तर में सुधार लाया जा सकता हे । भारत में व्यक्तिगत स्वास्थ्य एवं स्वच्छता की अवधारणा को धार्मिक रीति-रिवाजों से जोड़ गया है । 'पहला सुख निरोगी काया के अनुसार व्यक्तिगत स्वास्थ्य को कम सुख की श्रेणी में माना गया है तथा शरीर-धर्म का पालन करना, व्यक्ति के प्रमुख कर्तव्यों में सम्मिलित किया गया है । यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि व्यक्तिगत स्वास्थ्य. मात्र शारीरिक स्वच्छता एवं रख-रखाव ही नही है बल्कि इसमें मानसिक तथा आध्यात्मिक पक्ष भी अन्तर्निहित है । इस प्रकार व्यक्तिगत स्वास्थ्य का महत्व सर्वोपरि है, जिसकी प्राप्ति हेतु व्यक्ति को स्वयं की देखभाल के प्रति सतर्क एवं सक्रिय रहना आवश्यक है । सरकार एवं विभिन्न स्वास्थ्य एजेन्सियों का भी व्यक्तिगत स्वास्थ्य के अच्छे स्तर की प्राप्ति हेतु एवं उत्तरदायित्व महत्वपूर्ण योगदान एवं उत्तरदायित्व है ।

3.2.1 स्वास्थ्य एवं सर्वोत्तम स्वास्थ्य

स्वास्थ्य से सम्बंधित अनेक विचारधाराएं एवं परिभाषाएं प्रचलन मे हैं । प्राचीन मान्यता के अनुसार स्वास्थ्य रोग से मुक्त अवस्था अथवा रोग से अनुपस्थिति' को कहते हैं । एक स्वास्थ्य विज्ञानी (बेवस्टर) के अनुसार 'स्वास्थ्य, शरीर, मन एवं आत्मा से दृढ विशेषकर शारीरिक रोग एवं दर्द से मुक्त अवस्था है' जबकि ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार, ''मस्तिष्क एवं शारीरिक दृढता की वह अवस्था स्वास्थ्य है जिससे कि शरीर के कार्य, समय पर एवं प्रभावी रूप से निष्पादित होते हैं । ' '

विभिन्न अवधारणाओं के मध्य, 1948 में विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) द्वारा प्रस्तुत स्वास्थ्य की परिभाषा सर्वाधिक मान्य एवं महत्वपूर्ण है, जिसके अनुसार:

“स्वास्थ्य पूर्णत: शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक तंदुरूस्ती की स्थिति है । केवल रोग या अपंगता का अभाव नहीं ।" जबकि वर्तमान में सामाजिक एवं आर्थिक तौर पर सक्रिय जीवन व्यतीत करने की सार्मथ्य को भी स्वास्थ्य में अन्तर्निहित किया गया है ।

यदि उपरोक्त विवेचना के आधार पर सर्वोत्तम स्वास्थ्य (Optimum Health) को परिभाषित करें तो शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से संतुलित एवं ठीक होने की अवस्था को सर्वोत्तम स्वास्थ्य कहते हैं अर्थात् सर्वोत्तम स्वास्थ्य में पूर्ण क्रियाशील होना सम्मिलित है । इसमें आध्यात्मिक पक्ष भी निहित है अर्थात् स्वास्थ्य की प्राप्ति संभव है किन्तु सर्वोत्तम स्वास्थ्य की अवस्था एक काल्पनिकता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में संघर्ष, बीमारियां एवं असफलताएं पाई जोती हैं जिनके कारण व्यक्ति संतुलित नही रह पाता है।

हाल ही के वर्षो में स्वास्थ्य सम्बंधी एक व्यापक अवधारणा विकसित हो रही है जिसके अनुसार जीवन की गुणवत्ता (Quality of life) में सुधार हेतु स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण घटक है । इस संदर्भ मे सर्वोत्तम स्वास्थ्य, मात्र चिकित्सा कार्य से ही सम्बंधित नही है बल्कि यह समुदाय को संचालित करने वाले सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक घटकों से निर्धारित होता है । सर्वोत्तम स्वास्थ्य को आदर्श अथवा श्रेष्ठ स्वास्थ्य भी कहते हैं ।

3.2.2 व्यक्तिगत स्वास्थ्य के उद्देश्य

व्यक्तिगत स्वास्थ्य का मुख्य उद्देश्य सर्वोत्तम स्वास्थ्य (Optimum health) की प्राप्ति है, अन्य हैं :

- स्वयं को रोगों से बचाना ।
- अस्वस्थता को कम करना या इसकी अवधि सीमित करना ।
- स्वास्थ्य की पुनर्स्थापना (Restoration)
- स्वास्थ्य स्तर में वृद्धि करना ।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु ज्ञान एवं सहायता प्रदान करना, तकनीकी व्यक्तियों, स्वास्थ्य कर्मियों एवं संस्थाओ का उत्तरदायित्व है । व्यक्ति को स्वास्थ्य नियमों का पालन करना भी जरूरी है।

3.2.3 व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लाभ

- सुघड़ व्यक्तित्व (मानसिक एवं शारीरिक)
- नेत्र, नाक, कान, मुख, दांत, त्वचा, पैरों इत्यादि की स्वच्छता तथा इनका संक्रमण मुक्त रहना।
- व्यक्ति की प्रतिरक्षा (इम्युनिटी) क्षमता मे वृद्धि तथा विभिन्न संक्रमणों पर नियंत्रण ।
- व्यक्ति की ऊर्जा का परिरक्षण तथा दैनिक कार्यो में उत्साहवर्द्धन ।
- पर्यावरण स्वास्थ्य एवं संरक्षण में योगदान ।
- व्यक्तिगत स्वास्थ्य स्तर में वृद्धि से राष्ट्रीय स्वास्थ्य स्तर में बढोतरी होना ।

3.2.4 व्यक्तिगत स्वास्थ्य हेतु गतिविधियां

- आहार, निद्रा, व्यायाम, में समन्वय तथा संतुलन रखना।
- वजन पर नियंत्रण रखना ।
- शरीर के सभी अंगों की स्वच्छता का ध्यान रखना ।
- औषधि, एल्कोहल (शराब), धूम्रपान इत्यादि के विषय में स्वास्थ्य .नियमों का पालन करना।
- स्वास्थ्यप्रद आदतों का निर्माण एवं अच्छी जीवन शैली अपनाना
- समय समय पर शारीरिक परीक्षण एवं चिकित्सीय जांच का ध्यान रखना 1
- मानसिक समंजन (Mental adjustment) की तकनीक सीखना ।
- टीकाकरण का महत्त्व समझना, स्वयं टीके लगवाना तथा रोगों से बचाव के -उपायों का ध्यान रखना ।
- अस्वस्थ होने पर उपयुक्त उपचार करवाना तथा रोग के पुन: आक्रमण की रोकथाम हेतु उपाय करना ।
- दूसरे व्यक्तियों के लिये संक्रमण का वाहक नहीं बनना ।
- परिवार नियोजन का महत्त्व समझना ।
- व्यक्तिगत स्वास्थ्य से सम्बंधित स्वास्थ्य शिक्षा प्राप्त करना तथा स्वास्थ्य के विषय में जानकारी को नवीनतम बनाये रखना ।

– सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यक्रमों, पर्यावरण संरक्षण इत्यादि मे सहभागिता तथा अन्य व्यक्तियों के व्यक्तिगत स्वास्थ्य की उन्नति मे सहायक बनना ।

निष्कर्षत: हम यह कह सकते है कि व्यक्तिगत स्वास्थ्य, स्वास्थ्य गतिविधियों का केन्द्र बिन्दु है, चूंकि व्यक्ति समाज, परिवार, राष्ट्र की आधारभूत इकाई होता है । अत: व्यक्तिगत स्वास्थ्य पर ध्यान दिये बिना, सामुदायिक स्वास्थ्य स्तर में वृद्धि का लक्ष्य पाना कठिन है ।

3.2.5 व्यक्तिगत स्वास्थ्य के सिद्धान्त

– स्वस्थ त्वचा अनेक रोगों, संक्रमण, तथा चोटों से शरीर को बचाने हेतु प्रथम सुरक्षा दीवार (first safety wall) का कार्य करती है ।
– हर एक व्यक्ति त्वचा एवं अन्य अंगो की बनावट तथा स्वभाव में अतर पाया जा सकता है।
– जीवन के विभिन्न चरणों में त्वचा, बाल, नेत्र, नाखून, दांतों. कार्यक्षमता, श्रवण क्षमता, उत्सर्जन, पाचन, स्मरण शक्ति इत्यादि में परिवर्तन होना स्वाभाविक प्रक्रिया है ।
– व्यक्ति का स्वास्थ्य विभिन्न कारकों से प्रभावित होता है । इनमें सांस्कृतिक विभिन्नताएं, पोषण, व्यायाम, आदतें, पर्यावरण इत्यादि प्रमुख है ।
– गर्भावस्था, प्रसूतावस्था महिला के स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं ।
– व्यक्तिगत स्वास्थ्य के लिए स्वास्थ्यप्रद आदतें सीखी जाती हैं तथा उनमें नियमितता रखनी आवश्यक है ।
– औषधि एवं अन्य उपचारात्मक क्रियाएं स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं ।
– स्वास्थ्य मात्र रोगों से मुक्ति न होकर, शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक तौर पर सकारात्मक रूप से . जीने की एक प्रक्रिया है ।

3.2.6 स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारक

स्वास्थ्य एक बहुआयामी स्थिति है जिसे व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर अनेक कारक प्रभावित करते हैं । उनमें से मुख्य हैं:

- **आनुवांशिकता**

  मानव का स्वास्थ्य उसके द्वारा आनुवांशिकी रूप से प्राप्त जीन संरचना (Genetic Constitution) पर काफी हद तक निर्भर करता है । गर्भधारण के समय ही एक सीमा तक, उसके मानसिक एवं शारीरिक गुण निर्धारित हो जाते हैं । ऊँचाई रक्त समूह, वर्ण इत्यादि जीनों के द्वारा ही तय होते हैं । मानवीय कोशिकाओं में जीन गुणसूत्रों (क्रोमोसोम) से सम्बन्धित होते हैं । सामान्य मानवीय कोशिकाओं में 23 जोड़ी या 46 गुणसूत्र होते हैं । आनुवांशिक आधार पर अनेक व्यक्ति मधुमेह, मिर्गी (Epilepsy) आदि से ग्रस्त होते हैं ।

- **पर्यावरण**

  पर्यावरण का मानव स्वास्थ्य से सीधा सम्बन्ध है । पर्यावरण व्यक्ति के मानसिक, शारीरिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है । स्वास्थ्य के लिए अच्छा पर्यावरण

आवश्यक है । इसे आन्तरिक एवं बाह्य तौर पर वर्गीकृत किया जा सकता है । सामान्यत. पर्यावरण के तीन घटक हैं

(अ) भौतिक पर्यावरण (Physical Environment) : इसके अन्तर्गत जल, वायु आवास, भूमि, प्रकाश एवं पोषण का अध्ययन किया जाता है । इनसे सम्बन्धित प्रदूषण यथा जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण एवं वायु प्रदूषण स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डालते हैं । अत. इन प्रदूषणों को दूर कर, स्वास्थ्य का स्तर सुधारा जा सकता है ।

(ब) जैविक पर्यावरण (Biological Environment) : यह बाह्य वातावरण से सम्बन्धित है । पौधे, पशु-पक्षी, जीवाणु कीड़े-मकोड़े इत्यादि इसमें शामिल हैं । मनुष्य इनके सम्पर्क मे रहता है, अत: जैविक असन्तुलन की स्थिति मे मानव का स्वास्थ्य प्रभावित होता है । जैविक पर्यावरण का मूलमंत्र शांतिपूर्ण जैविक सह-अस्तित्व है ।

(स) सामाजिक पर्यावरण (Social Environment) : इसमें व्यक्ति का सामाजिक जीवन, यथा आदतें, रीति-रिवाज रहन-सहन, मानवीय व्यवहार आदि सम्मिलित हैं । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अत: समाज में समायोजन नहीं होने पर व्यक्ति का स्वास्थ्य प्रत्यक्षत: प्रभावित होता है ।

- **जीवन शैली**

  अच्छे स्वास्थ्य हेतु अच्छी जीवन शैली आवश्यक है । इसमें व्यक्तिगत व्यवहार, सामाजिक एवं सांस्कृतिक आचार निहित हैं । यदि व्यक्ति की जीवन शैली गलत एवं अस्वास्थ्यकारी (यथा धूम्रपान, मद्यपान की आदतें) है तो उसके स्वास्थ्य पर इसका कुप्रभाव पड़ता है । नियमित दिनचर्या जैसे व्यायाम, सोने-उठने की अच्छी आदतें, अच्छे स्वास्थ्य के आधार हैं।

- **आर्थिक एवं सामाजिक कारक**

  सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियां व्यक्ति के स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं । यदि व्यक्ति का सामाजिक जीवन एवं पारिवारिक जीवन शान्तिपूर्ण है तो व्यक्ति का मन एवं तन दोनों ही स्वस्थ रह सकते हैं । यदि आर्थिक स्थितियां व्यक्ति के अनुकूल हों तो उसका पोषण एवं रहन-सहन का स्तर बढ़ने से स्वाभाविक है कि उसका स्वास्थ्य भी उन्नति करेगा । देश के संदर्भ मे व्यक्ति का आर्थिक स्तर प्रति व्यक्ति आय (प्रति व्यक्ति वास्तविक राष्ट्रीय उत्पाद) से मापा जाता है । विकसित देशों की तुलना मे विकासशील एवं अविकसित या अल्प विकसित देशों की प्रति व्यक्ति आय का स्तर काफी नीचा है । उसी अनुपात में इनका स्वास्थ्य स्तर निम्न है ।

- **स्वास्थ्य सेवाएं**

  प्राथमिक स्तर या ग्रासरूट स्तर तक यदि स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करा दी जावें तो मृत्युदर कम हो जावेगी तथा जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy) बढ़ जाती है । स्वास्थ्य सेवाओं में संस्थागत (चिकित्सालय) एवं सामुदायिक दोनों प्रकार की सेवाऐं सम्मिलित हैं, यदि स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धि एवं प्रभावशीलता अपर्याप्त है तो स्वास्थ्य स्तर में गिरावट आना स्वाभाविक है ।

- **साक्षरता प्रतिशत एवं समाज कल्याण सेवाएं**

साक्षरता प्रतिशत एवं स्तर. समानुपाती हैं । शिक्षा के माध्यम से स्वस्थ नागरिकों का निर्माण सम्भव है । अतएव शिक्षा का प्रसार, अच्छे स्वास्थ्य स्तर की प्राप्ति हेतु आवश्यक है । इसी प्रकार समाज कल्याण की विभिन्न योजनाओं जैसे सहकारी प्रणाली, ऋण एवं अनुदान, प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य, महिला एवं बाल विकास, आंगनबाड़ी, अक्षरधारा आदि के प्रभावी क्रियान्वयन से स्वास्थ्य स्तर प्रभावित होता है । वन्दे मातरम, जननी सुरक्षा योजना, ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन इत्यादि से मातृ स्वास्थ्य पर गहरा एवं लाभदायक असर पड़ता है ।

- **पोषण**

  खाद्य पदार्थों की प्रचुरता तथा समाज के कमजोर तबकों तक इनकी पहुँच सुलभ कराके नागरिकों का पोषण स्तर सुधारा जा सकता है । संतुलित आहार, पोषण शिक्षा, विद्यालय अथवा स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम आदि का स्वास्थ्य स्तर बढ़ाने मे प्रभावी योगदान है । उचित पोषण से तन ही नहीं, मन भी स्वस्थ रहता है ।

- **राजनीतिक प्रणाली**

  राजनीतिक नीतियों एवं नेतृत्व का सम्बन्ध प्रत्यक्षत: स्वास्थ्य एवं उससे जुडे कार्यक्रमों से होता है । अत: स्वास्थ्य योजनाओं के निर्माण, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में राजनीतिक नेतृत्व का प्रभावी योगदान रहता है । उदाहरणार्थ यदि औषधि नीति में कोई परिवर्तन कर दिया जावे अथवा स्वास्थ्य बजट में कटौती कर दी जावे तो इनका दुष्प्रभाव नागरिकों के स्वास्थ्य पर पड़ता है ।

इसी प्रकार कृषि एवं उद्योगों के अच्छे उत्पादन से नागरिकों का स्वास्थ्य स्तर प्रभावित होता है । नागरिकों के स्वास्थ्य पर कृषि रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग तथा औद्योगिक प्रदूषण का विपरीत प्रभाव पड़ता है ।

उपरोक्त सभी बिन्दुओं का प्रभाव स्वास्थ्य पर परिलक्षित होता है । अत: अच्छे स्वास्थ्य हेतु व्यक्तिगत स्तर के साथ, सामुदायिक स्तर पर लगातार प्रयत्नों की आवश्यकता है ।

3.2.7 स्वास्थ्य विकार

स्वास्थ्य विकार (Health Defects) ऐसे विकार अथवा विकृतियां हैं जो सामान्य स्वस्थ व्यक्ति में नहीं पाये जाते हैं । ये विकार, व्यक्ति में जन्मजात हो सकते हैं अथवा जीवन काल में उत्पन्न हो सकते हैं । इसी प्रकार से विकार शारीरिक. मानसिक, स्थायी अथवा अस्थायी प्रकृति के हो सकते हैं । इनके कारण व्यक्ति का सामान्य स्वास्थ्य तथा उसकी जीवन शैली प्रभावित हो सकती है।

- **स्वास्थ्य विकारों के प्रकार** - विकार निम्न प्रकार के हो सकते हैं:

(अ) शारीरिक विकार

संक्रमण, कुपोषण, अस्वस्थ जीवन शैली एवं स्वास्थ्य नियमों को नहीं अपनाने, बुरी आदतों, व्यसनों इत्यादि के कारण शरीर में कई विकार या अवगुण उत्पन्न हो सकते

हैं, इस प्रकार के सभी विकारों को 'अस्थायी प्रकृति के शारीरिक दोषों में सम्मिलित किया जा सकता है ।

दीर्घ अस्वस्थता, जन्मजात विकृति (काना, अंधा, बहरा अथवा विकलांग) अथवा दुर्घटनाओं या चोट के कारण शरीर के अंगों को स्थायी क्षति हो सकती है । ऐसे शारीरिक विकारों को 'स्थायी प्रकृति' के दोषों में शामिल किया जा सकता है, प्रसव के समय उचित देखभाल का अभाव भी स्थायी विकलांगता का कारण बन सकता है । इन अवगुणों या विकारों को पूर्णत: ठीक अथवा सही करना कठिन होता है किन्तु कुछ तकनीकों का सहारा लेकर व्यक्ति को इनके साथ ही जीने के लिये समंजन करना सिखाया जा सकता है ।

(ब) मानसिक विकार

मन को शरीर से अलग नहीं किया जा सकता है । अत: शारीरिक अस्वस्थता तथा विकृतियां अनेक प्रकार के मानसिक विकार उत्पन्न कर सकती हैं । इसके विपरीत रोगी मन, शारीरिक विकारों का जनक होता है । मानसिक विकारों मे कुसमंजन (Mal-adjustment) से लेकर मनोस्नायुविकृति (Psychoneurosis) तथा मनोविकृति (Psychosis) सम्मिलित है जिनकी प्रकृति अस्थायी अथवा स्थायी हो सकती है । कुछ विकार आनुवांशिकी रूप रमे भी हस्तांतरित हो सकते हैं ।

- **स्वास्थ्य विकारों को ठीक करना अथवा सुधार के उपाय**

स्वास्थ्य विकारों का निराकरण, उनके प्रकार तथा कारणों के अनुसार किया जाता है । स्थायी प्रकृति के विकारों के लिए योजनाबद्ध तरीके से, रोगी को समायोजन के लिये प्रेरित करना चाहिये । दोषों के सुधार हेतु निम्न उपाय काम में लिये जा सकते हैं

(i) प्राथमिक सुरक्षा (Preliminary protection)

टीकाकरण. दुर्घटनाओं से बचाव, उपयुक्त आहार, अच्छी आदतों का निर्माण तथा स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से अनेक विकारों से बचाव संभव है ।

(ii) उपचार (Treatment)

क्षीणता. असमर्थता, स्थायी विकलांग होने से रोकना तथा प्रसव काल मे कुशल तकनीक से अनेक विकृतियों का निराकरण किया जा सकता है ।

(iii) पुनर्वास (Rehabilitation)

विकलांगता की स्थिति में पुनर्वास प्रदान करना तथा व्यक्ति को समाज में पुन: मान्यता प्रदान करना ।

(iv) सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संरक्षण

विकारों के निराकरण अथवा उनके साथ समायोजन मे सामाजिक संरक्षण एवं मनोवैज्ञानिक सहारा प्रदान किया जाना अति आवश्यक है ।

3.3 आदतें

आदतें व्यक्ति द्वारा स्वत: सम्पन्न एवं अत्याधिक स्वचलित आचरण हैं । आदतों के निर्माण की व्यक्ति मे जन्मजात क्षमता होती है । आदतें ध्यान, चिन्तन अथवा मानसिक प्रकार की या फिर शारीरिक क्रियाओं से सम्बन्धित हो सकती हैं । गुण-अवगुणों के आधार पर आदतें दो प्रकार की, अच्छी अथवा बुरी हो सकती हैं । समय पर सोना एवं उठना, नियमित शौच एवं स्नान, नियमित अध्ययन, इत्यादि अच्छी आदतें हैं । जबकि मद्यपान, धूम्रपान, झूठ बोलना, अपशब्दों का प्रयोग आदि बुरी आदतें मानी जाती हैं ।

3.3.1 अच्छी आदतों के लाभ

(i) समय एवं श्रम की बचत
(ii) सामाजिक सुरक्षा का भाव उत्पन्न होना
(iii) रूग्णता एवं आपातकाल में सहायता मिलना
(iv) अच्छे स्वास्थ्य के रखरखाव में सहायक होना
(v) व्यक्तित्व का निर्माण तथा अच्छे संस्कारों का हस्तांतरण
(vi) चिन्तन, विचार, शिष्टाचार इत्यादि से सम्बन्धित आदतों से व्यक्ति अध्ययन, कार्य, व्यवसाय एवं जीवन में सफलता प्राप्त कर सकता है ।

3.3.2 आदत एवं लत में अन्तर

व्यक्ति जब आदतों का गुलाम हो जावे अर्थात आदतें, उसके व्यक्तित्व पर हावी हो जावें तो ऐसी आदतें, लत अथवा व्यसन का रूप धारण कर लेती हैं । प्राय: बुरी बादतें, धीरे-धीरे व्यसन में परिवर्तित हो जाती हैं । मद्य, धूम्रपान, हेरोईन, अफीम एवं नशे की गोलियों के व्यसनी, इनके प्रमुख उदाहरण हैं । व्यसन अथवा लत का शिकार व्यक्ति येन-केन प्रकारेण अपनी लत की पूर्ति करने के प्रयत्न करता है । उसे नैतिक, अनैतिक मूल्यों का भान नहीं रहता है तथा इनमें प्रवृत व्यक्ति जानकारी अथवा गैर जानकारी मे अपराधों की ओर उन्मुख हो जाता है । व्यसन से छुटकारा दिलाने के लिये इनके बारे में लचीला रूख अपनाना आवश्यक है । वातावरण एवं परिस्थितियों के अनुसार इनके विचारों में बदलाव तथा अच्छी आदतों का अनुपालन करना उपयोगी हो सकता है । अत: आदतें, व्यसन अथवा लत नहीं बनें, इसके लिये व्यक्ति की सोच स्पष्ट एवं नवीन आदतों के निर्माण में सहयोगात्मक होनी चाहिये ।

3.3.3 आदतों का निर्माण

व्यक्ति के जीवन मे आदतों का निर्माण एक सतत् प्रक्रिया है । आदतों के निर्माण में परिवार, विद्यालय एवं समाज का महत्वपूर्ण योगदान रहता है क्योंकि अधिकांश आदतें ऐसी होती हैं जो कि व्यक्ति अपने माता-पिता, निकट सम्बन्धियों, विद्यालय एवं अपने परिवेश से सीखता है । बाल्यकाल में निर्मित आदतें, व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव डालती हैं । यह उल्लेखनीय है कि

अच्छी अथवा बुरी सभी प्रकार की आदतों का निर्माण हो सकता है किन्तु बुरी आदतों का निर्माण रोकने हेतु, उनके स्थान पर अच्छी आदतें अपनाना अधिक उपयोगी रहता है ।

आदतों के निर्माण का सबसे प्रभावी तरीका ' उदाहरण प्रस्तुत करना' है, उदाहरणों को देख बालकों मे आदतों एवं संस्कारों का निर्माण होता है । कहने की अपेक्षा करके दिखाना, बालक में अनुकरण को प्रात्साहित करता है । कुछ सस्थाऐं अच्छी आदतों के निर्माण हेतु संस्कार केन्द्र' का संचालन करती है । आदतों के निर्माण में महत्वपूर्ण अन्य तत्व हैं:

- नवीन आदत को उत्साह से प्रारम्भ करना ।
- अपवाद की अनुपस्थिति अर्थात् बिना नागा के नियमितता से वही कार्य करना ।
- नवीन आदत को स्वेच्छा से बार-बार करना आदतों के निर्माण में बल प्रयोग नहीं करना चाहिये तथा बालको की क्षमता के बाहर के बाहर किसी आदत को अपनाने के लिये उसे बाध्य नहीं करना चाहिये । उन्हें स्वास्थ्य की आदतों के अतिरिक्त सामाजिक व्यवहार सम्बन्धी आदते भी सिखाया जाना आवश्यक है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को भी गर्भावस्था के दौरान माता को अच्छी आदतों के लिए प्रेरित करना चाहिये ।

- **बुरी आदतों को छोड़ना**

बुरी आदतों को छोड़ना (Leaving Bad Habits) अथवा उनका शीघ्र त्याग किया जाना अत्यन्त जरूरी है । निम्न तरीकों से बुरी आदतों का त्याग किया जा सकता है:

(i) ऐच्छिक अभ्यास द्वारा आदत छोड़ना, जिस आदत का त्याग करना हो उसी आदत को जानबूझ कर पुन: करना ।

(ii) अरूचि उत्पन्न करके या अति व्यवहार से आदत छोड़ना ।

(iii) प्रतिपक्ष भावना-इसमें आदत का विश्लेषण कर उसको छोड़ा जाता है ।

(iv) अन्य आदतों का निर्माण-पहले वाली आदत के स्थान पर दूसरी आदत अपनाना ।

- **जीवन की उन्नति में सहायक कुछ महत्वपूर्ण आदतें निम्न प्रकार हैं.**

(i) निद्रा, अध्ययन एवं व्यायाम की नियमितता

(ii) व्यक्तिगत स्वास्थ्य की देखभाल सम्बन्धी आदतें जिनमें त्वचा, नेत्र, कान, नाक, बाल तथा दाँतो की दैनिक सफाई सम्मिलित है ।

(iii) भोजन समय एवं आहार सम्बन्धी आदतें ।

(iv) मूत्राशय एवं मल उत्सर्जन सम्बन्धी आदतें ।

(v) वस्त्रों की सफाई तथा सौन्दर्य साधनों के प्रयोग की अच्छी आदतें ।

(vi) सामान्य शिष्टाचार, अच्छे विचार एवं चिन्तन की आदतें इनमें उदारता, निस्वार्थता, परोपकार, विश्वास एवं ईमानदारी से सम्बन्धित आचार-व्यवहार तथा भावनाऐं सम्मिलित हैं।

3.4 त्वचा

त्वचा शरीर का सुरक्षात्मक अंग है । त्वचा की दो परतें बाह्य त्वचा (Epidemis) एवं त्वचा (Dermis) होती हैं । इन दोनों परतों के मध्य मे स्वेद एवं वसामय ग्रन्थियां पाई जाती हैं ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भवती महिला की त्वचा की स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है क्योंकि इसके अभाव मे अनेक चर्मरोग जैसे खुजली, सक्रमण, फोडे, फुसियां आदि हो सकते हैं जो कि सफल प्रसव एवं गर्भावस्था मे बाधाएं उत्पन्न कर सकते हैं । अनेक गर्भवती महिलाएं त्वचा की स्वच्छता का सही ध्यान नहीं रख पाती हैं तथा त्वचा रोग से ग्रस्त पाई जाती हैं ।

अत: प्रसूति विज्ञान सहायिका को त्वचा के प्रकार, त्वचा के कार्य तथा देखभाल की जानकारी अवश्य होनी चाहिए । यह संक्षेप में निम्न प्रकार है

(अ) त्वचा के प्रकार

- **सामान्य** त्वचा न तो अधिक तैलीय होती है और न ही अधिक शुष्क होती है ।
- **शुष्क** त्वचा में तैलीय ग्रन्थियाँ कम सक्रिय होती हैं ।
- **तैलीय** त्वचा में तैलीयता की मात्रा ज्यादा पाई जाती है अत: इससे त्वचा चिपचिपी दिखाई देती है ।
- **मिश्रित** त्वचा कहीं तैलीय तो कहीं शुष्क होती है ।

(ब) त्वचा के कार्य

- **संरक्षणात्मक कार्य :** स्वस्थ त्वचा शरीर में संक्रमित पदार्थों तथा कीटाणुओं को प्रविष्ट होने से रोकती है ।
- **ताप नियमन** पसीना उतसर्जित करके त्वचा शरीर का ताप नियंत्रित रखती है ।
- **संवेदनात्मक कार्य** : त्वचा के द्वारा ही व्यक्ति के शरीर मे शीत, गर्मी. स्पर्श आदि संवेदनाओं का आदान प्रदान होता है।

  इनके अतिरिक्त त्वचा पसीने के द्वारा शरीर के अपशिष्ट उत्पादों को बाहर निकालती है तथा विटामिन डी का संश्लेषण करती है ।

(स) त्वचा की देखभाल

सामान्य व्यक्तियों तथा गर्भावस्था मे दुर्गन्ध से बचाव के लिए तथा अच्छे स्वास्थ्य के लिए त्वचा की स्वच्छता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, जिसके मुख्य बिन्दु निम्न प्रकार हैं ।

- **उपयुक्त स्नान**

  त्वचा की स्वच्छता के लिए आवश्यक है कि नियमपूर्वक प्रतिदिन स्नान किया जाए । गर्मियों में ठण्डे जल तथा सर्दियों में गुनगुने पानी से स्नान करना चाहिए । स्नान हेतु उपयुक्त साबुन शैम्पू तथा उबटन आदि का प्रयोग किया जा सकता है । स्नान के बाद स्वच्छ तौलिये से शरीर को अच्छी तरह से पौंछना चाहिए । (नोट: आगे के पृष्ठों में स्नान संदर्भित करें)

- **स्वच्छ वस्त्र**

  प्रतिदिन स्वच्छ वस्त्र पहनने चाहिएं । अंत:वस्त्रों की सफाई का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए । वस्त्रों का चयन मौसम के अनुसार किया जाना चाहिए ।

– **अन्य**

दुर्गन्ध नाशक पाउडर का प्रयोग जैसे; यूडी कोलोन आदि का प्रयोग किया जा सकता है । त्वचा के स्वस्थ होने के लिए प्रतिदिन संतुलित आहार का सेवन किया जाना चाहिये । त्वचा की कोमलता बनाए रखने के लिए सरसों, नारियल अथवा जैतून के तेल से मालिश की जानी चाहिए ।

नाक में अंगुली नहीं डालें

कानों को कुरेंदे नहीं

चित्र : व्यक्तिगत स्वास्थ्य के कुछ नियम

3.5 बाल (Hairs)

स्वस्थ बाल या केश राशि व्यक्ति के अच्छे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के परिचायक हैं । प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भवती एवं प्रसूता के बालों की देखभाल हेतु सतर्क रहना चाहिये क्योंकि गर्भ एवं प्रसूति के कारण महिलाऐं अपने बालों की ओर पर्याप्त समय नहीं दे पाती हैं । इस के अलावा जनसामान्य को भी बालों की देखभाल हेतु प्रेरणा देना जरूरी है । बालों की देखभाल के अभाव में सिर में रिंग वर्म, स्कैबीज, जूं इत्यादि अनेक संक्रमण उत्पन्न हो सकते हैं ।

(अ) स्वच्छता

बालों की सफाई का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये । साफ एवं कुनकुने जल से बालों को धोना चाहिये । बालों की स्वच्छता हेतु पुरूषो को प्रतिदिन, जबकि महिलाओं को सप्ताह में कम से कम 2 बार बालों को धोना जरूरी है । बालों को धोने में प्राकृतिक पदार्थो (यथा रीठा, आंवला शिकाकाई आदि) का उपयोग अधिक लाभदायक रहता हे अथवा साबुन, शैम्पू ऐसे हों जो कि बालों से प्राकृतिक तेल को नही हटावें । बालों की मालिश हेतु नारियल, तिल्ली, सरसों अथवा बादाम का तेल अच्छा रहता है । मालिश से बालों की मजबूती बढ़ती है तथा सिर की त्वचा में भी उपयुका रक्त संचार होता है। बालों को काटने अथवा संवारने हेतु प्रत्येक व्यक्ति को अपनी अलग कंघी तथा ब्रश का प्रयोग करना चाहिये ।

बालो की देखभाल

(ब) रूसी से बचाव

रूसी (डेन्ड्रफ) बालों के पतले होने, गंजे होने व झड़ने का मुख्य कारण है । रूसी से बचाव के लिए आवश्यक है कि बालों को धूल तथा गंदगी से बचाया जाए । तेल

मालिश, बालों का वाष्प उपचार भी रूसी से बचाव करते हैं । चिकित्सक से परामर्श के पश्चात् उपयुक्त शैम्पू का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

(स) शिरोवल्क के संक्रमणों से बचाव

जूं रूसी आदि से शिरोवल्क में संक्रमण उत्पन्न हो सकता है जो बालों के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता है अत: सिर की त्वचा में होने वाले संक्रमणों का शीघ्र निदान तथा उपचार किया जाना चाहिये । जूंओं का नाश करने के लिए जूं नाशक शैम्पू जैसे नाइसिल, मेडीकर तथा डी.डी.टी. पाउडर आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

(द) पर्याप्त पोषण

संतुलित आहार की कमी से बाल पतले, शुष्क तथा कमजोर हो जाते हैं अत: संतुलित आहार का सेवन किया जाना चाहिए । भोजन में विटामिन बी समूह की प्रचुरता होनी चाहिए ।

(य) स्वस्थ आदतों का विकास

स्वस्थ आदतों के विकांस द्वारा भी बालों की समुचित देखभाल संभव है । नाखूनों से सिर खुजाना हानिकारक शैम्पू डाई आदि का अधिक मात्रा में प्रयोग, मानसिक अवसाद आदि अस्वास्थ्यकर दशाओं से मुक्ति पा कर भी बालों के स्वास्थ्य में वृद्धि की जा सकती है ।

(र) देखभाल सम्बन्धी अन्य उपाय

- बालों मे डाई (बालों को काला करने के साधन), रंग आदि का प्रयोग अत्यधिक सतर्कता पूर्वक किया जाए ।
- बालों को चोट से बचायें ।
- गीले बालों में कंघी नहीं की जाऐ ।
- तेज दांतों वाले ब्रश अशया कंघे का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए ।
- आवश्यकतानुसार त्वचा एवं बालों के विशेषज्ञ से परामर्श करते रहना चाहिए ।

3.6 हाथ एवं पैरों की देखभाल

3.6.1 हाथ

हाथ मनुष्य की समस्त गतिविधियों के संचालक हैं । स्वच्छ व स्वस्थ हाथ सम्पूर्ण व्यक्तिगत स्वास्थ्य हेतु आवश्यक हैं । अतएव एक कुशल प्रसूति विज्ञान सहायिका को हाथों की स्वच्छता के विषय मे जानना आवश्यक है । एक मात्र हाथों की स्वच्छता तन्ग सही तरीके से -सफाई के द्वारा अनेक रोगों के संक्रमण से बचाव संभव है ।

हाथों की देखभाल - हाथो की देखभाल हेतु उपाय अपनाने चाहिएं

(अ) स्वच्छता: भोजन बनाने से पूर्व, भोजन करने से पूर्व तथा पश्चात और शौच के बाद किसी कीटाणनाशक साबुन से भलीभांति हाथों को धोना चाहिए । हाथ धोने के लिए सही विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए ! इस हेतु हाथों को किसी अच्छे साबुन से रगड़ कर धोना

चाहिए । पानी का प्रवाह कम संदूषित भाग से अधिक गंदे या संदूषित भाग रही ओर रखना चाहिए, अर्थात कोहनी से नीचे की ओर रखा जाऐ (कोहनी की तुलना मे हाथ अधिक संकमिंत होते हैं ।) नाखूनों को हमेशा काट कर छोटा रखना चाहिए. नाखूनों मे जमा मैल निकालने के लिए ब्रश का उपयोग करना चाहिए । हाथ धोने के पश्चात्, उन्हें हमेशा स्वच्छ तौलिए से पौंछना चाहिए । हाथ धोने में पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए ।

(ब) संक्रमण से बचाव: हाथ खाने., पीने की वस्तुओं, उपकरण, वस्त्र, मूत्र तथा मल त्याग के बाद, रोगी व्यक्तियों के स्पर्श आदि कारणों से संक्रमित हो सकते हैं । इन संक्रमित हाथों से कुछ भी खाने अथवा पीने पर रोगकारक जीवाणु मुख के द्वारा शरीर मे प्रवेश कर रोग उत्पन्न कर सकते हैं, अत: हाथों को संक्रमण से बचाने हेतु उपयुक्त कीटाणु नाशक या एन्टीसेपिटक लोशन का प्रयोग किया जाना आवश्यक हैं ।

(स) स्वास्थ्य शिक्षा: हाथों की स्वच्छता के बारे में बच्चों को प्रारम्भ से ही शिक्षा दी जानी चाहिए । प्रभावी स्वास्थ्य शिक्षण हेतु हाथ धोने की प्रक्रिया को, रोगी तथा उसके सम्बन्धियों के सामने प्रदर्शित करना' चाहिए ।

(द) अन्य उपाय: हाथों को संक्रमण से बचाने के लिए आवश्यक है कि संक्रमित रोगी या संक्रमित या संक्रमित पदार्थ को छूने से पहले हाथों में दस्ताने पहन लिए जावें । हाथों को 15 दिन में एक बार मैनिक्योर किया जावे । इससे हाथ सुन्दर, कोमल तथा स्वच्छ हो जाते हैं ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका हाथों दो होने वाले संक्रमणो को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है । उसे स्वयं अपने हाथी की -स्वच्छता का ध्यान रख कर, दूसरों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिये । गर्भवती महिला को भी स्पष्ट शब्दों में हाथों की स्वच्छता का महत्व बताना जरूरी है ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि स्वच्छ हाथ, सम्पूर्ण स्वास्थ्य को कुंजी हैं । अत: हाथों की स्वच्छता का हमेशा ध्यान रखा जाऐ ।

3.6.2 पैर

मनुष्य की गतिशीलता के लिए पैरों का होना आवश्यक है । शरीर के वजन को संभालने तथा संतुलन बनाए रखने के लिए पैर जरूरी हैं । चिकित्सा विज्ञान में पैरों की महत्ता के कारण ही पैरों से सम्बन्धित एक विशिष्ट शाखा का अध्ययन किया जाता -है जिसे पोडियाट्रिक मेडिसिन (Podiatric Medicine) कहा जाता है । इसके अन्तर्गत पैरों की देखभाल से सम्बन्धित सभी पहलुओं को संम्मिलित किया जाता है ।

- **पैरों की देखभाल**

(अ) स्वच्छता:

पैरों की यदि ठीक सफाई नहीं की जाऐ तो पैर संक्रमित हो सकते हैं । कीचड़ अथवा मल मे नंगे पैर चलने से अंकुश कृमि नामक रोग हो सकता है जो कि पैर की त्वचा से होकर शरीर में संचारित होता है । इसके अलावा गंदगी से यॉज (Yaws), एथलीट्स

फुट जैसे - संक्रमण पैर की त्वचा में हो सकते हैं । इनसे बचाव के लिए आवश्यक है कि पैरों की समुचित सफाई की जाऐ । पैरों की स्वच्छता हेतु निम्न उपाय अपनाए जा सकते हैं :

- प्रतिदिन नहाते समय पैरों को रगड़कर साफ करना चाहिए । बाहर से आने पर पैरों की सफाई की जानी चाहिए ।
- अंकुश कृमि से बचाव हेतु सुलभ शौचालय या स्वच्छ शौचालय का प्रयोग करना चाहिए व नंगे पैर कीचड़ आदि में नहीं जाना चाहिए । खुले में शौच करना, बीमारियों को निमंत्रण है।
- पैरों की उंगलियों के मध्य की, जगह को ब्रुश से अच्छी तरफ साफ करना चाहिए ।
- महीने में दो बार पेडिक्योर करना चाहिए ।
- बिवाई या दरारे होने पर दूध की मलाई, नारियल तेल या मोम का प्रयोग करना चाहिए ।
- पैरों को धूल, गंदगी एवं मैल से मुक्त रखना चाहिए ।

(ब) सुरक्षात्मक उपाय

- जूतों की फिटिंग ठीक होनी चाहिएं । जूते पर्याप्त चौड़े होने चाहिएँ । जूतों में पैरों की सभी उगलियाँ समतल एवं सीधी आनी चाहिएँ ।
- ज्यादा ऊंची एडी (हील) के जूतों, चप्पलों का प्रयोग नहीं करना चाहिए । जूतों के तल, घिसे हुए नहीं होने चाहिएँ ।
- जूते, चप्पल आरामदायक होने चाहिएँ । काटने या फफोले उत्पन्न करने वाले नहीं होने चाहिएँ ।
- मोजे साफ होने चाहिए तथा अधिक तंग नही होने चाहिएँ । मोजों को प्रतिदिन धोना आवश्यक है।

(स) रोगों से पैरों का बचाव

- फाइलेरिया या सूत्रकृमि से बचाव हेतु मच्छरों पर नियन्त्रण रखना चाहिए ।
- पैरों में सूजन होने का तात्पर्य है शरीर का रोगों से ग्रसित होना । अत: उचित चिकित्सक से तुरन्त परामर्श किया जाना चाहिए । आवश्यकतानुसार पैरों के नीचे ताकिया लगा कर सोना चाहिए ।
- अति स्वेदलता रोग, जिसके अन्तर्गत पैरों में अत्यधिक पसीना आता है तथा पसीने के साथ दुर्गन्ध भी आती है । इन दोनो ही रोगों से बचाव हेतु आवश्यक है कि पैरों को पर्याप्त साफ रखा जाए । पैरों को सुबह एवं रात को दोनों समय साबुन से धोना चाहिए । बोरिक एसिड युक्त टेलकम पाउडर का प्रयोग किया जा सकता है । फार्मेलिन के घोल में पैरों को 15 मिनट तक डुबोकर रखना भी ठीक रहता है ।

(द) अन्य उपाय

- थकान की स्थिति में कुनकुने पानी में नमक डालकर कुछ समय तक पैरों को इसमें डुबोकर रखने से आराम मिलता है।
- प्रात: काल नंगे पैर हरी दूब पर चलना लाभप्रद रहता है ।
- पाद चिकित्सक (Podiatrician) से समय-समय पर पैरों की देखभाल हेतु परामर्श करते रहना चाहिए ।

3.7 नेत्रों की देखभाल

नेत्र संसार को देखने के साधन हैं । नेत्र ही मन के भावों की अभिव्यक्ति के माध्यम हैं । नेत्र मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य को दर्शाते हैं । यदि नेत्रों की पर्याप्त देखभाल नहीं की जाऐ तो व्यक्ति दृष्टि दोष तथा अन्धता की ओर अग्रसर होता है ।

संक्रमण, प्रतिकूल परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न नेत्र रोगों का कारण बनती हैं । जैसे संक्रमण से नेत्र पलक प्रदाह, पलक फुंसी, रोहे (ट्रेकोमा), नेत्र श्लेष्मा शोथ आदि नेत्र रोग हो सकते हैं । कुपोषण के कारण रतौंधी, शुष्क नेत्र प्रदाह आदि नेत्र रोग हो सकते हैं । आँखों पर चोट लगने से चक्षुपटल घाव रक्तस्त्राव आदि विसंगति उत्पन्न हो सकती हैं । इसके अतिरिक्त निकट दृष्टि दोष, दूर दृष्टि दोष, नेत्र फ्लू मोतियाबिन्द, ग्लायकोमा आदि नेत्र रोग विविध प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रभाव से उत्पन्न हो सकते हैं ।

- **आँखों की देखभाल**

  आँखों के स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त मात्रा में पोषण लिया जाना चाहिये । आँखों की सफाई प्रतिदिन की जाऐ, धूल व धुएँ से बचाव किया जाए तथा नियमित नेत्र परीक्षण किसी योग्य चिकित्सक से करवाया जाए ।

  सामान्यत: निम्नलिखित उपायों को प्रयोग में लाकर आंखों की देखभाल की जा सकती है

(अ) संक्रमण की रोकथाम: संक्रमण के कारण रोहे (ट्रेकोमा), नेत्र श्लेष्मा शोथ (कांन्जिक्टिवाइटिस) नेत्र पलक प्रदाह आदि रोग हो सकते हैं । संक्रमण से बचाव हेतु आवश्यक है

- नेत्र की लालिमा, रक्त स्त्राव आदि पर तत्काल ध्यान दिया जाए ।
- संक्रमित वस्त्रों जैसे रूमाल, तौलियों आदि से आँखें साफ नहीं करनी चाहिए ।.
- संक्रमण होने पर आँखों की शीघ्रता से चिकित्सकीय जाँच तथा उपचार करवाना चाहिए ।

(ब) नेत्रों की सुरक्षा: तनाव तथा चोटों से नेत्रों की सुरक्षा करनी चाहिए । इस हेतु आवश्यक है कि:

- यात्रा के समय रेत, कोयला, किरच तथा आँधी एवं तीव्र वायु प्रवाह से नेत्रों को बचाना चाहिए ।
- तीव्र प्रकाश सूर्य की किरणों, चमक आदि की सीधी तथा तीव्र रोशनी आँखो में नहीं जानी चाहिए।
- दीपावली पर पटाखों, फुलझड़ियों से तथा होली पर रंग, गुलाल, पिचकारी आदि से नेत्रों को बचाना चाहिए ।
- बेल्डिंग तथा इसी प्रकार का कार्य करते समय नेत्रों पर सुरक्षात्मक चश्मा लगा लेना चाहिए।
- क्रिकेट, गिल्ली-डंडा, तीर कमान जैसे खेल, खेलते समय विशेष सतर्कता बनाऐ रखनी चाहिए।
- मच्छर, चेंपा अथवा किसी हानिकारक पदार्थ के नेत्र में चले जाने पर नेत्रों को रगड़ना नहीं चाहिए । साफ बर्तन में पानी, लेकर उसमें आँखों को डुबोना चाहिए । जिससे वह पदार्थ

पानी में आ जाए, इस क्रिया से भी विजातीय पदार्थ बाहर न आए तो किसी योग्य चिकित्सक से परामर्श लेना चाहिए ।

- आँखो को अत्यधिक तनाव से बचाने के लिए आवश्यक है कि पढते समय पर्याप्त तथा उपयुक्त प्रकाश की व्यवस्था हो । प्रकाश बायीं ओर तथा पीछे से आए तथा पाठ्य सामग्री नेत्र से लगभग 30 से 45 सेमी. की दूरी पर हो । लेटकर तथा यात्रा (बस, रेल, रिक्सा) के समय पढने की आदत को त्यागा जाए तथा लगातार अध्ययन के बीच आंखों को कुछ समय के लिए पलकें बंद कर आराम दिया जाए ।

(स) संतुलित आहार : आंखों के अनेक रोगों का कारण कुपोषण है । विटामिन ए की कमी से रतोंधी, जीरोसीस (श्लेष्मा की शुष्कता) आदि रोग हो सकते हैं । अत: भोजन में विटामिन ए के स्त्रोंतों यथा हरी सब्जियाँ, पीले फल, अण्डे दूध, मक्खन आदि को सम्मिलित किया जाना चाहिए । बच्चों को विटामिन ए का घोल तथा कैप्सूल दिए जाने चाहिए ।

(द) नियमित नेत्र परीक्षण

- नेत्रों की नियमित रूप से योग्य चिकित्सक द्वारा जाँच करवाई जानी चाहिए । ऑंखों से पानी आना, मवाद आना, पलकों मे दर्द अथवा सूजन, धब्बे, सिरदर्द, नेत्रों की थकान आदि की शिकायत होने पर चिकित्सक से परामर्श करें ।
- भेंगापन होने पर नेत्रों का व्यायाम अथवा शल्य चिकित्सा करवायी जानी चाहिए ।
- आयु वर्ग के अनुसार निम्न प्रकार से आंखों की नियमित जांच आवश्यक है

  10 वर्ष की आयु तक – प्रतिवर्ष

  40 वर्ष की आयु तक – 3 वर्ष में एक बार

  40 वर्ष के उपरान्त – प्रत्येक 2 वर्ष में एक बार

(य) नवजात शिशु की आंखों की देखभाल : नवजात शिशु में प्राकृतिक रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होती है । अत: प्रसूति विज्ञान सहायिका के लिए आवश्यक है कि वह शिशु को नेत्र संक्रमण से बचावे । प्रसव के समय तथा प्रसव के बाद नेत्रों को संक्रमण से बचाकर रखे । स्नान कराते समय नेत्रों की सुरक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया जाना आवश्यक है । विसंक्रमित गीले फोहे से नेत्रों को साफ किया जाना चाहिए । नेत्र स्त्राव होने पर अथवा आँख चिपकने पर चिकित्सक के निर्देशों के अनुसार कार्य करना चाहिए ।

(र) अन्य उपाय

- स्नान के समय आँखों को साबुन एवं शैम्पू के हानिकारक प्रभाव से बचाना चाहिए ।
- नेत्रों के आसपास की त्वचा की सफाई का ध्यान रखना जरूरी है ।
- गंदे हाथों, तौलियों रूमाल अथवा अन्य वस्त्रों से नेत्रों को नहीं छूना चाहिए ।
- प्रातःकाल नेत्रों का व्यायाम करना भी लाभप्रद रहता है । (जैसे पलकों को दस बार झपकाना)
- गुलाब जल, त्रिफला चूर्ण का पानी आदि घरेलू एवं प्राकृतिक साधनों से आँखों की सफाई की जा सकती है ।
- काजल, सुरमा का प्रयोग नेत्रों के लिए नुकसानदायक होता है ।

– स्कूल स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम में भागीदारी के समय स्वास्थ्य कर्मियों को विद्यार्थियों के नेत्र परीक्षण एवं नेत्रों की स्वच्छता पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए

3.8 मुख आरोग्य एवं स्नान

3.8.1 मुख आरोग्य

मुख गुहा की स्वच्छता को मुख आरोग्य के रूप में व्यक्त किया जाता है । मुख गुहा निम्न भागो से घिरी रहती है:

– सामने की ओर होंठ
– पीछे की ओर ग्रसनी
– बगल में गाल
– ऊपर की ओर तालु की अस्थियाँ
– तल पर मैंडिबल्स (जबडें)

इस गुहा में जीभ, दांत, मसूडे, तथा लार ग्रन्थियों के निकास छिद्र भी होते हैं । सामान्यत: मुख आरोग्य मे दांत, मसूडे, एवं जीभ की स्वच्छता तथा स्वास्थ्य को सम्मिलित किया जाता है । मुख अनेक रोगों के जीवाणुओं का प्रवेश द्वार है । मुख की समुचित स्वच्छता के अभाव से अनेक रोग हो सकते हैं -जैसे दन्तक्षरण या दांतों मे कीडा लगना, पाअरिया रक्तस्त्राव युक्त मसूडे, दुर्गन्धयुक्त श्वास, दंत मैल का निर्माण आदि ।

चित्र : प्रत्येक भोजन के बाद कुल्ले करना

- **दांतों की देखभाल :** मुख आरोग्य हेतु दांतों की देखभाल पर ध्यान देना आवश्यक है, जिसके मुख्य बिन्दु निम्न प्रकार हैं -

(अ) स्वच्छता: दिन में कम से कम दो बार दांतों की सफाई की जानी चाहिए । प्रातःकाल तथा रात में शयन से पूर्व ब्रश अथवा मंजन किया जाना चाहिये । उपयुक्त ब्रश (न तो अधिक कठोर और ना ही ज्यादा नर्म) तथा उपयुक्त मंजन का प्रयोग किया जाना चाहिए । नीम या बबूल की दातौन का प्रयोग किया जा सकता है । ब्रश से दांतों की सभी सतहों यथा अंदर की सतह दांयी, बायीं तथा निचली तथा उपरी सतहों पर सफाई की जानी चाहिए । चॉकलेट, चीनी तथा अन्य मीठे पदार्थो के सेवन के बाद कुल्ला किया जाए । बेहतर यही होगा, अधिक मात्रा मे इन पदार्थो का सेवन नहीं किया जाए ।

चित्र :दांतों की सफाई करना

(ब) चिकित्सकीय जांच : वर्ष में कम से कम दो बार दांतो की जांच दंत विशेषज्ञ से करवानी चाहिए ।

(स) स्वास्थ्य शिक्षा : 'गर्भवती माताओं एवं बच्चों को प्रारम्भ से ही दांतों की देखभाल, दंत रोगों के कारण तथा बचाव सम्बंधी जानकारी दी जानी चाहिए । यह जानकारी क्लिनिकों, प्रचार माध्यमों तथा विद्यालय स्वास्थ्य कार्यक्रमों द्वारा दी जा सकती है ।

(द) फ्लोराइड का प्रयोग : फ्लोराइड दंत क्षरण रोकता है । पानी में फ्लोराइड की मात्रा 0.5 से 0.8 मि.ग्रा. प्रतिलीटर होनी चाहिए । इसके लिए फ्लोराइड युक्त मंजन का प्रयोग किया जा सकता है । यह भी ध्यान रखना चाहिये कि फ्लोराइड की अधिक मात्रा नुकसानदायक हो सकती है ।

(य) समुचित आहार : ऐसे आहार का प्रयोग किया जाए जिसमें विटामिन सी (आंवला, नीबू आदि) की पर्याप्त मात्रा हो । ककडी, सेव, गाजर, खीरा आदि का भी अधिकाधिक मात्रा में सेवन किया जाए । जबकि चॉकलेट, च्युइंगम, मिठाई का सेवन कम मात्रा में तथा सावधानीपूर्वक किया जाए ।

(र) अन्य उपाय:

(1) यदि कृत्रिम दांतों का प्रयोग किया जा रहा है तो आवश्यक है कि भोजन के बाद नकली दांतों को ब्रश से साफ किया जाए । इनको कभी भी उबलते पानी में नही डालना चाहिए अपितु खाने के सोडे के घोल में या किसी प्रक्षालक में रखना चाहिए । इनको सोने से पूर्व निकालकर सोना चाहिए ।

(2) पान, तम्बाकू जर्दा, सुपारी, धूम्रपान आदि को मुख आरोग्य हेतु त्यागना आवश्यक है ।

(3) बचपन से ही दांतों सम्बंधी स्वस्थ आदतों का विकास किया जाना चाहिए ।

(4) आवश्यकतानुसार मुख प्रक्षालक (माउथ वाश) तथा ईलायची आदि का सेवन किया जाए ।

(5) सोते समय बच्चों के मुंह में बोतल या चूसनी आदि का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए । यह क्रिया दंतक्षरण को बढावा देती है ।

3.8.2 स्नान

व्यक्तिगत स्वास्थ्य में स्नान का अत्यधिक महत्व है । सामान्य स्थितियों के अलावा गर्भावस्था एवं प्रसूतिकाल में महिलाओं को नियमित स्नान जरूरी है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को स्नान के प्रकार तथा उनसे प्राप्त होने वाले लाभों से परिचित होना अत्यन्त आवश्यक है । स्नान के प्रकार तथा सम्बंधित स्नान से होने वाले लाभो का विवरण निम्नलिखित है :

स्नान के प्रकार

(अ) शीतल स्नान - शीतल स्नान हेतु शीतल जल (पानी का तापक्रम 19^0 सेन्टीग्रेड के आस पास) का प्रयोग किया जाता है । इस स्नान से शरीर में ताजगी आती है तथा त्वचा का रंग निखरता है । यह अतिज्वर ग्रस्त व्यक्ति का तापमान कम करने में सहायक है । किन्तु इस स्नान की समय सीमा तीन मिनट से ज्यादा नही होनी चाहिए । नवजात शिशु के लिए इस तरह का स्नान उपयुक्त नहीं होता है ।

(ब) कुनकुना स्नान - इस स्नान मे कुनकुने जल (लगभग 38^0 सेन्टीग्रेड के तापक्रम का पानी) का प्रयोग किया जाता है । यह स्नान स्फूर्ति प्रदान करता है । चिपचिपाहट से मुक्ति दिलाता है । सद्यःप्रसूता स्त्री तथा नवजात शिशु के लिए इस तरह का स्नान उपयुक्त होता है ।

(द) गर्म स्नान - इस स्नान में जल का तापमान 38^0 सेन्टीग्रेड से अधिक रखा जाता है । यह स्नान थकावट दूर करके शरीर का तापक्रम बढाता है । किन्तु इस स्नान का प्रयोग भोजन के तुरंत बाद नहीं करना चाहिए । इस स्नान से शरीर की ताप नियमन प्रणाली भी गड़बड़ा सकती है।

(य) अन्य स्नान

- **वाष्प स्नान -** इस स्नान में गर्म पानी की वाष्प का प्रयोग किया जाता है । यह स्नान त्वचा के बद हुए छिद्रों को घोलता है तथा रक्त संचार तेज करता है । इस प्रकार के स्नान के शीघ्र पश्चात बाहरी वातावरण से बचना चाहिए ।
- **तेल स्नान -** इस प्रकार के स्नान में तिली, सरसों, जैतून का तेल प्रयोग में लाया जाता है । इस प्रकार के स्नान से त्वचा का रंग निखरता है । त्वचा की शुष्कता दूर होती है तथा मांसपेशियां सुदृढ बनती हैं । इस प्रकार के स्नान में मालिश करते समय अधिक दबाव का प्रयोग नही किया जाना चाहिए तथा उबटन लगाते समय बालों को टूटने से बचाया जावे ।
- **सूर्य स्नान -** यह स्नान सूर्य की किरणों में नंगे बदन लेट कर या बैठ कर किया जाता है । यह स्नान त्वचा रोगों से बचाव करता है । शरीर का सिकाव करता है तथा जोडों के दर्द में आराम पहुंचाता है । किन्तु इस स्नान का प्रयोग अधिक समय तक नही करना चाहिए । केवल कुछ मिनटों तक ही इस स्नान को लेना चाहिए अन्यथा त्वचा जल सकती है।
- **सौन्दर्यबर्द्धक स्नान -** इस स्नान में सौन्दर्यवर्द्धक सामग्री यथा गुलाबजल, इत्र, दूध, शहद, उबटन आदि का प्रयोग किया जाता है । इस स्नान से शरीर में कांति ,सौन्दर्य तथा स्फूर्ति की वृद्धि होती है किन्तु यह स्नान अत्यधिक महंगा पड़ता है ।

उपर्युक्त स्नानों के अतिरिक्त स्नानों के प्रकार में जलावर्त स्नान, नितम्ब स्नान, पैराफिन स्नान आदि भी सम्मिलित हैं । गर्भावस्था में मौसम के अनुकूल जबकि सद्यप्रसूता के लिए कुनकुना स्नान अधिक लाभदायक रहता है । गम्भीर रोगियों को आंशिक स्नान (Partial Bath) अथवा बिस्तर पर ही स्नान (Bed Bath) कराया जाता है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को महिलाओं के मध्य यह संदेश स्पष्ट तौर पर पहुंचा देना चाहिये कि किसी भी अवस्था मे स्नान की मनाही नही है तथा स्नान के द्वारा अनेक रोगों से बचा जा सकता है ।

3.9 व्यायाम

शरीर को सक्रिय तथा गतिमान बनाए रखने के लिए व्यायाम करना आवश्यक होता है । व्यायाम के द्वारा ही शरीर का उपयुक्त तथा सुसंगत विकास होता है । व्यायाम द्वारा स्वास्थ्य में सुधार होता है, रोगों की संभावना कम हो जाती है ।

- **व्यायाम की परिभाषा**

"स्वास्थ्य में सुधार अथवा शारीरिक विकृति को दूर करने के लिए किए गये शारीरिक परिश्रम को व्यायाम कहते हैं ।

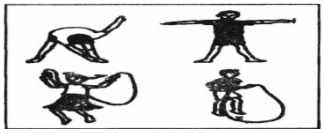

चित्र : नियमित व्यायाम करना

(अ) व्यायाम का महत्व

- व्यायाम के द्वारा जोडों की गतिशीलता एवं पेशीय टोन बनी रहती है ।
- शारीरिक विकृतियों यथा पादपात (फुट ड्राप). संधिग्रह या एकिलोसिस आदि का उपचार तथा बचाव संभव होता है ।
- रक्त परिवहन सुचारू रूप से होता है ।
- व्यायाम द्वारा व्यर्थ पदार्थो के उत्सर्जन में सहायता मिलती है तथा शरीर का तापक्रम नियमित रहता है ।
- व्यायाम से हृदय का कार्यभार भी कम होता है ।
- व्यायाम मोटापा कम करने में सहायक है ।
- भूख में बढ़ोतरी होती है तथा पाचन क्रिया में सुधार होता है । कब्ज, उदरवायु की शिकायत दूर होती है ।
- व्यायाम वृक्क में पथरी निर्माण को रोकता या कम करता है ।
- श्वसन तंत्र को मजबूती प्रदान करता है ।
- शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य में सुधार करता है । मानसिक अवसाद तथा भावनात्मक तनाव से रक्षा करता है ।
- आलस्य का निवारण करता है । शरीर में स्फूर्ति लाता है । व्यायाम, शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि में भी सहायक है ।

(ब) व्यायाम के प्रकार

व्यायाम को इसकी क्रियाविधि के आधार पर विभिन्न भागों में विभक्त किया जा सकता है । तथापि यह वर्गीकरण पूर्ण नहीं हो सकता है क्योंकि विभिन्न प्रकार के व्यायाम परस्पर सम्बन्धित हैं तथा इनका रूप भी परिवर्तित होता रहता है ।

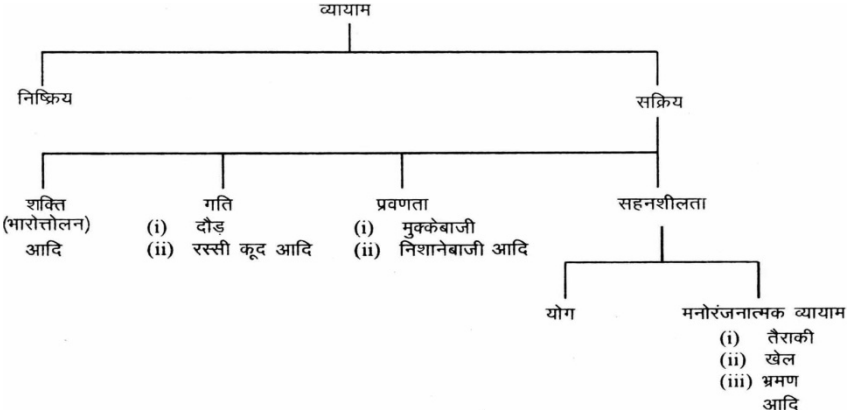

(स) व्यायाम के समय ध्यान रखे जाने वाले महत्वपूर्ण तथ्य

- व्यायाम का चयन शारीरिक स्थिति, लिंग, आयु के अनुसार किया जाना चाहिए । वृद्ध असमर्थ व्यक्तियों के लिए प्रात: काल तेज गति से आधे घंटे से एक घंटे तक भ्रमण करना भी उपयुका व्यायाम है । गर्भवती महिलाएं भी व्यायाम कर सकती हैं किन्तु इसके लिए चिकित्सकीय परामर्श आवश्यक है ।
- व्यायाम प्रात: काल करना ही श्रेष्ठ रहता है । व्यायाम हमेशा भूखे पेट करना चाहिए । भोजन के बाद व्यायाम करना उपयुक्त नही होता है ।
- व्यायाम के समय सुविधाजनक वस्त्र धारण करने चाहिए । व्यायाम स्थल शांत, हवादार व प्रकाश पूर्ण होना चाहिए । मधुर संगीत भी व्यायाम करते समय उपयुक्त रहता है ।
- व्यायाम का समय धीरे-धीरे बढ़ाया जाना चाहिए । किन्तु अत्याधिक थकान से बचा जाए । व्यायाम नियमित करना चाहिए ।

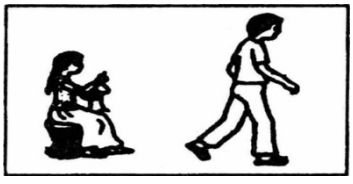

चित्र : शरीर की सही सीध रखना

- दैनिक गतिविधियों में शरीर की सास्थिति एवं सीध (Body Alignment and posture) का ध्यान रखना चाहिये ।

3.10 निद्रा एवं आराम

अच्छे स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त अवधि की निद्रा एवं आराम आवश्यक है । गर्भवती महिला, प्रसवोत्तर महिला एवं नवजात शिशु सहित भी दोनों के लिए अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त करने में निद्रा तथा आराम महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं । अत: प्रसूति विज्ञान सहायिका को निद्रा तथा आराम के बारे में विभिन्न तथ्यों को जानना आवश्यक है ।

आराम एवं निद्रा एक दूसरे से सम्बन्धित हैं तथा एक दूसरे के पूरक हैं, किन्तु समान नहीं हैं । तथापि आराम से निद्रा तथा निद्रा से आराम मिलता है । निद्रा तथा आराम को निम्न प्रकार परिभाषित किया जा सकता हैं :

निद्रा (Sleep) - निद्रा एक व्यक्तिगत आवश्यकता है । जो व्यक्ति को आराम अथवा विश्राम की अनुभूति प्रदान करती है । विश्राम (Rest) या आराम को शारीरिक अथवा मानसिक या दोनों प्रकार के श्रम की घटी हुई अवस्था के रूप में व्यक्त करते हैं ।

(अ) आराम तथा निद्रा के लाभ

- शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि होती है । इससे कार्यक्षमता का विकास होता है ।
- थकावट दूर होती है तथा स्फूर्ति प्राप्त होती है ।
- शरीर की वृद्धि तथा विकास में सहायक हैं ।
- मानसिक शान्ति, प्रसन्नता तथा निर्णय शक्ति में बढ़ोतरी होती है ।

- **आराम तथा निद्रा में बाधक तत्व**

- शांति का अभाव होना ।
- असुविधा, कष्ट आदि की स्थिति ।
- एकांत तथा आरामदायक स्थल का अभाव होना ।
- सोने की आदतों में परिवर्तन ।
- शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक कारण जैसे तनाव, अवसाद, उत्तेजना, भय, चिंता, भावनात्मक परेशानी आदि ।

- **निद्रा तथा आराम की अवधि -** प्रतिदिन कितनी निद्रा एवं विश्राम आवश्यक है । यह व्यक्ति की उम्र, व्यवसाय, -पर्यावरण एवं उसके मानसिक स्तर पर निर्भर करता है । शिशु को 20 से 22 घण्टे, 5 वर्ष तक बालक को 12 से 14 घण्टे, विद्यार्थी को 9 से 10 घण्टे तथा वयस्क को 7 से 9 घण्टे के बीच निद्रा एवं विश्राम की आवश्यकता होती है । निद्रा की अवधि से ज्यादा महत्वपूर्ण उसकी गहनता है, गहरी नींद, चाहे कम अवधि की हो, अधिक लाभकारी रहती है।

(ब) निद्रा एवं आराम के कुछ उपाय

- शयन तथा विश्राम स्थल शोर शराबे से मुक्त, हवादार तथा बाधाओं से रहित होना चाहिए।
- बिस्तर साफ व सिलवटों से मुक्त होना चाहिए ।
- तकिया 4 इंच से अधिक ऊँचा नहीं होना चाहिए ।
- सोते समय ज्यादा हाई वोल्टेज के बल्ब अथवा ट्यूब लाईट को बन्द कर देना चाहिए । कम वोल्टेज के नाईट लैम्प का प्रयोग करना चाहिए ।
- शयन सम्बन्धी आदतो में नियमितता होनी चाहिए । 'जल्दी सोना तथा जल्दी उठना स्वास्थ्य के लिए अच्छा माना जाता है।
- सोते समय मानसिक चिन्ताओं, उत्तेजनाओं एवं भावनात्मक समस्याओं से दूर रहने का प्रयास करना चाहिए । सोते समय हल्का मनोरंजन, हल्का संगीत, थोड़ा व्यायाम एवं मनोरंजक पुस्तक आदि पढ़ना भी निद्रा लाने में, सहायक है ।
- सायंकाल व्यक्ति को हल्का भोजन करना चाहिए तथा ढ़ीले-ढ़ीले उपयुक्त वस्त्र पहनने चाहिए । चेहरे को खुला रखकर सोना तथा मच्छरदानी का प्रयोग भी अच्छी नींद हेतु आवश्यक है । सोने से पूर्व शरीर का शिथिलन अथवा शवासन (योग क्रिया) का प्रयोग भी नींद आने में सहायक होते हैं ।
- निद्राकारी औषधियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए । यदि इनका उपयोग करना किसी कारणवश आवश्यक हो तो, चिकित्सक से परामर्श के बाद ही करना चाहिए ।
- गर्भ की अवस्था में महिला की निद्रा बार-बार -भंग होना या कम होना पाया जा सकता है । अत: गर्भावस्था मे महिला को पर्याप्त निद्रा मिलना आवश्यक है ।

3.11 मनोरंजन

मनोरंजन शब्द का अर्थ मन + रंजन अर्थात् मन का बहलाव होता है । मनोरंजन एक ऐसी क्रिया है जो कि व्यक्ति के मन-मस्तिष्क एवं शरीर में नवीन ताजगी तथा चेतना उत्पन्न करती है । मनोरंजन से तन एवं मन दोनों को विश्राम मिलता है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को स्वयं के लाभ एवं गर्भावस्था वाली माताओं तथा स्वस्थ प्रसव हेतु मनोरंजन का विशेष ध्यान रखना चाहिये । इस बात का ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि मनोरजंन के सही साधन का चुनाव व्यक्ति के स्वभाव, उसकी मानसिक एवं शारीरिक स्थिति तथा उपलब्ध साधनों के ऊपर निर्भर होता है । गर्भावस्था मे मनोरंजन मुख्यत शारीरिक की अपेक्षा मानसिक प्रकार का होना चाहिये ।

- **मनोरंजन के लाभ**

– मानसिक तनाव कम होता है ।
– शारीरिक थकान एवं दबाव घटता है ।
– व्यक्ति को ताजगी महसूस होती है ।
– व्यक्ति की कार्यक्षमता में बढ़ोतरी होती है, यहाँ तक कि उसकी आयु या जीवन प्रत्याशा (Life Expectance) में वृद्धि हो सकती है ।
– प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है तथा रोग ठीक होने में सहायता मिलती है ।
– मानसिक रोग ठीक होते हैं ।
– स्वस्थ शिशु के जन्म में सहायता मिलती है तथा गर्भावस्था में माता का स्वास्थ्य ठीक रहता है ।

- **मनोरंजन के प्रकार**

– मनोरंजन शारीरिक, मानसिक अथवा दोनों प्रकार का हो सकता है । यह व्यक्ति की रूचि एवं साधनो की उपलब्धता पर निर्भर करता है ।

3.12 उत्सर्जन

पसीना, मल-मूल तथा अन्य अपशिष्ट पदार्थो का शरीर से निष्कासन ही उत्सर्जन है । श्वसन तथा पसीना निकलना अनैच्छिक उत्सर्जन है, जबकि कुछ सीमा तक मल एवं मूत्र उत्सर्जन स्वैच्छिक कार्य है । स्वास्थ्य नियमों के अनुसार, इन वेगों को रोकना जटिलता उत्पन्न करता है।

उत्सर्जन -तन्त्र के मुख्य अंग फुफ्फुस, त्वचा, वृक्क एवं आंत्र हैं । त्वचा से पसीना, वृक्क से मूत्र तथा आंतो से मल का निष्कासन होता है । श्वसन तन्त्र रो कार्बन डाई ऑक्साइड के अतिरिक्त कुछ जल भी वाष्प बनकर श्वसन के साथ बाहर निकलता है ।

स्वास्थ्य के संरक्षण हेतु निष्कासन तन्त्र का उचित लय से कार्य करना जरूरी है । अपशिष्ट पदार्थो का उत्सर्जन, हमारे शरीर मे निम्न कार्यों के लिए आवश्यक है:

– शरीर में ताप का नियमन ।
– शरीर के विभिन्न तंत्रों में सामंजस्य रखना ।
– द्रव एवं विद्युत विश्लेष्य का संतुलन ।

– विभिन्न अंग एवं तंत्रों की कार्यप्रणाली सुव्यवस्थित रखना ।

उत्सर्जन तत्र के -सटीक तथा समुचित कार्य नहीं करने पर व्यक्ति के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है तथा वह निम्न लक्षणों से पीड़ित हो सकता है:

1. कब्ज, गैस, अपच, आफरा उदरीय बैचेनी, अति अम्लीयता आदि आहार तंत्र से सम्बन्धित जटिलताएं ।
2. मूत्र मार्ग, वृक्कों का संक्रमण, पथरी निर्माण, मूत्र उत्सर्जन मे कठिनता एवं वृक्क विफलन सम्बन्धी रोग ।
3. त्वचा में संक्रमण सम्बन्धी रोग जैसे फोड़े-फुन्सियां स्वेद ग्रन्थि के रोग आदि ।
4. मुंह में छाले ।
5. रक्ताल्पता (एनिमिया) के अतिरिक्त रक्त सम्बन्धी अन्य रोग हो सकते हैं ।
6. बैचेनी, सिरदर्द, अवसाद, कार्यक्षमता मे कमी, आलस्य तथा अन्य मानसिक रोग ।

इस प्रकार उत्सर्जन शरीर के प्रत्येक अंग तथा तत्र को प्रभावित करता है । अत: व्यक्ति को उत्सर्जन प्रणाली के प्रति सदैव सर्तक रहना चाहिए । आयु-वर्ग के अनुसार उचित व्यायाम, शौच कर्म में नियमितता, संतुलित आहार एवं उचित मात्रा में मनोरंजन तथा विश्राम इत्यादि का ध्यान रखकर उत्सर्जन क्रिया प्रणाली में सुधार लाया जा सकता है एवं अच्छे व्यक्तिगत तथा मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति की जा सकती है । निष्कर्षत: हम यह कह सकते है कि स्वास्थ्य संरक्षण हेतु उपयुक्त उत्सर्जन होना अत्यन्त आवश्यक है ।

3.13 बहुमूत्रता एवं कब्ज

3.13.1 बहुमूत्रता

बहुमूत्रता का अर्थ अधिक मात्रा में तथा अधिक बार मूत्र उत्सर्जन है । सामान्यत: एक व्यक्ति दिन भर में 1000-1200 मि. ली. मूत्र का उत्सर्जन करता है । मूत्र त्याग की आवृत्ति या संख्या भी अलग-अलग पाई जाती है ।

बहुमूत्रता को प्रभावित करने वाले कारकों में पानी अथवा द्रव पदार्थो का अधिक प्रयोग, तापक्रम एवं वातावरण, मूत्रीय तन्त्र के रोग, मधुमेह (डायबिटीज) इत्यादि शामिल हैं ।

गर्भावस्था में बहुमूत्रता का कारण गर्भाशय का मूत्राशय पर पड़ने वाला दबाव अथवा गर्भजनित डायबिटीज हो सकती है । इसी प्रकार गर्भावस्था की तीनों अवस्थाओं (प्रथम, द्वितीय एवं तिमाही या ट्राईमेस्टर) में मूत्र की मात्रा तथा तथा मूत्र त्याग की संख्या अलग-अलग देखी जा सकती है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भवती महिला को इस बारे मे स्पष्ट तौर पर समझा देना चाहिये ताकि बहुमूत्रता के कारण महिला गलतफहमी में ना रहे । डायबिटीज या अन्य रोग के कारण होनेवाली बहुमूत्रता हेतु महिला को रैफर किया जाना चाहिये ।

3.13.2 कब्ज

आंतों एवं मलाशय के खाली होने में विलम्ब या अनियमित रूप से या कम मात्रा में मल त्याग होना कब्ज कहलाता है ।

(अ) कब्ज के लक्षण

- मल त्याग में कठिनाई
- सिर दर्द
- भूख नही लगना या अपच
- आफरा या उदरीय आध्मान
- जीभ पर कोटिंग या 'आवरण
- मुंह में कड़वापन

(ब) कब्ज के कारण

- अपर्याप्त, अनियमित तथा रूक्षांशों (फाईबर) की कम मात्रा वाला भोजन कब्ज के लिए उत्तरदायी है । चाय, काफी आदि उत्तेजक पेय पदार्थो का अत्यधिक सेवन भी कब्ज का कारण हो सकता है ।
- पर्याप्त मात्रा में द्रव ग्रहण नहीं करना ।
- भावनात्मक व्यवधान, चिंता, भय, क्रोध, एकांत का अभाव तथा मल त्याग की असामान्य स्थिति आदि कारण भी कब्ज के लिए उत्तरदायी होते हैं ।
- विरेचकों तथा एनीमा का अत्यधिक प्रयोग, आंतों व मलाशयो की शल्य चिकित्सा आदि भी कब्ज की स्थिति उत्पन्न करते हैं ।
- इन कारणों के अतिरिक्त शारीरिक विकार जैसे कैंसर, तीव्र संक्रामक रोग आदि दशाओं मे भी कब्ज हो सकता है ।

(स) कब्ज से बचाव

- पर्याप्त मात्रा में आहार लिया जाना चाहिए, जिससे समुचित मात्रा में रूक्षांश या फाइबर होना आवश्यक है । अत: हरी सब्जियां, छिलके युक्त दाल, फल, सलाद आदि का सेवन किया जाना चाहिए ।
- पर्याप्त मात्रा में द्रव प्रदार्थो का सेवन किया जाना चाहिए । प्रतिदिन 2000 से 3000 मि.ली. के लगभर तरल ग्रहण करना चाहिए । रात्रि में दूध का सेवन किया जाना चाहिए।
- शौच नियमित रूप से जाना चाहिए ।
- मानसिक तनावों से यथासंभव बचना -चाहिए । इसी प्रकार मलोत्सर्ग में पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए । मलोत्सर्ग के समय पर्याप्त एकांत, उचित संरिथति आदि का ध्यान रखा जाना चाहिए ।
- नियमित व्यायाम भी कब्ज को रोकता है ।
- यथासंभव विरेचकों एनीमा आदि के प्रयोग से दूर रहना चाहिए । इनका प्रयोग चिकित्सकीय परामर्श -के- बाद ही करना चाहिए । कब्ज को दूर करने हेतु इसबगोल की भूसी का सेवन किया जा सकता है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को यह ध्यान रखना चाहिए कि गर्भावस्था में कब्ज की शिकायत पाई जा सकती है । अत: कब्ज के कारणों, लक्षण तथा कब्ज के उपायों की जानकारी के द्वारा गर्भावस्था तथा प्रसूतिकाल में महिलाओं को कब्ज से छुटकारा दिलाना प्रसूति विज्ञान सहायिका का उत्तरदायित्व है ।

3.14 सारांश

अच्छे व्यक्तिगत स्वास्थ्य के माध्यम से प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य ही नहीं बल्कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य स्तर में बढ़ोतरी किया जाना सम्भव है । इस इकाई के विभिन्न बिन्दुओं के अन्तर्गत हमने सिर से लेकर पाँव तक की स्वच्छता एवं देखभाल के विभिन्न बिन्दुओ पर विचार विमर्श किया । प्रसूति विज्ञान सहायिका से यह अपेक्षा की जाती है कि इस जानकारी का उपयोग कर गर्भावस्था, प्रसूति एवं प्रसवोतर काल में मातृ स्वास्थ्य तथा शिशु स्वास्थ्य पर सतर्क निगाह रखे तथा ग्रासरूट स्तर पर व्यक्तिगत स्वास्थ्य के स्तर को ऊँचा' करने का प्रयत्न करे । इसके साथ ही अपने सक्रिय सहयोग से महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता एवं अन्य स्वास्थ्य कर्मियो के कार्य के बोझ को कम करे । ताकि आमजन को अच्छी स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध हो सकें ।

3.15 प्रश्न

1. स्वास्थ्य एवं सर्वोत्तम स्वास्थ्य मे क्या अन्तर है?
2. व्यक्तिगत स्वास्थ्य के उद्देश्य, सिद्धान्त एवं लाभों को लिखिये ।
3. स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन करो ।
4. स्वास्थ्य विकार की परिभाषा एवं प्रकार लिखिये ।
5. आदतों को विभिन्न बिन्दुओं के आधार पर समझाइये
   (अ) अच्छी आदतों के लाभ
   (ब) आदत एवं लत
   (स) आदतों का निर्माण
6. निम्न की देखभाल विस्तार से लिखिये
   (अ) हाथ एवं पैर (ब) नेत्र (स) बाल
7. त्वचा की देखभाल के उपाय बताइये ।
8. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो
   (अ) मुख आरोग्य एवं स्नान (ब) व्यायाम (स) निद्रा एवं आराम
9. "उत्सर्जन" को समझाइये ।

ब्लॉक - II

इकाई - 4 अवलोकन एवं परीक्षण
इकाई - 5 अपूतीयता (एसेप्सिस)
इकाई - 6 मातृ स्वस्थ्य

इकाई-4 अवलोकन एवं परीक्षण

इकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना

4.1 उद्देश्य

4.2 अवलोकन एवं परीक्षण: अवधारणा

4.2.1 अवलोकन एवं परीक्षण के उद्देश्य

4.3 शारीरिक परीक्षण

4.3.1 वजन और लम्बाई मापना

4.3.2 नवजात शिशु का वजन मापना

4.4 मूत्र परीक्षण

4.4.1 स्ट्रिप्स से मूत्र परीक्षण

4.4.2 प्रोटीन (एल्ब्यूमिन) की जांच

4.4.3 शर्करा (शुगर) की जांच

4.5 रक्त की कमी (एनीमिआ)

4.5.1 एनीमिआ के सामान्य चिन्ह एवं लक्षण

4.5.2 रक्त में हीमोग्लोबिन की जांच करना

4.6 तापक्रम, नाडी, श्वसन

4.6.1 तापक्रम मापना

4.6.2 नाडी या नब्ज लेना

4.6.3 भवसन मापना

4.7 रक्त चाप (सिस्टॉलिक) मापना

4.8 सारांश

4.9 प्रश्न

4.0 प्रस्तावना

गर्भावस्था मे खतरों के चिन्हों की पहचान कर यथोचित उपचार एवं सुरक्षित प्रसवहेतु निरन्तर परीक्षण एवं सतर्क अवलोकन आवश्यक है । प्रसूति विज्ञान सहायिका गर्भवती माता का सही रूप से भारीरिक अवलोकन व परीक्षण कर सम्भावित खतरों की पहचान पूर्व मे कर सकती है और उस गर्भवती को सही समय पर महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता अथवा चिकित्सालय या स्वास्थ्य केन्द्र भेजकर सही समय पर उपचार प्रारम्भ करवा सकती है इससे उन प्रसूताओं की संख्या में कमी आएगी जो सम्भावित जटिल खतरों व मरणासन्न स्थिति में लाई जाती हैं और जिनका उपचार अधिक मुशिकल कल और कम प्रभावी होता है 1 उपचार शिघ्र प्रारम्भ करके माता के साथ नवजात शिशु के प्राणों की रक्षा सम्भव है । इस प्रकार बढती हुई मातृत्व व शिशु मृत्युदर में कमी लाना संभव है । इसी क्रम में इस अध्याय में हम गर्भवती माता व नवजात शिशु का भारीरिक अवलोकन व परीक्षण के अन्तर्गत गर्भवती माता व नवजात शिशु का वजन व ऊँचाई

नापना, मूत्र परीक्षण के अन्तर्गत प्रोटीन (एलब्यूमिन) व भार्करा (शुगर), की जांच करना, एनीमिआ (रक्त की कमी) के सामान्य चिन्ह व लक्षण देखना तथा तापक्रम, नाडी व भवसन व सिस्टोलिक रक्तचाप देखने सम्बन्धी, विस्तृत रूप से अध्ययन करेगें । हमारा अभीष्ट प्रसूति विज्ञान सहायिका को इतना सक्षम बनाना है कि वह अवलोकन / परीक्षण में अपनी कुशलता बढ़ा कर मातृ मृत्यु दर तथा शिशु मृत्यु दर मे प्रभावी कमी लाने मे अपना योगदान दे सके ।

4.1 उद्देश्य

किसी भी व्यक्ति के स्वास्थ्य का हाल जानने के लिये विभिन्न जैविक लक्षणों का अवलोकन तथा भारीरिक परीक्षण किया जाना आवश्यक है । इस इकाई में इन्हीं सब बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है ताकि इस इकाई के अध्ययन के पश्चात प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे में जान सकेगी तथा वह प्रसूता का अवलोकन एवं परीक्षण कर सकने में सक्षम होगी ।

1. अवलोकन एवं परीक्षण की अवधारणा
2. उनके उद्दे यों की जानकारी प्राप्त करना
3. वजन एवं ऊँचाई मापना
4. स्वास्थ्य वृत्त लेना
5. मूत्र परीक्षण करना
6. रक्त को कमी (एनीमिआ) के लक्षणों को पहचानना
7. तापक्रम. नाडी एवं भवसन मापना
8. रक्त चाप (सिस्टोलिक) जांचना

4.2 अवलोकन एवं परीक्षण : अवधारणा

प्रसूति विज्ञान सहायिका प्राथमिकता के तौर पर ग्रामीण क्षेत्र, ढ़ाणी, कच्ची बस्ती तथा गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले समुदायों तथा चिकित्सालय, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, उपकेन्द्र, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र. मातृ व शिशु कल्याण केन्द्र के मध्य एक महत्वपूर्ण कड़ी है । अर्थात वह चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग तथा गर्भवती माता के बीच "धुरी" अर्थात केन्द्रीय बिन्दु का कार्य कर सकती है । प्रसूति विज्ञान सहायिका अपने ज्ञान. विवेक, बुद्धिमत्ता का प्रयोग करते हुए गर्भवती माता का ध्यान पूर्वक अवलोकन कर उसकी लम्बाई, वजन, तापक्रम, नाडी, भवसन व रक्तचाप तथा रक्त का हीमोग्लोबिन व मूत्र का प्रोटीन व शर्करा का परीक्षण कर उसके अन्दर होने वाले सम्भावित गंभीर खतरों की पहचान प्रारम्भिक अवस्था में ही कर सकती है तथा जैसे ही गर्भवती माता में गंभीर खतरों की पहचान हो जाये, प्रसूति विज्ञान सहायिका उसे सही सलाह देते हुए ए.एन.एम. या महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता अथवा आगे के सही उपचार हेतु फर्स्ट रेफरल यूनिट अथवा मातृ शिशु कल्याण केन्द्र पर उसे रेफर कर सकती है ताकि गर्भवती माता अथवा शिशु को सही समय पर सही उपचार मिल सके व मातृ तथा शिशु मृत्यु दर में कमी आ सके । यहा फर्स्ट रेफरल यूनिट वह "स्वास्थ्य केन्द्र" है जहां जटिलता के अनुरूप सेवा प्रदान करने की पूरी व्यवस्था उपलब्ध हो ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका जब प्रथम बार किसी गर्भवती माता से मिलती है तो उससे औपचारिक बात कर उस माँ व उसके परिवार वालों से अपनी आत्मीयता बढ़ावे व उस परिवार के सदस्यों का विश्वास जीतने का प्रयास करे । तत्पश्चात गर्भवती माता का रजिस्ट्रेशन कर भारीरिक परीक्षण के पहले वार्तालाप करते हुए पूर्व का स्वास्थ्य वृत जानने हेतु निम्न सवालों का जवाब प्राप्त करें।

(अ) गर्भवती माता की उम्र

(ब) आखिरी माहवारी की तिथि (एल.एम.पी.)

(स) गर्भ की संख्या या क्रम

(द) जीवित बच्चों की संख्या

(य) आखिरी गर्भपात या प्रसव की दिनांक

(र) पूर्व में गर्भपात या प्रसव के दौरान अड़चनें ।

(ल) कोई मुख्य भारीरिक बीमारी अथवा पारिवारिक पृश्ठभूमि ।

(क) प्रसव के समय मृतक (स्टिल बर्थ) एवं मृतक बच्चों की कुल संख्या ।

(ख) महिला का टीकाकरण हुआ या नही ।

4.2.1 अवलोकन एवं परीक्षण के उद्देश्य

I. गर्भवती माता का भारीरिक अवलोकन कर संभावित खतरों की पहचान करना ।

II. गर्भवती माता के मूत्र में प्रोटीन व भाक्कर तथा रक्त मे हीमोग्लोबिन का परीक्षण करना ।

III. गर्भावस्था के दौरान सम्भावित गम्भीर खतरों की पहचान होने पर उसे ए.एन.एम. के पास अथवा आगे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र / सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र अथवा मातृ व शिशु कल्याण केन्द्र पर रेफर करना (एफ.आर.यू.) भेजना ।

IV. गर्भावस्था के विभिन्न चरणों में महिला के स्वास्थ्य का हाल मालूम करना ।

V. गर्भवती माता को अवलोकन के समय उसे आवश्यक आहार व कैलोरी की जानकारी देना ताकि उसका सही रूप से विकास व वृद्धि हो सके ।

VI. अवलोकन व परीक्षण के दौरान ज्ञात खतरों से माता को बचाना अथवा उनका उपचार करना।

VII. अवलोकन व परीक्षण के माध्यम से प्रसूती विज्ञान सहायिका व गर्भवती माता तथा उसके परिवार वालों के मध्य अच्छे सम्बन्ध कायम करना ।

VIII. गर्भवती माता से सम्बन्धित स्वास्थ्य की पूर्ण जानकारी प्राप्त करना तथा उससे सम्बन्धित सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आत्मिक धार्मिक व मानसिक सभी प्रकार की जानकारी प्राप्त करना ।

IX. नवजात शिशु की जांच कर कम वजन वाले (प्राय: 25 कि. ग्रा. या उसके कम) व असामान्य शिशुओं की पहचान कर उनको उचित देखभाल हेतु आगे रेफर करना ।

X. परीक्षण व अवलोकन कर प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा ए.एन.एम. को कार्य योजना तैयार करने में सहायता देना ।

XI. निरीक्षण व परीक्षण के दौरान गर्भवती मां व उसके परिवार वालों को मां व शिशु के स्वास्थ्य की देखभाल परिवार नियोजन, पोषाहार, टीकाकरण, संक्रमण से होने वाली बीमारियों से बचाव, व्यक्तिगत व वातावरण की स्वच्छता के बारे में शिक्षित कर स्वस्थ व खुशहाल परिवार बनाने में सहायता प्रदान करना ।

4.3 भारीरिक परीक्षण

प्रसूति विज्ञान सहायिका गर्भवती माता के भारीरिक परीक्षण के दौरान महिला में कोई जटिलता के चिन्हों की पहचान कर सकती है । यद्यपि शारीरिक परीक्षण के सम्पूर्ण चरणो के माध्यम से गर्भवती / प्रसूता मे उपस्थित किसी भी विकार या रोग का पता लगाया जा सकता है किन्तु प्रसूति विज्ञान सहायिका की अपनी सीमाएं हैं । अत: यहां पर सामान्य परीक्षणो के बारे मे हीं चर्चा की जा रही है ।

4.3.1 वजन और लम्बाई नापना

भारीरिक परीक्षण में प्रारम्भिक तौर पर मां की आयु वजन व लम्बाई देखी जाती है । अगर मां की उम्र 18 वर्ष से कम व 35 वर्ष से अधिक हो, उसका वजन 40 किलोग्राम से कम हो तथा उसकी लम्बाई 145 से.मी. अथवा 4 फुट 10 इंच से कम हो तो प्रसव के समय कोई न कोई जटिलता हो सकती है ।

अत: शारीरिक परीक्षण में उपरोक्त तीनों में से कोई कमी पाई जाती है तो उसे चिकित्सीय परामर्श के लिये आगे चिकित्सालय भेज दिया जाना चाहिये तथा ऐसी महिला का प्रसव चिकित्सालय में ही कराना चाहिये ।

(अ) महिला की लम्बाई नापना

लम्बाई नापने के लिए यथा संभव वजन एवं ऊँचाई वाली मशीन का उपयोग करना अच्छा रहता है । उपलब्ध न होने पर महिला की लम्बाई नापने के लिए प्रसूति विज्ञान सहायिका अपने घर अथवा केन्द्र पर लम्बाई नापने हेतु दीवार के सहारे संकेत बना देती है । इसके अन्तर्गत दीवार पर पेनिग्ल अथवा पेन द्वारा स्केल की सहायता से 4 फीट से 6.5 फीट तक के निशान लगाकर उस पर माप (फीट व इंच से) लिख दिया जाता है जिस महिला की लम्बाई नापनी हो, उसे उस दीवार के सहारे बिना जूते या चप्पलों के सही शीधे खडे रहने को कहा जाता है. खडे होते समय उस महिला के पैर की एडियाँ दीवार को स्पर्श करनी चाहिये तथा सिर सीधी रेखा में रखना चाहिये । तत्पश्चात एक स्केल को उस महिला के सिर पर रखकर दीवार के सहारे स्पर्श करा दिया जाता है फिर उस महिला को वहां से हटने के लिए कह दिया जाता है । उस लम्बाई वाली जगह पर, जहां स्केल छू रही हो, वही माप उस महिला की लम्बाई होगी । जिसे प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा नोट कर लिया जाता है (अगर महिला की लम्बाई 4 फुट 10 इंच से कम आती है, तो उसे आगे चिकित्सीय परामर्श के लिए भेज देना है) ।

(ब) महिला का वजन नापना

सर्वप्रथम महिला को हल्के कपड़े अथवा गाउन पहनाकर उसे वजन मशीन पर खडा कर देना चाहिये तथा इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उक्त महिला का पूरा वजन मशीन के ऊपरी भाग पर सभी दिशाओं मे समान रूप से फैला हुआ हो । अगर प्रारम्भिक अवस्था मे उक्त महिला का वजन 40 कि. ग्रा. से कम आता है तो उसे आगे चिकित्सीय परामर्श के लिये भेज देना चाहिये । प्रथम बार वजन लेने के बाद, उक्त गर्भवती माता का हर माह अथवा 15 दिनों के अन्तराल से वजन लिया जाना चाहिये व उसे रिकॉर्ड करते रहना चाहिये चूकि पूरी गर्भावस्था के दौरान महिला का 10 से 13 किलोग्राम वजन बढ़ता है । महिला का वजन पूरे नौ (9) माह मे निम्नानुसार बढ़ता है

(i) प्रथम तीन माह में प्रत्येक माह 1/2 किलोसाम यानी प्रथम तीन माह में 11/2 किलोग्राम

(ii) द्वितीय तीन माह में प्रत्येक 15 दिन में 1/2 किलोग्राम यानी तीन माह में 3 किलोग्राम

(iii) तीन माह मे प्रत्येक सप्ताह मे 1/2 किलोग्राम यानी तीन माह मे 6 किलोग्राम

अगर इस क्रम में माता का वजन नही बढ़ता है तो आहार की तरफ ध्यान देते हुए उस महिला को सन्तुलित आहार मय पर्याप्त कैलोरी लेने के लिया प्रोत्साहित करते हुए देना है । अगर इसके बावजूद भी वजन में निर्धारित बढ़ोतरी नहीं होती है तो महिला को उचित चिकित्सीय परामर्श दिलवाना है । इसी प्रकार अगर किसी गर्भवती माता का वजन प्रतिमाह 3 किलोग्राम से ज्यादा बढ़ता है तो यह दर्शाता है कि या तो जुड़वा बच्चे की भांका है अथवा गर्भावस्था की विशाक्तता जैसी अवस्था का भाक किया जाता है । ऐसी महिला को आगे चिकित्सीय परामर्श के लिए भेजना है । इस प्रकार प्रत्येक माह वजन नापने से गर्भवती माता के पोषण की स्थिति व गर्भस्थ शिशु के विकास व वृद्धि का सही पता चलता है ।

चित्र : गर्भवती का वजन लेना

4.3.2 नवजात शिशु का वजन नापना

जैसे गर्भवती माता का वजन व उंचाई उसके स्वास्थ्य के प्रति महत्वपूर्ण महत्ता रखते हैं उसी प्रकार नवजात शिशु में भी जन्म के समय उचित वजन व लम्बाई होनी चाहिये अगर निर्धारित उचित वजन व लम्बाई उस नवजात शिशु की नहीं रहेगी तो उस शिशु को खतरा हो सकता है । निर्धारित से कम वजन वाले बच्चों को तुरन्त शिशु रोग विशेषज्ञ के पास भेज देना चाहिये । सामान्यत: एक नवजात शिशु मे वजन 2.5 से 3 किलोग्राम व लम्बाई 20 से 21 इंच होनी चाहिये ।

अ. शिशु का वजन नापने की विधि

नवजात शिशु का वजन लेने के लिए रंगों के कोड युक्त वजन लेने की स्प्रिंग वाली मशीन होती है । इसमे नीचे की तरफ हुक लगा हुआ होता है जिसमे एक मजबूत कपड़े का थैला लगा देते हैं । नवजात को इसी थैले में रखकर वजन लेते हैं । इसके विपरीत उसके उपरी सिरे पर पकड़ने या लटकाने के लिये एक छोटी डंडी लगी हुई होती है ।

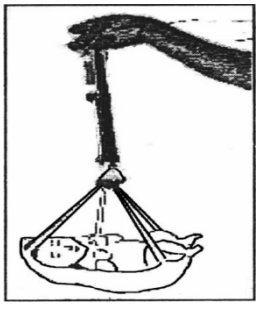

चित्र : शिशु का वजन लेना

वजन बताने वाली बेलनाकार अन्दर की नली पर 200 ग्राम के खण्डो में 5 किलोग्राम तक वजन के निशान लगे हुए होते है । यह नली तीन रंगों लाल, पीला व हरा रंग लिये हुए होती है।

शिशु का वजन लेने के लिये सर्वप्रथम बच्चे को हल्के गरम कमरे में ले जाना है तत्पचात उसे हल्के कपड़े में लपेट देना चाहिये । इसके बाद शिशु को मशीन के नींचे वाले भाग पर जहां कपड़े का थैला लटकाया गया है उसमें लिटा देना चाहिये । इसके पश्चात् ऊपर के सिरे को ध्यान से दीवार के सहारे लटका देना है अगर लटकाने की सुविधा नहीं हो तो दांये हाथ से मजबूती से ऊपर वाले सिरे को पकड़कर ऊँचा उठाना है । परन्तु इसके पहले हमें देख लेना है कि वजन लेने से पूर्व निर्देशक चिन्ह 0 पर है तथा कपड़े के थैले में शिशु आराम से लेटा हुआ हो तथा गिर कर चोट लगने का खतरा न हो ।

तत्पचांत ऊपर उठाने के बाद हमारी आंखों को स्प्रिंग वाले बेलानाकांर भाग को जहां खण्डों में लाल, पीला व हरा रंग लिए नली पर अंकित किया गया है, देखना है ।

इसके अन्तर्गत 2.5 किलोग्राम वजन तक यह लाल रंग से रंगी होती है इसका तात्पर्य यह है कि जन्म के समय शिशु का वजन 2 किलोग्राम से कम है व बच्चे को खतरा हो सकता है । अत: उसे तुरन्त शिशु रोग विषेशज्ञ के पास रेफर कर देना है । यदि शिशु का वजन 2 किलोग्राम से अधिक परन्तु 2.5 किलोग्राम तक अर्थात पीले रंग में आता है तो इसका तात्पर्य यह है कि शिशु का वजन तो कम है परन्तु उचित घरेलू देखभाल व इसका प्रबन्ध किया जा सकता है ।

यदि शिशु का वजन 2.5 किलोग्राम से अधिक अर्थात् हरे रंग में आता है तो इसका तात्पर्य है कि शिशु कम वजन का नहीं है तथा सामान्य है । उस प्रकार लिये हुए वजन को वजन के चार्ट पर अंकित कर देना है । इसके बाद हर माह वजन नापना है

व रिकार्ड करना है । प्रथम वर्श गांठ पर शिशु का वजन दुगना ही जाता है अर्थात् करीब 5 किलोग्राम । (नोट: COA IV की इकाई-6 भी संदर्भित करें ।).

ब. नवजात शिशु की लम्बाई मापना

नवजात शिशु की लम्बाई नापने का सर्वोतम तरीका यह है कि शिशु को पहले पीठ के बल लेटा दिया जाता है तत्पश्चात माता को उसे एक हाथ सिर पर और दुसरा घुटने पर रखकर भाशन्त पकड़ने को कहा जाता है । इसके पश्चात स्वास्थ्यकर्मी अथवा प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा किसी पैमाने या निशानयुक्त स्केल की सहायता से, सिर के ऊपरी भाग से लेकर पांव सीधे पकड़ कर एडियों तक की लम्बाई का मापन कर देते हैं । उसके पश्चात इस पैमाने को दीवार पर जो लम्बाई की स्केल बनाई गई है, उस पर नाप लिया जाता है । प्राय: जन्म के समय शिशु की लम्बाई 20-21 इंच होती है जो 1 वर्ष तक यह करीब 30 इंच हो जाती है । दूसरे वर्ष के अन्त तक 35 इंच, तीसरे वर्ष 37.5 इंच व चौथे वर्ष तक यह 40 इंच के करीब हो जाती है ।

4.4 मूत्र परीक्षण

गर्भवती माता में सम्भावित खतरों की पहचान उसके मूत्र का परीक्षण कर भी ज्ञात कर सकते है । सामान्य अवस्था में गर्भवती माता के मूत्र में प्रोटीन व भार्करा की मात्रा नहीं रहती है । परन्तु अगर गर्भवती माता के मूत्र में प्रोटीन (एलब्युमिन) की व भार्करा की मात्रा परीक्षण के दौरान पाई जाती है तो वह इस बात को इंगित करता है कि उस माता को आगे गर्भ मे कोई जटिलता अथवा विशाक्तता आ सकती है । अत: अगर मूत्र की जांच मे भार्करा व प्रोटीन पाया जाय तो प्रसूति विज्ञान सहायिका को चाहिये कि वह तुरन्त उस माता को चिकित्सीय परामर्श हेतु आगे हॉस्पिटल में रेफर कर देवे ।

4.4.1 स्ट्रिप्स से मूत्र परीक्षण

आजकल मूत्र में प्रोटीन (एलब्यूमिन) व भार्करा की जांच का सबसे सरल व आसान तरीका स्ट्रीप्स हैं, जिन्हें यूरिस्टिक्स के नाम से जानते है ।

इसके लिये बजार में यूरिस्टिक्स के नाम से मूत्र की जांच के लिये रिएजेन्ट की स्ट्रिप्स मिलती हैं।

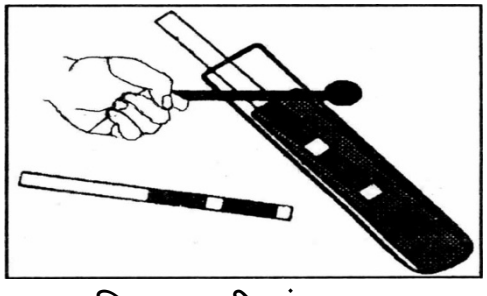

चित्र : मूत्र की जांच करना

इस स्ट्रिप्स पर एक तरफ दो रंगों की एक उभरी हुई पट्टी लगी रहती है जो क्रमश: पीली व आसमानी रंग की होती है । इसमें पीली मूत्र में प्रोटीन की जांच हेतु तथा-आसमानी पट्टी मूत्र मे

भार्करा की जांच के लिये होती है । स्ट्रिप्स जिस बोतल में रखी जाती है. उसी बोतल के ऊपर की ओर जो कागज चिपका रहता है उस पर क्रमश: इस पीली पट्टी तथा आसमानी पट्टी के चिन्ह के साथ साथ इसके प्रोटीन व भार्करा होने पर किस-किस प्रकार का बदलाव उस रंग में आयेगा का चिन्ह बना होता है जिसे देखकर ज्ञात किया जा सकता है कि मूत्र में प्रोटीन व भार्करा की उपस्थिति है या नहीं अथवा कितने प्रतिशत में है ।

विधि :

सर्वप्रथम गर्भवती माता का प्रात: काल का प्रथम मूत्र एक साफ बोतल या टेस्ट ट्यूब में लिया जाता है । इसके लिये माता को समझा देना है कि प्रातःकाल उठकर जब उसे मूत्र त्याग करने की इच्छा हो वह पहले कुछ मूत्र त्याग कर दे, तत्पश्चात मध्य का मूत्र उस साफ बोतल या टेस्ट ट्यूब में ले लेवे तथा मूत्र ले लेने के बाद वापस मूत्र आ रहा हो, उसे त्याग देवें ।

इसके पश्चात यूरिस्टिकर की बोतल मे से एक स्ट्रिप निकाली जाती है तथा उसे उस मूत्र में कुछ देर डुबाकर वापस बाहर निकाल दी जाती है । यहां ध्यान रखना है कि यूरिस्टिक्स का वह सिरा जिस पर पीली व आसमानी पट्टी लगी हुई है वह भाग मूत्र में डुबाना है ।

मूत्र में डुबोने के पश्चात इस स्ट्रिप को बाहर निकाल दिया जाता है । स्ट्रिप्स को बाहर निकाल कर 30 सेकण्ड तक रखना है । इसके पश्चात इस स्ट्रिप्स पर जो पीले व आसमानी रंग की पट्टी है, उसके रंग मे बदलाव आता है तो उसे यूरिस्टिक्स की बोतल पर लगे हुए चित्रानुसार मिलान करना है, अगर पीली पट्टी पर रंगों का बदलाव होता हे तो बोतल के लेबल पर लगे हुए रंग के अनुसार उसे देखा जाता है व जिस रंग से मिलान होता है उतनी मात्रा में मूत्र में प्रोटीन (एलब्युमिन) की उपस्थिति दर्शाता है व अगर इस पीली पट्टी में किसी प्रकार का बदलाव नहीं होता है तो यह मूत्र में प्रोटीन (एलब्युमिन) की अनुपस्थिति दर्शाता है ।

इसी प्रकार अगर आसमानी रंग की पट्टी मे रंगों का बदलाव होता है तो उसका भी मिलान बोतल के लेबल पर लगे हुए रंग के अनुसार देखा जाता है व जिस रंग से यह मिलान करता है उतनी मात्रा में मूत्र में भार्करा की उपस्थिति दर्शाता है । अगर इस आसमानी पट्टी में किसी प्रकार का बदलाव नहीं होता है, तो यह मूत्र में भार्करा की अनुपस्थिति को दर्शाता है ।

स्ट्रिप्स की रख रखाव में हमें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये :

I. यूरिस्ट्रिप्स की बोतल व स्ट्रिप्स को सूर्य के प्रकाश से दूर रखना है ।
II. इसे फ्रिज में नहीं रखना है । प्राय: 30 डिग्री सेन्टिग्रेट से कम तापक्रम वाली जगह पर रखा जाता है ।
III. जांच करने वाले भाग वाला सिरा किसी अन्य पदार्थ, जगह व हमारे हाथों से छू न जावे यह ध्यान रखना है ।
IV. बोतल के ऊपर मियाद खत्म होने की तिथि लिखी हुई होती है, उसे देखना है । अगर मियाद तिथि (Expiry Date) निकल गई हो तो इस स्ट्रिप्स को काम में नहीं लेना है ।
V. एक मूत्र की जांच के लिए बोतल में से एक ही स्ट्रिप्स निकालनी है । एक समय में बहुत सारी स्ट्रिप्स बाहर नहीं निकालनी है ।

'यदि स्ट्रिप्स से मूत्र में प्रोटीन (एलब्यूमिन) व भार्करा जांच करने की सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो निम्नानुसार भी जांच कर सकते हैं ।

4.4.2 प्रोटीन (एलब्यूमिन) की जांच

प्रोटीन (एलब्यूयिन) एक सफेद रंग का पदार्थ होता है जो प्राय: मूत्र में घुला हुआ रहता है व हमें दिखाई नहीं देता है । इसके परीक्षण के लिये मुख्यतया निम्न दो तरीके (स्ट्रिप्स के अतिरिक्त) उपयोग में लिये जाते हैं :

(अ) गर्भवती माता के पेशाब की लगभग 5 मिलीमीटर मात्रा अथवा टेस्ट ट्यूब का 3/4 (तीन चौथाई) भाग लिया जाता है । तत्पश्चात मूत्र के ऊपर के भाग को स्पिरिट लैम्प पर गरम किया जाता है । जिस स्थान पर मूत्र को गर्म किया जाता है वहां के मूत्र में यदि सफेद रंग का अवक्षेप उत्पन्न होता है और यह अवक्षेप 10 प्रतिशत एसिटिक एसिड की 2-4 बूंदे डालने पर पुन: मूत्र में नहीं घुलता है व अवक्षेप बना रहता है तो यह दर्शाता है कि मूत्र में प्रोटीन (एलब्यूमिन) उपस्थित है । अगर यह अवक्षेप धुल जाता है, तो यह दर्शाता है कि मूत्र मे फास्फेट उपस्थित है ।

(ब) एक टेस्ट ट्यूब में 2 मि.ली. नाइट्रिक एसिड लीजिए । अब एक पीपेट की सहायता से इस टेस्ट ट्यूब में बूंद-बूंद कर अति सावधानी से किनारे से मूत्र डालिये । मूत्र तथा नाइट्रिक एसिड के मिलने के स्थान पर यदि एक सफेद गोल रिंग उत्पन्न होती है तो यह दर्शाता है कि मूत्र में प्रोटीन (एलब्यूमिन) उपस्थित है ।

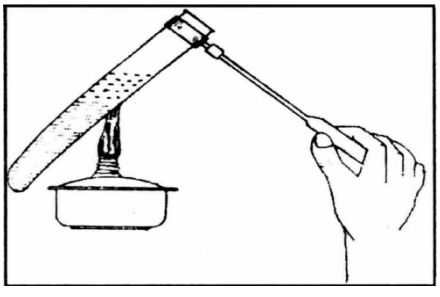

चित्र : मूत्र में प्रोटीन की जांच करना (टेस्ट ट्यूब विधि)

4.4.3 भार्करा (शुगर) की जांच

यदि स्ट्रिप्स से भार्करा की जांच संभव न हो तो मूत्र में भार्करा की जांच प्राय: निम्न प्रकार की जा सकती है ।

एक टेस्ट ट्यूब में 5 मि.ली. बेनेडिक्टस का घोल लेकर स्पिरिट लैम्प पर गर्म किया जाता है । गर्म करने के बाद यह घोल नीला ही रहता है व इसमें कोई बदलाव नहीं आता है तब 8 बून्द मूत्र, इसमें ड्रापर की सहायता से डालें । तत्पचात इसे पुन: 2 मिनट तक हल्का गर्म करना है, इसके पश्चात उसे ठन्डा होने देना है । यदि घोल का रंग यथावत नीला रहता है तो यह इस बात का द्योतक है कि मूत्र में भार्करा नहीं है । परन्तु यदि घोल का रंग हल्का हरा हो जावे व अवक्षेप नहीं होता है तो यह दर्शाता है कि मूत्र में +1 भार्करा है, यदि घोल का रंग हरा रहता

है व पीले रंग का अवक्षेप बनता है तो +2 तथा यदि हरे रंग के साथ गहरा पीला या नारंगी रंग का अवक्षेप बनता है तो +3 व यदि घोल नारंगी या गहरा भूरा होकर उसमे ईट के समान लाल रंग का अवक्षेप बनता है तो यह दर्शाता है कि मूत्र में +4 भार्करा की मात्रा है । रंग परिवर्तन प्रतिशत मे भी नापा जाता है । एलब्यूमिन व भार्करा की मात्रा का जैसे ही मूत्र में उपस्थित होना मालूम होवे तुरन्त प्रसूति विज्ञान सहायिका को चाहिये कि गर्भवती माता को चिकित्सीय परामर्श हेतु आगे चिकित्सालय के लिये रेफर कर देवे । (नोट : यह गर्भवती में डायबिटीज का लक्षण हो सकता है।)

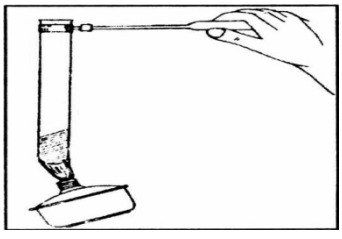

चित्र : मूत्र में शुगर की जांच करना (टेस्ट ट्यूब विधि)

4.5 रक्त की कमी (एनीमिआ)

एक संतुलित आहार जो आवश्यक कैलोरी की आपूर्ति करता है, अच्छे पोषण का आधार होता है, परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिए आवश्यक होता है । गर्भावस्था के दौरान गर्भवती माता को आहार व कैलोरी की आवश्यकता बढ़ जाती है इस समय माता के स्वास्थ्य के साथ-साथ उसमे जो भ्रूण पल रहा है उसकी आवश्यकता भी बढ़ जाती है ।

जब गर्भवती माता के आहार मे लौह तत्व की कमी हो जाती है अर्थात आहार मे जितना लौह तत्व लेना चाहिये वह नहीं ले पाती है तो उसके रक्त मे लौह तत्व हीमोग्लोबिन की मात्रा कम हो जाती है व इसके साथ साथ लाल रक्त कणिकाओ की संख्या में भी कमी हो जाती है जिसके फलस्वरूप उस माता में जो लक्षण व चिन्ह दिखाई देते हैं, उसे एनीमिआ कहते हैं ।

4.5.1 एनीमिआ के सामान्य चिन्ह व लक्षण

गर्भवती माता के नाखून, आंखों में कन्जक्टाइवा के भाग पर, होठ, मुँह की भलेशमिक झिल्ली तथा जबान पर हल्का सफेद पीलापन लिये हुए दिखाई देता है । आंखों की कन्जक्टाइवा देखते समय अंगुली से नीचे की पलक को हल्का खीच कर अन्दर का आवरण जिसे हम कन्जक्टाइवा कहते हैं, देखते हैं । साधारणतया यह गुलाबी या हल्का लाल रंग का दिखाई देता है परन्तु खून की कमी होगी तो यह' सफेद दिखाई देगा । इसी प्रकार जीभ जो प्राय: गुलाबी दिखाई देती है, सफेदपन लिए दिखाई देगी ।

इसी प्रकार नाखून भी जो प्राय: गुलाबी दिखाई देते हैं, सफेद दिखाई देगें । इसके साथ ही नाखूनों पर दरारे व गड्डा. चम्मच जैसे आकार के तथा नरमपन, पतलापन व आसानी से दबायें जाने का (स्थितियां दिखाई देती है जिसे हम ' ' काइलोनिकिआ' ' (Koilonychia) कहते है । इसके अलावा मुंह के किनारों पर भी दरारें पड जाती हैं उसे हम किलोसिस (Cheilosis) कहते हैं ।

चित्र : गर्भवती में एनीमिआ

इन उपरोक्त मुख्य चिन्ह व लक्षणों के अलावा गर्भवती माता को बहुत जल्दी थकावट महसूस होना, भूख में कमी होना, प्राय: सरदर्द का रहना व चक्कर आना, नाडी का बढ़ जाना, मुंह व पैरों पर सूजन दिखाई देना. सास लेने में तकलीफ होना इत्यादि चिन्ह व लक्षण भी दिखाई देते हैं ।

4.5.2 रक्त में हीमोग्लोबिन की जांच करना:

इस जांच के लिये जिस उपकरण की आवश्यकता होती है उसे हीमोग्लोबिनोमीटर कहते हैं । इस जांच के दौरान सर्वप्रथम हीमोगलोबिनोमीटर की कांच की ट्यूब में 2 मिलीलीटर के निशान तक एन /10 (N/10) सान्द्रता का नमक का तेजाब (हाइड्रोक्लोरिक एसिड) भर लिया जाता है । ततप चात महिला के बायें हाथ की मध्यमा अंगुली में टिप पर निडल / सुई से छेद करते हैं । उस जगह रक्त की बूंद निकल आएगी, अगर आवश्यक हो तो अंगुली को हल्का मसल कर और थोडा रक्त निकाल सकते हैं ।

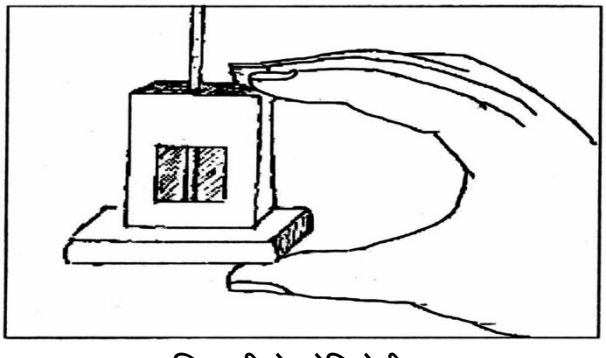

चित्र. हीमोग्लोबिनोमीटर

इस रक्त को पिपेट में मुंह की सहातया से 20 निशान तक खींच लेंगे फिर इस पिपेट को हीमोग्लोबिनोमीटर के ट्यूब में डाल कर मुँह की सहायता से पिपेट का पूरा रक्त हाइड्रोक्लोरिक एसिड में खाली कर देना है । इसके बाद कांच की छडी की सहायता से इसे अच्छी तरह हिला देना है । इसके पश्चात ट्यूब को पुन: स्टैण्ड में रख देंगे और इसमें एक एक बूंद कर डिस्टिल्ड

वाटर तब तक मिलाना है जब तक ट्यूब के घोल का रंग हीमोग्लोबिनामीटर में लगे कांच के रंग के समान न हो जाय । जब दोनों का रंग समान हो जाय तो ट्यूब के घोल के स्तर से यंत्र में लगे निशान से हीमोग्लोबिन की मात्रा नोट कर लेंगे, यह मात्रा ग्राम में आती है ।

गर्भवती माता में साधारण तौर पर हीमोग्लोबिन की मात्रा 13-15 ग्राम प्रति व 100 मि.ली. रक्त होती है ।

अगर माता में हीमोग्लोबिन की मात्रा साधारण जो व 13-15 ग्राम होनी चाहिये नही हो तो यह इस बात को दर्शाता है कि वह गर्भवती माता रक्त की कमी (एनीमिआ) की ओर अग्रसर हो रही है । ऐसी परिस्थिति में माता के आहार में लौहतत्व की मात्रा विशेषकर हरी पत्तेदार सब्जियां, दालें, गुड़, बैंगन. पपीता, सेवफल, रागी. बाजरा इत्यादि खाद्य पदार्थ (जिसमें लौह तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं) की मात्रा बढ़ा देनी चाहिये ।

इसके अलावा उस माता को पास के चिकित्सा केन्द्र से सम्पर्क कर आयरन फोलिक एसिड की 2 गोली रोज तीन से चार माह तक शुरू करा देनी है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को यहां देखना है कि माता दो गोली रोज खा रही है या नहीं । साथ ही माता को बता देना है कि गोली खाने के बाद उसका मल काले रंग का आ सकता है । यह भी ध्यान रखना है कि माता आहार में लोह तत्व युक्त खाद्य पदार्थ समुचित मात्रा में ले ।

उपरोक्त प्रारम्भिक उपचार के बाद भी अगर गर्भवती माता में हीमोग्लोबिन की मात्रा नहीं बढ़पाती है तो उसे आगे ए.एन.एम. (महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता) अथवा फर्स्ट रेफर यूनिट के तहत चिकित्सालय में चिकित्सक के पास रेफर कर देना है ।

4.6 तापक्रम, नाडी, भवसन

तापक्रम, नाडी, भवसन तथा रक्तचाप जैविक अर्थात वाइटल (vital) चिन्ह के अन्तर्गत आते हैं । इन्हें हम प्राणमूलक चिन्ह भी कहते हैं । चूंकि ये हमारे शरीर की आधारभूत कार्यप्रणाली की पद्धति तथा उसमें होने वाले बदलावों के बारे में जानकारी देने वाले चिन्ह होते हैं अत: इन्हे आधारभूत चिन्ह भी कहा जाता है । इनके द्वारा व्यक्ति की भारीर क्रिया विज्ञान से सम्बन्धित सामान्य अथवा स्वस्थ, रोगजन्य स्थिति की प्रारम्भिक जानकारी ज्ञात होती है । किसी व्यक्ति की स्वास्थ्य स्थिति के ये अच्छे सूचक होते हैं । ये सम्भावित बीमारी के निदान मे सहायता करते हैं । ये जीवन चिन्ह भारीर के मौलिक कार्यो का निम्न प्रकार से निदर्शन करते हैं ।

1. तापमान शरीर ऊश्मा का मापन है । यह भारीर की ऊश्मा उत्पादन और हानि की क्षमता और सामान्य तापक्रम के अनुसार शारीरिक सन्तुलन को बनाया जा रहा है या नहीं, दर्शाता है ।
2. नाडी व रक्तचाप हृदय की क्रिया और रक्त परिसंचरण सम्बन्धी स्थिति दशाते हैं ।
3. श्वसन - श्वसन तंत्र व फुफ्फुस के कार्य और श्वसन क्रिया सम्बन्धी स्थिति दर्शाता है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को भी प्राणमूलक चिन्ह सम्बन्धी जानकारी होना आवश्यक है । अगर गर्भवती माता के शरीर का तापक्रम 38.5^0C या 39^0 सेन्टिग्रेड से अधिक हो जाता है, नाडी का स्पन्दन बढ़ जाता है व श्वसन क्रिया में परिवर्तन हो जाता है तो यह दर्शाता है कि उस

माता में कोई गम्भीर संक्रमण फैल रहा है अथवा उसकी शारीरिक मानसिक दशा ठीक नहीं है । जैविक चिन्हों में असामान्य परिवर्तन प्रसव के दौरान गम्भीर खतरों की ओर इंगित करता है ।

स्वस्थ माता में सामान्य शारीरिक तापक्रम नाडी, भवसन एवं रक्तचाप निम्नानुसार होता हैं ;

- सामान्य तापक्रम - 37^0C अथवा 98.6^0 फारेनहाईट (मुंह व टिम्पेनिक द्वारा) इसमें एक डिग्री फारेनहाईट कम अथवा ज्यादा हो सकता है ।
- बगल द्वारा - 36.4^0C या 97.6^0F ($+1^0$F)
- गुदा द्वारा - 37.6^0 C या 99.6^0F ($+1^0$F)
- सामान्य नाड़ी स्पन्दन - 70-80 स्पन्दन प्रति मिनट
- सामान्य श्वसन - 14-18 प्रति मिनट
- सामान्य रक्तचाप - 120/80 Hg अथवा 110 से 140 मि.मी. आफ मरकरी सिस्टोलिक व 70 से 90 मी.मी. ऑफ मरकरी डायस्टोलिक

4.6.1 तापक्रम मापना

शरीर का तापमान ज्ञात कर, व्यक्ति के रोगी व स्वस्थ होने की जानकारी प्राप्त करना, सबसे पुराना तरीका है । हमारे शरीर का तापक्रम शरीर के अन्दर उत्पन्न ऊष्मा व ऊष्मा क्षय के मध्य संतुलन के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है । शरीर के तापक्रम को नियन्त्रित करने वाला केन्द्र मस्तिष्क में हाइपोथेलमस में होता है । साधारणतया हमारे शरीर का तापक्रम 36.4^0 सेन्टीग्रेड से 37 डिग्री सेन्टीग्रेड अर्थात 97.6^0 फौरनहाइट से 98.4^0 c होता है । जब हमारे शरीर का तापमान सामान्य से ज्यादा हो जाता है उस अवस्था को हम ज्वर (बुखार) कहते हैं । प्राय: गर्भवती माता का तापमान सामान्य से कुछ अधिक हो सकता है परन्तु उसे किसी प्रकार का संक्रमण हो अथवा सामान्य से ज्यादा तापक्रम हो तो तुरन्त आगे चिकित्सक के पास भेजना है ।

(अ) तापमापी के प्रकार: भारीर का तापक्रम, तापमापक (थर्मामीटर) की सहायता से नापा जा सकता है । यह तापमापक मुख्यतया निम्न प्रकार के होते हैं:

थर्मामीटर का प्रकार	तापमान लेने में लगने वाला समय
ग्लास थर्मामीटर	2-8 मिनट
इलेक्ट्रानिक थर्मामीटर	2-60 सेकन्ड
डिसपोजेबल अथवा केमिकल थर्मामीटर	60 सेकन्ड

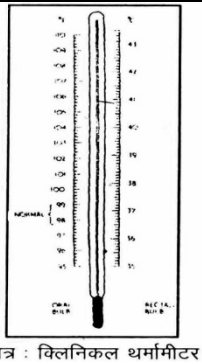

चित्र : क्लिनिकल थर्मामीटर

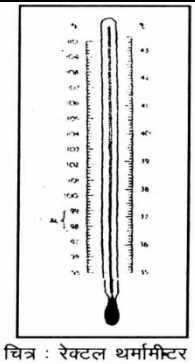

चित्र : रेक्टल थर्मामीटर

उपरोक्त में से सबसे अधिक प्रचलित ग्लास थर्मामीटर है ।

(ब) ताप नापने के स्थान:- तापमान नापने के सामान्य स्थान निम्न है

- मुंह द्वारा तापक्रम नापना
- बगल द्वारा तापक्रम नापना ।
- मलाशय द्वारा तापक्रम नापना ।
- कान द्वारा तापक्रम नापना

उपरोक्त में से गर्भवती माता का तापमान मुंह व बगल द्वारा नापा जा सकता है जबकि नवजात शिशु का तापमान बगल अथवा मलाशय द्वारा नापा जाता है । टिम्पैनिक थर्मामीटर मँहगा तथा कम प्रचलन में है ।

(स) तापमान देखने से पूर्व ध्यान रखने योग्य बातें -

I. संक्रमण फैलने से रोकने के लिये तापमापक को पूर्व मे कीटाणुनाशक घोल मे डुबोकर रखना है ।

II. महिला द्वारा गर्म या ठन्डा पेय पदार्थ लिया होतो 15-20 मिनट बाद तापमान देखना है ।

III. भोजन के आधा घन्टे बाद तापमान देखना है ।

IV. छोटे बच्चे, बेहोश व्यक्ति व पागल व्यक्ति. का तापमान मुंह से नहीं लेना है ।

V. व्यक्ति को सांस लेने में कठिनाई हो अथवा मुंह व नाक में कोई तकलीफ हो अथवा कोई संक्रमण हो तो मुंह से तापमान नहीं लेना है ।

VI. गर्म या ठन्ड़े पानी से नहाने के व 15-20 मिनट बाद तापमान लेना है ।

VII. थर्मामीटर की घुण्डी (स्टेम) वाला भाग नहीं पकड़ें ।

VIII. तापमान लेने के साथ ही नाड़ी व श्वसन दर का भी निरीक्षण किया जा सकता है ।

IX. तापमापी को गर्म पानी से नहीं धोना है, हमेशा ठन्ड़े पानी से धोना चाहिये ।

X. तापमान झटकते समय, तापमापी किसी वस्तु से टकराए नहीं अन्यथा तापमापी के टूटने की सम्भावना रहती है ।

(द) तापमान लेने की सामग्री: एक ट्रे जिसमें निम्न सामान हो ।

1. क्लिनिकल ग्लास थर्मामीटर / रेक्टल थर्मामीटर जो एन्टिसेप्टिक सोल्यूशन में रखा हुआ हो।
2. दो बोतल जिसमें से एक में साबुन का पानी व दूसरी में साफ पानी भरा हुआ हो ।
3. स्टरलाइज कॉटन स्वाब (रूई के फोहे)
4. डिसपोजेबल हाथ के दस्ताने (आवश्यकतानुसार)
5. घडी, जिसमें सेकन्ड का काँटा हो ।
6. किडनी ट्रे / पेपर बेग
7. साफ छोटा टावल
8. तापक्रम नोट करने का चार्ट तथा पेन ।
9. वैसलीन / लूब्रीकेंट / जैली (रिक्टल थर्मामीटर होने की स्थिति में) '

(य) मुंह द्वारा तापमान लेने की विधि :-

1. माता को तापमान लेने की विधि के बारे में जानकारी दे देते हैं ।
2. थर्मामीटर को एन्टिसेप्टिक सोल्यूशन से निकालकर कॉटन स्वाब से बल्ब (घुन्डी या स्टेम) से ऊपर की ओर साफ करेंगे ।
3. थर्मामीटर के बल्ब के भाग को साफ पानी की बोतल में डुबोकर निकालना है व पुन: कॉटन स्वाब से बल से ऊपर की ओर साफ करना है ।
4. थर्मामीटर के अन्दर के मापन (रीडिंग) को पढ़ना है, अगर पारा ऊपर की ओर चढा हुआ दिखाई देवे तो थर्मामीटर झटक कर पारा नीचे की ओर 95 डिग्री फारेनहाइट तक लानी है।
5. माता को मुंह खोलने को कहेंगे तत्पश्चात थर्मामीटर के बल्ब को जबान (जीभ) के नीचे सबलिंगुअल क्षेत्र में रख देना है । इसके पश्चात माता को होठों से मुंह बन्द कर देने को कहना है । साथ ही उसे समझा देना है कि वह दांतो सें थर्मामीटर को न तो दबाने की कोशिश करे और न ही चबाने की कोशिश करे, अन्यथा थर्मामीटर' टूट जायगा ।
6. थर्मामीटर को मुंह में इस अवस्था में 2 से तीन मिनट तक रखा जाता है । प्राय: 2 मिनट रखना है ।
7. मुंह में 2-3 मिनट रखने के बाद थर्मामीटर को बाहर वाले भाग से पकड़ना है, तत्पश्चात रोगी का मुंह खुलवाकर थर्मामीटर को बाहर निकाल लेना हे ।
8. थर्मामीटर में चमकीले पारे की स्थिति पढना है व जिस अंक तक चमकीला पारा छू रहा हो, वही उसका तापक्रम होता है, जिसे रिकॉर्ड करना है ।
9. थर्मामीटर के बल्ब (घुन्डी) वाले भाग को साबुन के पानी वाली बोतल में डुबोना है तत्पश्चात कॉटन स्वाब से साफ करना है इसके बाद 'थर्मामीटर को पुन: एन्टिसेप्टिक घोल में डुबोकर रख देते हैं ।
10. तापमान लेने के बाद तापक्रम चार्ट पर मुख से लिया गया हो तो M बगल से लिया गया हो तो A व रेक्टम से लिया गया हो तो R ,लाल स्याही से लिखकर लाल स्याही से ही तापमान लिख देना है । इसके नीचे नीली स्याही से नाड़ी दर व काली स्याही से भवसन दर लिखना उपयुक्त रहता है ।
11. कॉटन स्वाब जो उपयोग में आए हैं, उन्हे पेपर बेग में डालते हैं व बाद में कचरा पात्र में डाल देते हैं ।

(र) बगल से तापमान लेना:

1. माता को तापमान लेने की विधि के बारे में समझायेंगे ।
2. माता की बगल को छोटे टॉवल की सहायता से साफ करेंगे ताकि पसीना हो तो साफ हो जाय ।
3. माता को सही स्थिति (पोजीशन) देंगे, इसके लिये उसे या तो बैठा देना है या सीधा लेटने का कहना है ।
4. थर्मामीटर के बल्व (घुन्डी या स्टेम) को माता के बगल के केन्द्र में रखकर बगल को वापस दबवा देंगे तथा हाथ के नीचे के भाग को तिरछा कर उसके वक्ष पर रखवा देंगे ।

5. इस अवस्था में थर्मामीटर को 3 से 8 मिनट रखा जाता है । (कम से कम 3 मिनट रखना है ।)
6. 3 मिनट बाद थर्मामीटर के अंकन को पढ़ना है व उसे तापक्रम चार्ट पर उपरोक्तानुसार (मुंह से लेने पर जैसे) रिकॉर्ड कर देना है ।
7. थर्मामीटर को साबुन के पानी में डुबोकर कॉटन स्वाब से पोछकर पुन: एन्टिसेप्टिक घोल में रख देना है ।

(ल) रेक्टल विधि से तापमान लेने की विधि

प्राय: 4 वर्ष से छोटे बच्चे का तापमान गुदा मार्ग से लिया जाता है । तापमान लेने के चरण निम्न हैं:

1. माता को तापमान लेने की विधि के बारे में जानकारी देनी चाहिये ।
2. रेक्टल विधि द्वारा तापक्रम लेने से पहले ध्यान रखना है कि शिशु का मलाशय खाली हो अर्थात वह कम से कम 20-30 मिनट पहले शौच कर चुका हो ।
3. रेक्टल थर्मामीटर को एन्टिसेप्टिक घोल से निकाल कर काटन स्वाब से बल से ऊपर की ओर साफ करना है । तत्पश्चात साफ पानी में थर्मामीटर को डुबोकर कॉटन स्वाब से साफ करेंगे ।
4. रेक्टल थर्मामीटर के अंकन को देखना है । अगर उसमें पारा ऊपर चढा हुआ हो तो उसे झटक कर पारे को 95 डिग्री फारेनहाइट अंकन तक लाना है ।
5. थर्मामीटर के बल्ब (घुन्डी) पर वैसलीन / लुब्रीकेंट /जैली लगानी है । (उपलब्धता के अनुसार)
6. शिशु को लेफ्ट लेटरल पोजीशन देकर थर्मामीटर के बल्ब को उसके (एनस) गुदाद्वार मे 1 से 1 1/2 से.मी. अन्दर डालेंगे। इसके बाद थर्मामीटर को 2-4 मिनट रेक्टम में रखना है ।
7. तत्पश्चात रेक्टम से थर्मामीटर को निकाल कर उसका तापमान देखना है ।
8. तापमान लेने के बाद कॉटन स्वाब से पहले घुन्डी के भाग को साफ कर, थर्मामीटर को साबुन के पानी में डुबोकर पुन: कोंटन स्वाब से साफ कर थर्मामीटर को एन्टिसेप्टिक सोल्यूशन में रख देना है ।
9. पूर्व में मुंह से तापमान लेने में बताये अनुसार, तापमान को तापक्रम चार्ट पर रिकॉर्ड करना चाहिये ।

4.6.2 नाडी या नब्ज लेना

हृदय का जब बांये निलय का संकुचन होता है तब वहाँ से लगभग 70 मि.ली. रक्त महाधमनी में धकेल दिया जाता है । वह रक्त शरीर की सभी धमनियों व रक्तवाहिनियों में प्रवाहित होता है । चूकि धमनियों की अन्दर की दीवारें लचीली (इलेस्टिक) होती हैं वे रक्त की इस अतिरिक्त मात्रा के आने से फैल जाती हैं तथा रक्त के यहा से आगे जाने पर धमनियाँ पुन: शिथिल हो जाती हैं । यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है । इस प्रकार धमनियों का लगातार फैलाव एवं संकुचन होना ही नाड़ी या स्पन्दन कहलाता है । नाड़ी का यह स्पंदन, हृदय के स्पंदन से ही

होता है इसलिये नाड़ी अथवा हृदय सुचारू एवं सामान्य रूप से कार्य कर रहे हैं अथवा नही, यह नाड़ी के स्पंदन से ही समझा जा सकता है । हम हमारे शरीर में मुख्यत: नाड़ी स्पंदन, ऐसी धमनियां जो शरीर के अन्दर हड्डियों के ऊपर से गुजरती हैं, महसूस कर सकते हैं ।

(अ) नब्ज लेने के स्थान

शरीर की मुख्य धमनियाँ व सम्बंधित नब्ज निम्न हैं

1. रेडियल
2. ब्रेंकिअल
3. टेम्पोरल
4. केरोटिड
5. फिमोरल
6. डीबीअल
7. पॉपलिटिअल
8. डारसल पेडिस
9. एपिकल

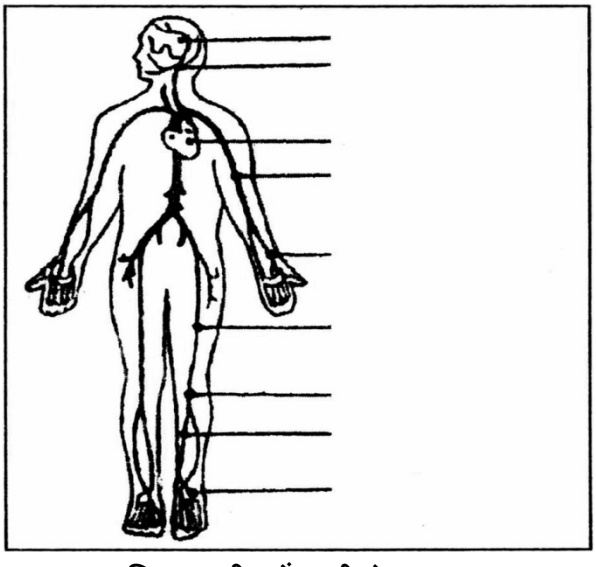

चित्र : शरीर में नाडी के स्थान

चित्र में दर्शाये सभी उपरोक्त स्थानों पर नाडी का स्पन्दन अनुभव किया जा सकता है परन्तु सबसे ज्यादा सुविधाजनक आसानी से नाडी का स्पन्दन रेडियल धमनी व ब्रेकिअल धमनी पर महसूस किया जा सकता है ।

(ब) नाड़ी की मुख्य बिशेषताएं हैं

- दर (Rate)
- ताल या तय (Rhythm)
- आयतन (Volume)
- तनाव (Tension)

इनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:

(i) सामान्य दर: अर्थात 1 मिनट में नाड़ी कितनी बार स्पन्दन करती है उसे दर कहते हैं । सामान्यतया 60 से 100 बार प्रति मिनट स्पन्दन होता है । औसत रूप से एक स्वस्थ व्यक्ति में नाड़ी का स्पन्दन 72 बार प्रति मिनट होता है जबकि नवजात शिशु में नाड़ी का स्पन्दन करीब 1 30-140 प्रति मिनट होता है ।

(ii) नाड़ी की ताल या लय : जब नाड़ी के दो स्पन्दनों के बीच का अंतर एक समान हो तो उसे नियमित नाड़ी या सामान्य ताल अथवा लय कहा जाता है । जबकि अगर दो स्पन्दनों के बीच यह अन्तर बदलता रहे तो उसे असामान्य या अनियमित ताल बद्धता कहते हैं । इसके लिये पूरे 1 मिनट तक नाडी का स्पन्दन देखा जाता है ।

(iii) नाड़ी का आयतन : यहां आयतन से तात्पर्य है धमनी का रक्त से भरा हुआ होना । यह प्रत्येक स्पन्दन के साथ अनुभव होने वाला रक्त का दबाव है । आयतन धमनियों में उपस्थित रक्त की मात्रा पर निर्भर करता है । यदि धमनियों में रक्त का सामान्य आयतन हो तथा वे एक गुब्बारे के समान फुलाव लिये हुए महसूस होती हैं तो नाड़ी को आयतन मे पूर्ण माना जाता है परन्तु इसके विपरीत यदि रक्त का आयतन कम हो जाय और नाड़ी का स्पन्दन एक बार सामान्य तो दूसरी बार धीमी फिर सामान्य अथवा सामान्य से अधिक फुलाव महसूस होता है तो इसे असामान्य आयतन कहते हैं ।

(iv) दाब या तनाव : यह धमनी की संकुचन क्षमता को दर्शाता है । रक्त का दाब धमनी की दीवारों पर तनाव या दाब उत्पन्न करता है जिसे अनुभव किया जा सकता है । इसके अन्तर्गत जब धमनी को दबा पाना कठिन हो तब इसे अधिक या उच्च तनाव कहते हैं और जब धमनी सरलतापूर्वक दबाव योग्य हो तो निम्न तनाव की स्थिति कहा जाता है।

(स) नाडी नापने के लिए आवश्यक सामग्री :

1. हाथ घड़ी जिसमें सैकण्ड का कांटा लगा हो या पल्सोमीटर
2. पेन व चार्ट

(द) नाड़ी नापने की विधि :

1. नाड़ी नापने की विधि के बारे में माता को जानकारी देंगे ।
2. जब तापमान नाप रहे हो उसी समय नाड़ी भी नापी जा सकती है ।
3. माता को सीधे लिटाकर अथवा आरामदायक स्थिति में बैठा दिया जाता है ।
4. माता के हाथ को उसके छाती के उपर रख दिया जाता है ।
5. जांचकर्ता को दांये हाथ की तीन अंगुलियां, मध्यमा अंगुली व उसके दोनों ओर पास की अंगुलिया माता के दांये हाथ के सीधे भाग की ओर अंगूठे के ऊपर, रेडियल धमनी के ऊपर रखनी हैं । ध्यान रखना है कि अंगुलियों से न तो जोर का दबाव डाले और न वे बिल्कुल ऊपर की ओर उठी रहें ।
6. नाड़ी का स्पन्दन महसूस कर पूरे 1 मिनट तक गिनती करनी है अर्थात 1 मिनट में नाड़ी की स्पन्दन कितनी बार महसूस होती है, वही उस माता की प्रति मिनट नाड़ी दर है ।

7. नाड़ी दर गिनने के साथ ही नाड़ी की ताल, आयतन व तनाव को भी महसूस किया जाता है।
8. पूरे एक मिनट की जो नाड़ी दर आती है, उसे चार्ट में लिख देना है ।

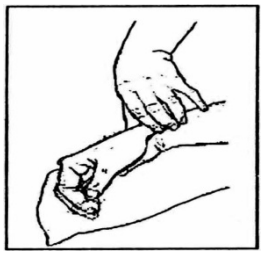

चित्र : रेडियल धमनी नापना

4.6.3 श्वसन मापना

व्यक्ति को जीवित रहने के लिए सर्वाधिक आवश्यक तत्व ऑक्सीजन युक्त वायु है जो श्वसन के दौरान हम फुफ्फुस में लेते हैं । एक व्यक्ति बिना जल व पानी के कुछ समय तक जीवित रह सकता है परन्तु बिना आक्सीजन के कुछ (अधिकतम तीन) मिनट भी जीवित नहीं रह सकता ।

आक्सीजन युक्त हवा को शरीर में फुफ्फुस द्वारा ग्रहण करना तथा कार्बनडाईआक्साईड युक्त हवा को बाहर निकालने की प्रक्रिया लगातार चलती रहती है । यहाँ हवा को अन्दर लेने की क्रिया को प्र:श्वसन (Inspiration) व हवा को बाहर निकालने की प्रक्रिया को नि:श्वसन (Expiration) कहते हैं । इस प्रकार प्र:श्वसन व नि:श्वसन को एक भवसन कहा जाता है । स्वच्छ व्यक्ति मे यह भवसन दर प्रति मिनट 16 से 18 बार होती है जबकि एक नवजात शिशु मे यह दर प्रति मिनट 30-40 होती है । श्वसन का नियन्त्रण भी मस्तिष्क मे स्थित श्वसन केन्द्र (जिसे मेड्यूला आब्लागेटा कहते हैं) के द्वारा होता है ।

प्राय: तापक्रम लेते समय पहले मिनट में नाड़ी दर को नापा जाता है व दूसरे मिनट में श्वसन दर को गिना जा सकता है । श्वसन दर गिनते समय, इसके साथ-साथ श्वसन की सुगमता व सांस लेते समय मरीज की स्थिति को भी देखा जाता है ।

(अ) भवसन दर मापने हेतु आवश्यक सामग्री:

1. हाथ घडी जिसमें सेकण्ड का कांटा हो ।
2. भवसन दर नोट करने का चार्ट

(ब) भवसन दर गिनने की विधि:

1. भवसन दर गिनने की विधि के बारे में माता को नही बताना है । माता को भवसन दर गिनने की विधि के बारे में पहले बता देंगे तो भवसन दर में कुछ बदलाव आ सकता है ।
2. भवसन दर तापक्रम लेते समय लेना, अधिक सुगम रहता है ।
3. माता को आरामदायक स्थिति में सीधा लिटा देना चाहिये या बिठा देना चाहिये ।
4. भवसन के दौरान व्यक्ति के उदर व वक्ष में कुछ हल्के से ऊपर व नीचे की ओर गति होती है । उदर या छाती के एक बार ऊपर नीचे होने को एक भवसन कहते हैं । इस प्रकार एक

मिनट में उदर या वक्ष जितनी बार ऊपर नीचे होती है उसे पूरे मिनट तक गिना जाता है व यह जो संख्या आती है वही, उसकी प्रति मिनट भवसन दर कहलायेगी ।

5. उदर व छाती की ऊपर नीचे होने की गति को देखने के लिए माता का हाथ उसकी वक्ष या उदर पर रखना है अथवा अपना हाथ माता के उदर या वक्ष पर रखना है । और होने वाली गति को महसूस करते हुए देखते रहना है एवं गिनते रहना है ।
6. जो भवसन दर आती है उसे तापक्रम चार्ट पर नाडीदर के नीचे नोट करेंगे ।

4.7 रक्तचाप (सिस्टॉलिक) मापना

रक्त वाहिनियों में रक्त वेगपूर्वक बहता हुआ, इनकी दीवारों पर दबाव डालता है जिसे रक्त दाब अथवा रक्त चाप कहते हैं । यह दबाव दो प्रकार का होता है । जिसे सिस्टॉलिक रक्त चाप व डाएस्टालिक रक्त चाप कहते हैं ।

यहां सिस्टॉलिक रक्त चाप रक्त द्वारा रक्तवाहिकाओं की भित्तियों पर लगाये जाने वाला अधिकतम दबावं है । वैन्ट्रीकल के संकुचन के दौरान बांये निलय द्वारा करीब 70 मिली लीटर रक्त महाधमनी में धकेला जाता है जहां से यह भारीर के विभिन्न धमनियों व रक्तवाहिकाओं में जाता है. इस समय जो दबाव धमनियो में रहता है उसे सिस्टालिक रक्तचाप कहा जाता है जबकि डाएस्टालिक रक्त दबाव निम्नतम दबाव है जो हृदय के संकुचन के बाद पुन: संकुचन के पहले कुछ पल विश्राम के समय होता है । इनको रिकॉर्ड करने के लिये ऊपर की ओर सिस्टॉलिक दबाव लिखा जाता है जबकि नीचे की ओर डायस्टालिक रक्त दबाव लिखा जाता है जैसे 120/80 मि. मी. ऑफ मर्करी (पारा) अर्थात यहाँ 120 सिस्टालिक रक्तचाप दर्शाता है जबकि 80 डायस्टालिक रक्तचाप दर्शाता है । इन दोनों दाबों के मध्य के अन्तर को नाडी दाब या पल्स प्रेसर कहते है ।

गर्भवती माता के लिये प्राय: साधारण रक्तचाप व 110/80 से 140/90 मि.मी. ऑफ मर्करी (पारा) रहता है । अगर निरीक्षण के दौरान गर्भवती माता का रक्तचाप व 140/90 मि.मी. ऑफ मर्करी से ज्यादा आता है तो प्रसूति विज्ञान सहायिका को माता को तुरन्त आगे चिकित्सीय सुविधा के लिये चिकित्सक के पास रेफर कर देना चाहिये ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका को हर भेंट के दौरान गर्भवती माता का रक्तचाप नाप कर नोट करना चाहिये । अगर गर्भावस्था में महिला के पैरों व बदन पर मुख्यतया आंखों के चारो ओर सूजन दिखाई देवे तो यह, उस माता के लिए प्रसूति के समय गम्भीर खतरो के आने की सूचना देता है व माता का रक्त दबाव बढने का संकेत देता है । अत: प्रसूता का हर सप्ताह अथवा दो सप्ताह से उसका रक्तचाप नापा जाना है व रक्तचाप बढा हुआ दिखाई देवे तो तुरन्त इस माता को आगे चिकित्सक के पास रेफर कर देना है ताकि सही समय पर सही उपचार प्रारम्भ हो सके व सम्भावित खतरों से माता को बचाया जा सके ।

(अ) सिस्टोलिक रक्तचाप नापने की सामग्री:

- रक्तचाप नापने का उपकरण अथवा स्फिग्नोमैनोमीटर

(ब) रक्तचाप नापने की विधि:

1. गर्भवती माता को रक्तचाप नापने की विधि के बारे मे समझायेंगे ।

2. रक्तचाप नापने के पूर्व माता को जांच की टेबल पर 5 से 10 मिनट तक शान्त लेटे रहने के लिए कहेगें ।
3. रक्तचाप नापने के यंत्र (स्फिग्नोमैनोमीटर) की कफ (कपड़े की थैली जिसमें हवा भरी जाती है, को माता के बांये या दांये हाथ के बाजू में कोहनी के ऊपर 2 से 2.5 इंच के भाग मे अच्छी तरह कस कर बांधेंगे ।
4. प्रसूति विज्ञान सहायिका आपने दाँये हाथ की मध्यमा व पास वाली दोनों अर्थात तीनों अंगुलियों को माता की रेडियल या ब्रेकिअल धमनी पर रखकर नाडी का स्पन्दन महसूस करें।

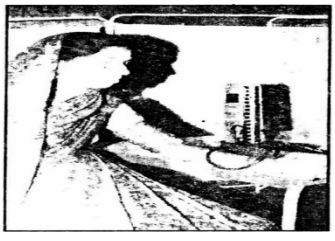

चित्र : रक्तचाप(ब्लडप्रेशर) नापना

5. यंत्र के वायुदाबक बल्ब के स्क्रू को कसकर उसके द्वारा कफ में हवा भरेंगे ।
6. हवा भरने से उपकरण मे पारा नली के ऊपर बढ़ने लगेगा । यह पारा तब तक वायु भरते हुए ऊपर बढ़ाना है जब तक कि नाड़ी का स्पन्दन महसूस होना बन्द होकर 20-30 मिलीमिटर ऑफ मर्करी तक ओर ऊपर पारा बढ़ नहीं जावे ।
7. तत्पश्चात स्क्रू को हल्का ढीला कर वायु के दाब में कमी करनी है । तथा यह कभी धीरे-धीरे तब तक करनी है जब तक की नाड़ी स्पन्दन की ध्वनि पुन: प्रसूति विज्ञान सहायिका की अंगुलियो पर महसूस न हो जाय ।
8. जैसे ही नाड़ी का स्पन्दन पुन: महसूस हो वह अंकन (नाप) पढ़ लेना है अर्थात इस समय नली में पारे की ऊंचाई जो अंक दर्शाती है, उसे नोट कर लेना है चूंकि यही सिस्टालिक रक्त दबाव होता है ।

   अगर डायस्टालिक रक्त चाप भी देखना हो तो स्टेथरकॉप की आवशयकता रहेगी व साथ ही बहुत ही ज्यादा प्रेक्टिस करने की भी आवश्यकता होती है । इसकी संक्षिप्त विधि इस प्रकार है :

1. ब्रेकिअल धमनी के ऊपर स्टेथस्कॉप का डायफ्राम रखें व इअरपीस को दोनों कान मे लगावें।
2. हवा भरने के बल्ब से पूर्व की तरह हवा भरनी है जब तक नाड़ी स्पन्दन की आवाज सुनाई देना बन्द न होकर 20-30 मि.मी. ऑफ मर्करी पारा ओर ऊपर न चढ़ जावे ।
3. वायुदाब के स्क्रू को ढीला कर धीरे-धीरे वायु दाब में कमी करें, जैसे ही पुन: नाड़ी स्पन्दन की आवाज सुनाई देवे उपकरण की नली में पारा जिस अंक को दर्शाता है, उसे पढ़कर नोट कर लेवें । (यह सिस्टॉलिक रक्तदाब है)
4. धीरे-धीरे वायु दाब को और कम करना है, यह तब तक करना है जब तक आवाज सुनाई देना बहुत धीमी हो जाय या कुछ क्षण के लिये बन्द हो जाय, तब उपकरण में कांच की

नली में जहां पारा है, वह अंक पढ़ लेना है व नोट करना है । यही अंक डायस्टॉलिक रक्त चाप को दर्शाएगा । याद रखें जब पहले नाडी स्पन्दन की आवाज सुनाई देना प्रारम्भ होती है तो सिस्टालिक रक्त चाप कहलाता है व बाद में जहां आवाज सुनाई देना धीमे या बंद हो जाती है, उसे हम डायस्टालिक रक्त चाप कहते हैं ।

5. रक्तचाप को नापने के बाद कफ को खोलकर पुन: समेटकर यथास्थान रखकर, उपकरण को अपने उचित स्थान पर रख देना है ।

4.8 सारांश

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर अध्ययन कर हम मान सकते हैं कि प्रसूति विज्ञान सहायिका को इतना ज्ञान अवश्य प्राप्त हो गया होगा कि वह आसानी से गर्भवती माता व नवजात शिशु का शारीरिक अवलोकन एवं परीक्षण कर उनका वजन व ऊँचाई नाप सके. गर्भवती माता के मूत्र में प्रोटीन व भार्करा की जांच कर सके तथा रक्त की कमी एनीमिआ) के सामान चिन्ह व लक्षणों के आधार पर सम्बन्धित माता की पहचान कर सके व तापक्रम, नाड़ी, भवसन व सिस्टॉलिक रक्त चाप को नाप सके । कोई सम्भावित जटिलता व खतरे होने का अन्देशा हो तो क्या-क्या परिवर्तन हो सकते हैं तथा उसकी क्या भूमिका है, यह भी अध्ययन सामग्री के माध्यम से स्पष्ट कर दिया गया है ।

यह आशा की जाती है कि प्रसूति विज्ञान सहायिका उपरोक्तानुसार परीक्षण कर किसी भी प्रकार की जटिलता अथवा गंभीर खतरों की प्रारम्भिक अवस्था में ही पहचान कर पायेगी तथा आवश्यकतानुसार गर्भवती प्रसूता को आगे ए.एन.एम. या चिकित्सक को रेफर कर सकेगी ।

4.9 प्रश्न

1. अवलोकन व परीक्षण के मुख्य उद्देश्य क्या हैं?
2. प्रथमबार गर्भवती माता से मिलते वक्त किस प्रकार का वार्तालाप करना चाहिये ?
3. नवजात शिशु का वजन व लम्बाई किस प्रकार नापी जायेगी?
4. मूत्र में प्रोटीन (एलब्यूमिन) व भार्करा की जांच किस-किस प्रकार से करेंगे?
5. गर्भवती माता में रक्त की कमी (एनीमिया) की पहचान कैसे की जा सकती है?
6. स्वस्थ व्यक्ति में सामान्य तापक्रम, नाड़ी व भवसन की दर बताइये ।
7. मुंह से तापक्रम लेने के पूर्व किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिये?
8. मुख्यतया नाड़ी का स्पन्दन कहाँ-कहाँ से महसूस कर सकते हैं?
9. सामान्य सिस्टॉलिक रक्तचाप कितना होना चाहिये तथा रक्तचाप लेने की विधि बताइये ।
10. गर्भवती माता के शारीरिक परीक्षण मे किस-किस प्रकार का बदलाव दिखाई देने पर गम्भीर खतरों का एहसास होगा?

इकाई-5 अपूतीयता (एसेप्सिस)

इकाई की रूपरेंखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 अपूतीयता या एसेप्सिस

5.2.1 परिभाषा

5.2.2 सिद्धान्त

5.3 प्रसूति स्थल का चयन एवं स्वच्छता

5.4 हाथों को धोना

5.4.1 हाथ धोने के उद्देश्य एवं महत्व

5.4.2 हाथ धोने हेतु सामग्री

5.4.3 सामान्य नियम

5.4.4 विधि

5.5 प्रसूति उपकरणों का निर्जीवाणुकरण / विसंक्रमण

5.5.1 निर्जीवाणुकरण (स्टेरिलाईजेशन) एवं विसंक्रमण

5.5.2 विसंक्रमण की पद्धतियाँ

5.5.3 प्रसूति उपकरणों / सामान का घर पर विसंक्रमण

5.6 विसंक्रमण एवं विसंक्रामक

5.6.1 विसंक्रामकों का वर्गीकरण

5.7 सारांश

5.8 प्रश्न

5.0 प्रस्तावना

हमारे देश में जनसंख्या का काफी भाग गाँवों, कच्ची बस्ती, ढाँणियो में रहता है जहां पर्याप्त चिकित्सा सुविधा नहीं है । चिकित्सा सुविधा के अभाव मे वहां प्रसव कराने का कार्य परम्परागत दाइयों, अप्रशिक्षित महिलाओं व रिश्तेदार महिलाओं तथा नायणों द्वारा कराया जाता है । इन प्रसव कराने वाली सभी महिलाओं को अपूतीयता (एसेप्सिस) प्रक्रिया का ज्ञान नहीं होता है जिसके फलस्वरूप प्रसव के दौरान माता तथा नवजात शिशु मे गम्भीर संक्रमण फैल सकता है । जिससे प्रसवकाल के दौरान माता की मृत्यु की सम्भावना बढ़ जाती है उसी प्रकार संक्रमण से जन्म के समय अथवा जन्म लेने के बाद, पहले सप्ताह मे नवजात शिशु की मृत्यु की सम्भावनाएं बढ़ जाती है । इस प्रकार अपूतीयता (एसेप्सिस) प्रक्रिया का पालन नहीं करने पर मातृत्व मृत्यु दर व शिशु मृत्यु दर में बढ़ावा होता है । इस इकाई में हम प्रसूति कराते वक्त अपूतीयता (एसेप्सिस) तथा उपयोग मे लिये जाने वाले औजारों व अन्य सामान का विसंक्रमण कैसे करेंगे व उन्हें किस प्रकार से कार्य मे लेंगे, की तकनीक का अध्ययन करेंगे ताकि गर्भवती

माता व नवजात शिशु को प्रसवकाल के दौरान कोई संक्रमण नही लगे व मां तथा नवजात शिशु का स्वास्थ्य ठीक रहे ।

5.1 उद्देश्य

प्रसूति विज्ञान सहायिका को अपूतीयता (एसेप्सिस) विधि व उपयोग मे लेने वाले औजार व अन्य सामान के विसंक्रमण करने की विधि का ज्ञान होना आवश्यक है ताकि थोडी सी हमारी असावधानी से गर्भवती माता व नवजांत शिशु को किसी प्रकार संक्रमण नही मिले एवं संक्रमण से उसे बचाया जा सके । अगर प्रसव कराने वाली दाई संक्रमण फैलने से रोकने के लिये अपूतीयता (एसेप्सिस) विधि को प्रयोग में लाये तथा उसे प्रसव के दौरान उपयोग में आने वाले समस्त सामान व औजार के विसंक्रमण करने की विधियों का ज्ञान हो तो मातृ मृत्यु दर (एम.एम.आर.) व शिशु मृत्युदर (आई.एम.आर) की दर को घटाया जा सकता है । प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न के बारे में जानकारी रख सकेगी :

1. अपूतीयता (एसेप्सिस) की अवधारणा व सिद्धान्त ।
2. प्रसूति स्थल का चयन व स्वच्छता ।
3. प्रसूति कराने के पूर्व हाथों को धोना ।
4. प्रसूति उपयरणों व साधनों का निर्जीवाणुकरण (स्टेरिलाइजे)
5. विसंक्रमण की परिभाशा व विधियां ।
6. संक्रमण की रोकथाम में हर समय उपयोग मे लाये जाने वाले भाब्दों की व्याख्या करना ।
7. विसंक्रमण तथा अपूतीयता के नियमों की पालना ।
8. उपयोग में लिये गये औजार तथा अन्य सामान का सही तौर पर निपटारा करना व उसके महत्व को समझना ।

5.2 एसेप्सिस (अपूतीयता)

यहाँ अपूतीयता (एसेप्सिस) का मतलब प्रसूती विज्ञान सहायिका द्वारा ऐसी प्रक्रिया अपनाना है जिसके माध्यम से प्रसव कराते वक्त संक्रमण से मुक्ति व माता तथा नवजात शिशु को सूक्ष्म जीवाणुओं के सम्पर्क में आने से रोकना है ताकि प्रसव के दौरान माता व नवजात शिशु को किसी प्रकार का संक्रमण प्राप्त न हो । इसके अन्तर्गत प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा आधारभूत कौशलय में वृद्धि कर अधिकांश माताओं, नवजात शिशुओं की मृत्यु का निवारण किया जा सकता है अर्थात् एसेप्सिस द्वारा प्रसूता एवं नवजात शिशु के संक्रमण का निवारण सम्भव है ।

हम कह सकते हैं कि इस अपूतीयता का मुख्य उद्देश्य प्रसूति के दौरान व पश्चात, गर्भाशय के संक्रमण तथा नवजात शिशु में किसी भी प्रकार के संक्रमण (जिससे मुख्य रूप से टिटनेस (धनुर्वात) भी शामिल है) की रोकथाम करना है ।

5.2.1 परिभाषा

एसेप्सिस रोगोत्पादक अथवा संक्रामक जीवाणुओं की अनुपस्थिति है अर्थात, संक्रमण रहित प्रसव करवाना तथा प्रसव के दौरान उसे रोगोत्पादक सूक्ष्म जीवों के सम्पर्क में आने से रोकना है ताकि प्रसव के बाद माता व नवजात शिशु में किसी प्रकार का संक्रमण न फैल सके ।

5.2.2 सिद्धान्त

चिकित्सीय अपूतीयता में वे सभी पद्धतियाँ सम्मिलित हैं जो मरीज व उसके पर्यावरण को रोगजनक जीवो द्वारा रोग संचारित होने से बचाने के लिये प्रयोग में की जाती हैं । यहां प्रसवकाल के दौरान संक्रमण की रोकथाम हेतु कीटाणुनाशक विधि निम्न सिद्धान्तों के आधार पर कार्य करेगी ।

I. सूक्ष्म जीवजन्तुओं का शरीर के किसी विशिष्ट भाग में प्रवेश न हो पाए इस हेतु अपनाए जाने वाले सिलसिलेवार कदमों के कारण यह तकनीक उपलब्ध कराई जाती है ।
II. त्वचा एवं अत:स्थित आवरणों पर मौजूद सूक्ष्म जीव जन्तुओं को खत्म करके या उनकी संख्या न बढने दिये जाने से संक्रमण रोका जाना है ।
III. प्रसव करवाते समय सही व स्वच्छ तरीके से हाथ धोना आवश्यक है ।
IV. प्रसवकाल के दौरान, एन्टिसेप्टिक तकनीकों का प्रयोग करना चाहिये ।
V. औजारों का निर्जीवाणुकरण एवं औजारो को फिर से उपयोग में लाने हेतु सही ज्ञान व अनुभव का प्रयोग करना चाहिये ।
VI. मलिन एवं अप्रयुक्त वस्तुओं का सही निस्तारण करना आवश्यक है ।
VII. सामान्य स्वच्छता के नियमों की पालना करने से अपूतीयता मे सहायता मिलती है ।
VIII. रोगाणु मारक पदार्थ या अभिकर्मक की क्षमता जांचते समय जीवाणुओं की स्वभाविक प्रवृति को ध्यान मे रखना आवश्यक है।

5.3 प्रसूति स्थल का चयन व उसकी स्वच्छता

प्रसूति विज्ञान सहायिका को सर्वप्रथम गर्भवती माता व उसके परिवार वालों को समझाना चाहिये कि प्रसव हमेशा चिकित्सालय में प्रशिक्षित चिकित्सक या नर्स के पास ही कराना चाहिये ताकि प्रसव के दौरान किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होवे और सभी प्रकार के प्रसव के दौरान होने वाले खतरों से बचा जा सके । परन्तु गाँवो, ढाँणियों कच्ची बस्तियों में पर्याप्त चिकित्सा सुविधा न होने के कारण, अज्ञान व अशिक्षा के कारण अधिक से अधिक प्रसूतियां घरों पर ही परम्परागत दाइयों, अप्रशिक्षित महिलाओं । व रिश्तेदार महिलाओं द्वारा कराई जाती है । प्रसव घर पर कराने का निर्णय लेने पर, प्रसव के पूर्व सबसे पहले घर पर प्रसूति कराते समय प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा सर्वप्रथम घर पर स्वच्छ जगह का चयन करना है ।

घर पर ऐसे कमरे को चुनना है जहां पर्याप्त मात्रा में रोशनी व हवा आ रही हो तथा इसके साथ ही प्रसव के दौरान एकान्त भी मिल सके । अगर उस -कमरे मे खिड़की या रोशनदान से सूर्य की किरणें आती हो तो और ज्यादा अच्छा रहेगा । जहाँ तक हो सके कमरा पक्का होना चाहिये अर्थात कमरे की फर्श पत्थरों की होनी चाहिये ताकि प्रसव के पहले उस जगह को

पर्याप्त साबुन पानी व किटाणुनाशक घोल (डिटाल या फिनाइल) से धोया जा सके । अगर नीचे की फर्श पक्की नही हो व कच्ची हो तो प्रसव काल की सम्भावित दिनांक के पहले उस जगह को साफ ठीक ठाक करके राख से लिपवा देना है विशेष ध्यान रखे कि गोबर से उस जगह को नही लिपवावें । ताकि प्रसव वाले दिन वह जगह सूखकर अच्छी हो जाये तथा प्रसव के पूर्व उस जगह को साफ कपड़े से पोछ देना है । अगर उपलब्ध हो तो प्रसव पूर्व उस जगह रबर अथवा प्लास्टिक की कीटाणुरहित चादर का उपयोग करना है । इसके साथ ही प्रसव के पूर्व घर पर साफ चादर या बड़े कपड़े के टुकडों को उबलते पानी मे उबालकर साबुन से साफ धुलवाना है तथा उन्हें सूर्य की रोशनी में सुखाना है जब वे सूख जायें, उन्हे समेट कर घर पर साफ जगह रखना है ताकि प्रसव के समय आसानी से मिल सके । प्रसव के पूर्व इस साफ धुली हुई चादर या कपड़े के बडे टुकड़े को नीचे जमीन पर बिछवाकर प्रसव वाली माता को उस पर लिटाया जाता है पूर्ण रूप. से ध्यान रखना है कि प्रसव के दौरान उस जगह एकान्त रहे । अगर आवश्यक हो तो कपड़े का पर्दा बांध देना चाहिये ।

इस प्रकार प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा एक बार प्रसव घर पर कराने का निर्णय लेने के पश्चात उपरोक्त अनुसार प्रसव कराने वाले स्थान का चयन कर तैयारी करदारी है । मुख्यरूप से इस बात का ध्यान रखना है कि वह जगह जहां प्रसव कराया जाना है, स्वच्छ होनी चाहिये ।

5.4 हाथों का धोना

हालाकि हमें हमारे हाथ साफ दिखाई देते हैं परन्तु अगर इन्हें विशेष कांच द्वारा देखा जाय तो उस पर भारी संख्या में सूक्ष्म जीवाणु दिखाई देंगे । अगर हम अपने हाथ अच्छी तरह से साफ नहीं करेंगे तो इन दूशित हाथों से प्रसूति काल के दौरान माता व नवजात शिशु को बडी संख्या मे सक्रमण फैल सकता है और संक्रमण के कारण माताओं व नवजात शिशुओं की मृत्यु तक हो सकती है ।

5.4.1 हाथ धोने के उद्देश्य एवं महत्व

चिकित्सकीय कार्य करने के पूर्व हमें हमारे हाथ अच्छी तरह से धोने हैं ताकि जहाँ तक सम्भव हो सके हमारे हाथ पर उपस्थित कीटाणुओ की कमी हो सके ।

प्रसूति कर्म में हाथ धोने की आवश्यकता निम्न अवसरों पर जरूरी है :

I. गर्भवती माता व शिशु की शारीरिक जांच करने के पूर्व व जांच पूर्ण होने के बाद ।
II. प्रसव कराने से पूर्व एवं पश्चात (आवश्यकतानुसार प्रसव कर्म के मध्य में भी हाथ धोने पड़ सकते हैं)
III. किसी भी संक्रमित वस्तु / उपकरण को छू लेने के पश्चात्
IV. एसेप्सिस की स्थिति मे कभी भी शंका होने पर
V. विसंक्रमित वस्तुओं को स्पर्श करने से पूर्व (स्कविंग एवं ग्लोबिंग आवश्यक है)

5.4.2 हाथ धोने हेतु सामग्री

हाथ धोने मे निम्न सामग्री होनी चाहिये

I. साबुन (मय साबुदानी) ।

II. साबुनदानी रखने का छोटा स्टेज ।

III. हाथ धोने व नाखूनो से गन्दगी निकालने के लिए ब्रश ।

IV. नल का बहता पानी अगर नल नही हो तो नलदार बाल्टी ।

5.4.3 सामान्य नियम

हाथ धोते समय हमे मुख्यतया निम्न नियमों का पालन करना चाहिये ।

I. हाथों को हथेलियों से कोहनी की ओर धोना है ।

II. ब्रश की सहायता से हाथों को रगड़ना है व नाखुनों के अन्दर से गन्दगी बाहर निकालनी है।

III. हाथ धोने के पूर्व नाखून बढ रहे हों तो काट देना है ।

IV. हाथ धोने से पूर्व अंगुलियो मे अंगूठी हाथ मे घडी/चूडी / धागा पहन रखा हो तो निकाल देना है ।

V. हाथ नल के बहते पानी से धोना है ।

VI. हाथ धोने के बाद किसी अन्य वस्तु से हाथ छूए नहीं, इसका ध्यान रखना है ।

VII. हाथों को धोने के बाद पोछना नही है, हथेलियों को उपर की ओर रखकर हवा से सूखने देने हैं इसके बाद दस्ताने पहनने है।

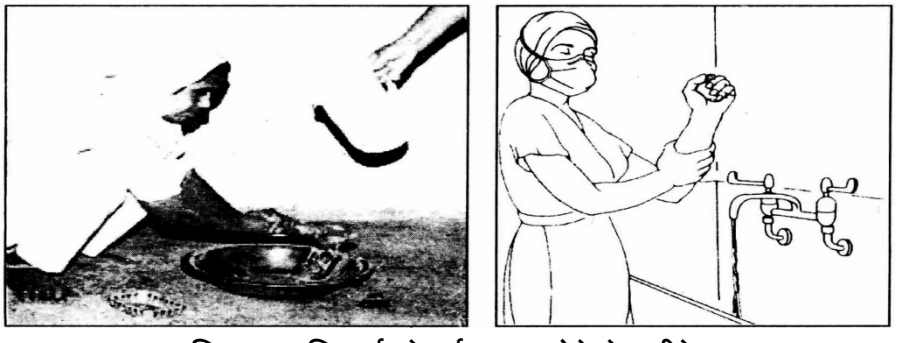

चित्र : प्रसूति कर्म से पूर्व: हाथ धोने के तरीके

चित्र : हाथ धोना तत्पश्चात् दस्ताने (ग्लोब्ज) पहनना

5.4.4 विधि

प्रसूति विज्ञान सहायिका को गर्भवती माता का किसी भी प्रकार परीक्षण व निरीक्षण करने के पूर्व तथा प्रसव कराने के पहले स्वच्छ रूप से अपने हाथ धोने है । हाथ धोते समय उसे निम्न बिन्दुओं का पूर्ण रूपेण ख्याल रखना है :

1. सर्व प्रथम अपने हाथों के नाखूनों को देखना है अगर नाखून बढे हुए है तो उन्हे काटना है । (बड़े नाखून संक्रमण को बढावा देते हैं ।)
2. अंगुलियो मे अगर अंगूठियां पहनी हुई हो तो उन्हे निकाल देना है साथ ही हाथो में जो चूडियां, घडी पहनी हुई हों उन्हे भी निकाल देना है, अगर धागा बांधा गया हो तो उसे भी हटा देना है ।
3. जहां तक सम्भव हो हाथों को बहते पानी मे धोना चाहिये इसके लिये हाथ धोने के लिये नल का उपयोग करना है अगर नल न हो तो ऐसी बाल्टी रखनी चाहिये जिसमें नल लगा हुआ हो ताकि हाथ धोते समय पानी बराबर बहता रहे । अगर नल वाली बाल्टी की भी सुविधा न हो तो एक सहायक का सहयोग लेना है जो जग या लोटे द्वारा हाथ धोते समय बराबर पानी डालता रहे ।
4. हाथों को हमेशा कुहनी से धोते हुए नीचे की और धोना है चूंकि कुहनी की तुलना में हाथ अधिक संदूषित होते हैं । अत: बहते हुए पानी को कुहनी से हाथों की ओर आने देना है ।
5. साफ पानी से हाथ धोने के बाद साबुन लगाना है और झाग बनाते हुए उन्हें आपस में अच्छी तरह रगड कर धोते रहना है।
6. अंगुलियों से एक दूसरे की अंगुलियों के बीच के स्थान को रगड़ना है तथा प्रत्येक अंगुली को अलग अलग धोना है ।
7. हाथ धोने की ब्रश द्वारा हथेलियों को, अंगुलियों के बीच कें भाग को तथा नाखूनों को अच्छी तरह से रगड़ते हुए धोना है तथा ब्रश की सहायता से नाखूनों मे जो गन्दगी रह गई है. उसे निकालना है ।
8. उपरोक्त अनुसार साबुन को दो से तीन बार लगाकर कुहनी से हथेलियों की ओर हाथ धोना है तत्पश्चात साबुन को वापस सोप-केस या साबुनदानी मे रख देना है ।
9. साबुन से हाथ धोने के बाद बहते साफ पानी से कोहनी से हथेलियों की ओर 5-10 मिनट तक हाथों को धोना है । तथा बहते पानी को डालते रहना है ।
10. हाथ धुल जाए, उसके बाद किसी टावल या कपड़े से हाथों को पोंछना नही है ।
11. हाथों को हवा से ही सूखने देना चाहिये तथा इस दौरान ध्यान रखें कि हाथ किसी अन्य वस्तु से छू न जाएं ।
12. हाथ धोते समय यदि वे सिंक या किसी अन्य वस्तु से संयोगवश छू जाए तो पुन: सम्पूर्ण प्रक्रिया दोहराते हुए, वापस हाथ धोने हैं । नल को बन्द करना हो तो कुहनी के ऊपर के भाग से अथवा किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा बन्द करना है।
13. हाथों को सुखाने के पश्चात्, विसंक्रमित दस्तानों को पहनना चाहिये । यथासम्भव डिस्पोजेबल दस्ताने ही प्रयोग में लेते चाहियें ।

5.5 प्रसूति उपकरणो का निर्जीवाणुकरण (स्टेरिलाइजेशन / विसंक्रमीकरण)

5.5.1 निर्जीवाणुकरण (स्टेरिलाइजेशन) एवं विसंक्रमण

निर्जीवाणुकरण : वह प्रक्रिया जिसमें जीवाणुओं को समूल रूप से (स्पोर्स सहित) नष्ट कर दिया जाता है, निर्जीवाणुकरण (Sterilization) कहलाती है । इसमे रोगजनक, गैररोगजनक वाइरस सहित सभी जीवाणु समाप्त कर दिये जाते हैं ।

विसंक्रमण : वह प्रक्रिया है जिसमें अधिकाश संक्रामक कारको को नष्ट कर दिया जाता है । इसमें विभिन्न प्रकार के विसंक्रामक पदार्थों (disinfectar) का प्रयोग किया जाता है ।

5.5.2 विसंक्रमण की पद्धतियाँ :

विसंक्रमण हम किसी भी विधि से करें हमारा मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिये कि संदूषित वस्तु पर उपस्थित समस्त सूक्ष्मजीवों का उनके अण्डाणुओ सहित सम्पूर्ण विनाश हो जाय । विसंक्रमण, चिकित्सालय मे विभिन्न विधियों के द्वारा किया जाता है, जिसमें प्रमुख निम्न हैं :

1. उच्च दाब पर भाप विसंक्रमण (ऑटोक्लेविंग)
2. उबालना
3. वाष्परहित या शुष्क उश्मा द्वारा
4. रासायनिक विसंक्रमण या गैस विसंक्रमण (फ्यूमिगेशन)
5. अन्ट्रावायलेट प्रकाश अथवा विकिरण किरणो द्वारा विसंक्रमण
6. शीतल विसंक्रमण

5.5.3 प्रसूति उपकरणों / सामान का घर पर विसंक्रमण

प्रसव क्रिया, प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा घर पर ही सम्पन्न करवानी होती है । अत: प्रसव काल के समय उपयोग में आने वाले उपकरणों का विसंक्रमणीकरण भी घर पर ही करना पडता है । मुख्य रूप से घर पर विसंक्रमणीकरण करने की घरेलू पद्धतिया निम्न है :

A. प्रेशर कुकर का उपयोग
B. उबालना
C. वाष्परहित ऊष्मा
D. सेकना
E. धूप में खुला रखकर सुखाना

प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रसव क्रिया सम्पन्न कराने के लिये जो किट उपलब्ध कराया जाता है उसमे मुख्य रूप से नई ब्लेड या कैंची, दो साफ धागे, नाल ढकने का साफ कपड़ा, साफ

चादर, आट्रिफॉरसेप दस्ताने इत्यादि होते हैं । इन वस्तुओं को प्रसूति विद्या सहायिका द्वारा घर पर ही निम्न प्रकार विसंक्रमित किया जा सकता है ।

चित्र : प्रसव हेतु आवश्यक सामान

(क) प्रेशर कुकर का उपयोग

यह भाप सहपात्र (अटोक्लेव) की तरह ही दबावयुक्त भाप से वस्तुओं को विसंक्रमित करता है जों घर पर आसानी से कर सकते हैं । इसमें कुकर इतना बड़ा लेना होता है जिससे कि सामान अन्दर आ सके ।

इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम कुकर को साफ धोना है तथा उसमे आवश्यकतानुसार स्वच्छ पानी भरते हैं । इसके बाद पहले कुकर में छिद्रयुक्त पात्र (छलनीनुमा) रखना है और उसके ऊपर विसंक्रमित करने वाले उपकरण जैसे धागा, कैंची, आर्ट्रिफॉरसेप, दस्ताने, चिटल फारसेप इत्यादि । इसके बाद कुकर पर सही तरीके से ढ़क्कन लगाकर ढक देना है । ध्यान रखना है कि ढ़क्कन के किनारों से वाष्प बाहर लीक न हो । इसके बाद कुकर के ढ़क्कन पर वाष्प नियन्त्रक (सीटी) को सही तरह से जमा कर कुकर को स्टोव पर गर्म होने रख देते हैं ।

कुकर में पानी के उबलने की स्थिति में आने के बाद 20-30 मिनट की अवधि तक विसंक्रमण की प्रक्रिया करते हैं । इस समय के पश्चात स्टोव या गैस को बन्द कर कुकर को नीचे उतारते है । तथा इसमें जो भाप है उसको निकालने के लिये वाष्प नियन्त्रक (सीटी) को धीरे-धीरे ढ़ीला करते हैं ताकि आसानी से कुकर में स्थित वाष्प बाहर निकल जाये । जब पूर्ण वाष्प बाहर निकल जाये तो धीरे-धीरे कुकर के ढक्कन को खोल देना है । उसके पश्चात अगर कुकर में ज्यादा पानी न हो और छलनी जिसके ऊपर सामान रखा है वह पानी के लेवल से काफी ऊपर हो तो पुरे खुले हुए ढक्कन को ही बाहर धूप में रखकर वस्तुओं को सूखने देना हैं, परन्तु खुले हुए कुकर में मक्खी या अन्य कोई कीटाणु न जाए, उसे जालीदार कवर से ढक देना है । कुछ समय तक धूप में रखने पर जब कुकर में रखी वस्तुएं पूर्ण रूप से सूख जाये । इन्हें स्वच्छ, सूखे ढक्कनदार ट्रे या बर्तन में रख देना है । ध्यान रखना है कि जिस बर्तन में ये वस्तु रखी हो वह भी विसंक्रमित हो अर्थात इस बर्तन को भी साफ धोकर एक बड़े बर्तन में 30 मिनट तक उबलते पानी में उबलाना है तत्पश्चात इसे उपकरणों के रखने के लिये काम में लेना है ।

उपरोक्त विधि द्वारा दस्ताने, धागा, कैंची, फॉरसेप (नये ब्लेड), इत्यादि को विसंक्रमित कर सकते हैं ।

(ख) उबालना

उबालना विसंक्रमण का पुराना तरीका है । घरों में उपकरणों का विसंक्रमण उबालकर किया जा सकता है । इसके लिए स्वच्छ ढक्कनदार तपेली या अन्य पात्र का उपयोग किया जाता है । ध्यान इस बात का रखना है कि तपेली या वह पात्र इतना बडा होना चाहिये कि उसमें विसंक्रमण करने वाले सभी उपकरण आसानी से प्रविष्ट हो सकें ।

सभी उपकरण व वस्तुओं को जिनका उपयोग प्रसव काल में होना है उन्हें साफ धोकर तपेली में रख देते हैं व उसमें पर्याप्त स्वच्छ पानी डालकर उस तपेली / तपेले को स्टोव पर गर्म होने रख दिया जाता है । जब पानी उबलने लग जाये उसके बाद 30 मिनट तक इसे उबलते रखना है । ध्यान रहे इस उबलने की प्रक्रिया के दौरान उस बर्तन का ढक्कन ढंग से बंद कर रखा हो । जब 30 मिनट तक उबाल लिया जाये तो स्टोव को बन्द कर तपेली / तपेले को नीचे उतार दिया जाता है व सभी उपकरणों व वस्तुओं को चिटल फॉरसेप / चीमटे से निकाल कर स्वच्छ ढक्कनदार विसंक्रमित ट्रे / उपकरण में रख देते हैं ।

(ग) वाष्परहित ऊष्मा

इसके अन्तर्गत स्टील या पीतल या लोहे के तवे तथा प्रेस का उपयोग किया जाता है । इसके अन्तर्गत कुछ सामान जैसे कपड़े, पट्टियों को विसंक्रमित किया जा सकता है । इस प्रक्रिया में तवे को स्टोव के ऊपर रखकर गर्म किया जाता है और तवे के ऊपर के भाग पर कपड़े के टुकड़े या पट्टियॉ रख दी जाती हैं तथा इन्हे कुछ समय, 5-10 मिनट तक गर्म किया जाता है । इसी प्रकार प्रेस को गर्म कर उसे कपडों के दुकडों व पट्टियों पर घुमाकर कुछ हद तक विसंक्रमित स्तर प्राप्त किया जा सकता है ।

(घ) **सेकना**

यह हम पट्टियों को अंगारों या शुष्क ऊष्मा के सामने पकड़कर कुछ समय तक गर्म कर, इसको सींधे ड्रैसिंग-पट्टी बांधने के उपयोग में लिया जा सकता है । इसमें अगर नवजात शिशु के नाल पर पट्टी करनी हो, तो पहले पट्टी को सीधा शुष्क ऊष्मा (अंगारों) पर हल्का गर्म करके पट्टी बांधी जा सकती है ।

(य) धूप में खुला रखकर सुखाना

इसके अन्तर्गत मुख्यतया चादर व कपडों को, जो प्रसवक्रिया के दौरान उपयोग मे लेते हैं, विसंक्रमित किया जाता है । सर्वप्रथम कपडों को व चादर को गर्म पानी में 30 मिनट तक उबालते हैं तत्पश्चात साबुन से साफ धोते हैं । इसके पश्चात इन्हें स्वच्छ जगह धूप में आसानी से सूखने दिया जाता है । जब वे पूर्ण रूप से सूख जावे उन्हें समेटकर स्वच्छ जगह रख देते हैं तथा प्रसवकाल के दौरान आवश्यकतानुसार इन्हें उपयोग मे लेते है ।

इस प्रकार उपरोक्त विधियों का प्रयोग कर प्रसूति विज्ञान सहायिका प्रसवावस्था की क्रिया सम्पन्न कराने के दौरान वस्तुओं का विसंक्रमण कर सकती हैं ।

5.6 विसंक्रमण एवं विसंक्रामक

विसंक्रमण का शाब्दिक अर्थ रोगाणुनाशन होता है अर्थात सूक्ष्म जीवों का विनाश अथवा उनको उस स्तर तक कम करना है जो सामान्यत: स्वास्थ्य के लिये हानिकारक न हों । यहां हम कहेंगे कि यह निर्जीवाणुकरण (स्टेरिलाइजेशन) के समान सूक्ष्म प्रक्रिया नही है । इसका उपयोग उन्ही परिस्थितियो में किया जाता है जहां सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या मे पूरी तरह कमी करना, उनका विनाश करना अथवा उनको उस स्तर तक कम करना जो सामान्यत: रोगी और कार्यरत कर्मचारियों की सुरक्षा के लिये पर्याप्त हो । वस्तुएँ जिनका रोगाणुनाशन किया जाना है उन्हें पहले अच्छी तरह साफ धोया जाता है उसके बाद रोगाणुनाशन की प्रक्रिया अपनाई जाती है । इसमे सर्व प्रथम वस्तुओं को गर्म पानी व डिटर्जेन्ट से धोकर, लगातार उबालने से या उपयुक्त रासायनिक अभिकर्मक का उपयोग कर काफी हद तक सूक्ष्म जीव जन्तुओं का निपटारा किया जा सकता है । इस हेतु विभिन्न विसंक्रामक पदार्थों या अभिकर्मको का प्रयोग किया जाता है ।

5.6.1 विसंक्रामकों का वर्गीकरण

(क) **प्राकृतिक विसंक्रामक :-** इसके अन्तर्गत मुख्यतया सूर्य का प्रकाश व हवा का उपयोग किया जाता है । यहां प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा सर्वप्रथम प्रसूति हेतु स्थान का सही रूप से चयन किया जाना है । प्रसूति स्थल एवं प्रसूति के दौरान उपयोग मे लाने वाले कपड़े, चादरों का इस विधि से रोगाणुनाशन किया जाता है जिसके अन्तर्गत कपडों को और चादर को पहले डिटरजैन्ट व गर्म पानी से धोकर साफ जगह सूर्य के प्रकाश में सुखा दिया जाता है उसके बाद उन्हें प्रेस कर समेटकर साफ जगह रख दिये जाते हैं । तथा प्रसूति के समय इनका उपयोग किया जाता है । हाँलाकि यह पूरी तरह रोगाणुनाशन नहीं है परन्तु काफी हद तक यह सूक्ष्म जीवाणुओं में कमी करता है ।

(ख) **भौतिक अभिकर्मक :-** इसके अन्दर मुख्यतया शुष्क ऊष्मा, नम ऊष्मा व उबालने की प्रक्रिया है ।

प्रसूति के समय निकलने वाले स्त्राव, गन्दे कपड़े, नाल आदि का निस्तारण जला कर किया जाता है । भस्मीकरणं, विसंक्रमण की प्रभावी तकनीक है ।

नमी युक्त ऊष्मा के तहत उबालने की प्रक्रिया अपनाई जाती है इसके अन्तर्गत प्रसूति के समय काम आने वाली वस्तुएं जैसे दस्ताने, धागा, फॉरसेप, रबर का टुकडा (मेकिनटोश) इत्यादि का रोगाणु नाशन किया जाता है । पहले इन वस्तुओं को साफ धोया जाता है इसके बाद इनको पानी मे रखकर 15-30 मिनट तक उबाला जाता है । यहा इस बात का विशेष ध्यान रखना है कि जो वस्तु उबाली जाती है वह पूर्ण रूप से पानी मे डूबी हुई होनी चाहिये।

(ग) **रासायनिक कारक :-** ऐसी वस्तुएं जो उबालने से या भाप के सम्पर्क में आने से खराब हो सकती हैं उनका रोगाणुनाशन करने के लिये रासायनिक विसंक्रामकों का प्रयोग किया जाता है । जैसे धारदार वस्तुएं, ब्लेड या कैंची, प्लास्टिक की वस्तुएं, थर्मामीटर इत्यादि ।

इनमें मुख्यतया डिटॉल, सेवलान, लायसाल, अल्कोहल, मेथिलेटेड हाइड्रोजन, पराक्साइड, पोटेशियम परमेगनेट, फारमलिन, फिनाइल, क्रिसाल, क्लोरीन, ब्लीचिंग पाउडर, आयोडिन(बिटाडिन), चूना, जेनशन वायलेट, मरक्यूरोक्राम, बोरिक अम्ल, इत्यादि सम्मिलित हैं । प्रसूति विज्ञान सहायिका अपनी सूझ-बूझ के अनुसार रासायनिक अभिकर्मको का उपयोग कर सकती है ।

सर्वप्रथम स्थान का चयन होने के बाद उस जगह को साफ धुलवाकर फिनाइनल की सहायता से वहां पौछा लगाकर सफाई करवाई जाती है ताकि वहां जीवाणुओं में कमी आ सके ।

नई ब्लेड हो तो उसे स्पिरिट की सहायता से साफ किया जाता है, अगर कैंची या सर्जिकल चाकू का उपयोग किया जा रहा हो तो उन्हें पहले सेवलान या डिटाल में पूर्ण रूप से डुबा कर रखा जाता है तथा जब इनका उपयोग करना हो, इन्हें इस रासायनिक अभिकर्मक में से निकालकर साफ पानी से धोते हैं । बाद में स्पिरिट से सफाई कर उसको उपयोग में लेते हैं ।

इसी प्रकार थर्मामीटर को 1:6 के अनुपात के सेवलान के धोल में डुबोकर रखा जाता है । तत्पश्चात जब उपयोग करना हो, तब इसे साफ पानी से धोने के पश्चात काम मे लिया जाता है।

इसी प्रकार नाल काटने के बाद बच्चे की नाभि के भाग पर बिटाडिन लगाया जाता हे । यहां विशेषकर ध्यान रखना है कि नवजात शिशु की नाल सूखी व साफ रहे इसके लिये उसे कीटाणुरहित गोज से साफ करना है तथा विटाडिन लगाकर उसे खुला छोड़ देना है । इसे कभी भी न तो ढक कर रखना है और न ही इस पर पट्टी बाधनी है । प्लेसेन्टा को जमीन में गाडना हो तो पहले गड्डा खोदकर ब्लीचिंग पाउडर डाल दिया जाता है बाद में प्लेसेन्टा डालकर उपर ब्लीचिंग पाउडर डालकर उस खड्डे को वापस भर देना है । तत्पचात प्रसूति विज्ञान सहायिका अपने खुद के हाथ धोकर डिटाल या सेवलान मे डुबोकर या स्पिरिट लगाकर कुछ हद तक रोगाणुनाशन कर सकती है ।

रासायनिक अभिकर्मकों से रोगाणुनाशन करने के पहले निम्न बातो का ध्यान रखना है :

1. यदि अधिक विश्वसनीय विधियां उपलब्ध हो तो रासायनिक कारक का उपयोग नहीं करना है ।
2. वस्तु को रासायनिक सम्पर्क में लाने के पहले उसकी सफाई आवश्यक है ।
3. सम्पूर्ण सतह का सम्पर्क आवश्यक है ।
4. विशिष्ट कार्यो के लिये अनुशांसित सान्द्रता का ज्ञान होना आवश्यक है ।
5. कोई भी कर्मक तुरन्त कार्य नहीं करता है । अत: हमें अनुसांसित प्रभावन अवधि ध्यान में रखनी चाहिये ।
6. उपकरण को रसायन मे से निकालने के पश्चात विसंक्रमित जल से धोना आवश्यक है । ध्यान रखना है कि उपकरण को तब तक धोना है जब तक वह रसायन पूरी तह से निकल नहीं जाये ।
7. रोगाणुनाशक पदार्थ की कार्यवाही हेतु अनुकूलतम अम्लीयता या क्षारीयता का ध्यान रखना चाहिये ।
8. अनुकूलतम तापक्रम पर रासायनिक अभिकर्मक अच्छा प्रभाव दिखाते हैं ।

9. जीवाणुओं की संख्या, रोगाणुनाशक पदार्थ की सक्रियता को उदासीन करने वाले विरोधी तत्व सी. पुराना हो जाने के कारण रोगाणुनाशक द्रव्य की असक्रियता रोगाणुनाशक द्रव्य की क्षीण (डायल्यूट) वाली अशुद्धता इत्यादि का ध्यान रखा जाना आवश्यक है ।

10. रोगाणुनाशक त्वचा एवं वस्तु के लिये हानि कारक नहीं होने चाहियें ।

11. रोगाणुनाशक कम खर्चीला व सुरक्षित हो तथा आसानी से उपलब्ध होना चाहिये ।

5.7 सारांश

स्वास्थ्य सेवाओं मे संक्रमण को रोकना संक्रमण हो जाने के बाद इलाज से ज्यादा आवश्यक है । अगर निर्जीवाणुकरण (स्टेश्लिाइजेशन) तथा विसंक्रमण (डिसइन्फेक्शन) की तकनीक का पूरा ध्यान रखा जाय व इनकी पालना की जाय तो संक्रमण को फैलने से पहले ही उसे रोका जा सकता है । अगर प्रसूति विज्ञान सहायिका प्रसवकाल के दौरान अपूतीयता (एसेप्सिस) विधि का उपयोग बताए अनुसार पालना करे तो गर्भवती माता व नवजात शिशु को किसी भी संक्रमण से बचाया जा सकता है. । इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए वर्णित इकाई से अपूतीयता के विभिन्न, सिद्धान्त, विधियों विसंक्रमण इत्यादि पर अध्ययन सामग्री प्रस्तुत कर प्रसूति विज्ञान सहायिका की जानकारी को बढ़ाने का प्रयास किया गया है ।

प्रसूति विज्ञान सहायिका उपरोक्त बातों का ध्यान रखते हुए आवश्यक तकनीकों का उपयोग कर प्रसूता व नवजात शिशु को संक्रमण से काफी हद तक बचा सकती हे ।

5.8 प्रश्न

I. अपूतीयता (एसेप्सिस) से आप क्या समझती हैं?

II. घर पर प्रसूति स्थल का चयन करते समय मुख्य रूप से किन-किन बातों का ध्यान रखेगी?

III. हाथ धोना क्यो आवश्यक है, हाथ धोने की विधि बताइये ।

IV. निर्जीवाणुकरण (स्टेरिलाइजेशन) से आप क्या समझती है?

V. प्रसूति विज्ञान सहायिका द्वारा घर पर विसंक्रमीकरण की कौन-कौन सी पद्धतियां अपनाई जा सकती है?

VI. विसंक्रमण (डिसइन्फेक्शन) से आप क्या समझती हैं?

VII. विसंक्रामकों का वर्गीकरण करें ।

इकाई-6 मातृ स्वास्थ्य

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 गर्भावस्था की सामान्य समस्याएँ एवं उनका सामान्य उपचार

6.2.1 गर्भावस्था की सामान्य समस्याएं

6.2.2 समस्याओं का उपचार

6.3 गर्भावस्था के खतरों की पहचान

6.3.1 गर्भावस्था में खतरे के लक्षण

6.4 सुरक्षित प्रसव की तैयारी

6.4.1 प्राथमिक सहायता किट

6.4.2 सुरक्षित प्रसव के हथियार

6.5 गर्भवती एवं प्रसूता हेतु परामर्श / रेफरल प्रणाली

6.6 सारांश

6.7 प्रश्न

6.0 प्रस्तावना

भारत एक विकासशील देश है । स्वास्थ्य सेवाएं अभी कमजोर तथा अपर्याप्त है । सुदूर इलाके में रहने वाली महिलाएं भाहर आकर अपनी जाँच नहीं करा सकती हैं । उनके स्वास्थ्य की जाँच के लिए सेवाएं हमें वहीं पहुंचानी होगी । गर्भावस्था सामान्य प्रकिया है ज्यादातर प्रसव गाँव में घरों में ही करे जाते हैं ।इसलिये दाइयों तथा सहायिकाओं को इतना ज्ञान देना जरूरी है जिससे वे इतनी योग्य हो जायें कि बता सकें गर्भावस्था के लक्षण क्या हैं और सामान्य समस्याओं को समझ कर उनका निराकरण कर सकें तथा खतरों को भांप कर गर्भवती को सुरक्षित हाथों मे पहुँचा सकें । साथ ही वह सुरक्षित तरीके से प्रसव करा सकें जिससे मातृ एवं शिशु मृत्यु दर कम हो सके । इस इकाई में हमारा उद्देश्य संक्षिप्त मे गर्भावस्था के विभिन्न परिवर्तनों से परिचित कराना है, जिससे प्रसूति विज्ञान सहायिका को प्रसव सम्बन्धी जानकारी मिले तथा वह गर्भावस्था, प्रसवकालीन तथा प्रसवोत्तर देखभाल कर सके ।

भारत में मातृ मृत्यु दर 34-44 प्रति जीवित जन्म है यानी एक लाख जीवित बच्चों को जन्म देने वाली माताओं में करीब 350-400 महिलाएँ मर जाती हैं । जबकि विकसित देशों मे यह बहुत ही कम है । वैसे गर्भ और प्रसव सामान्य प्राकृतिक अवस्थायें हैं परन्तु जटिल परिस्थितियों मे प्रसव एवं गर्भ से मृत्यु भी हो सकती है । आज भी गांव के अनपढ़ लोग गर्भावस्था और प्रसव के खतरों से अनजान हैं और अप्रशिक्षित दाइयों के हाथ मौत के शिकार हो रहे हैं । सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम की कोशिश है कि हर महिला गर्भावस्था के दौरान और प्रसव एवं प्रसव के बाद स्वस्थ रहे और उसका शिशु भी स्वस्थ हो । इस इकाई में इन सभी तथ्यों को वर्णित करने का प्रयास किया गया है ।

6.1 उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ कर प्रसूति विज्ञान सहायिका निम्न बातें सीख पायेंगी : -

1. गर्भावस्था के समय क्या-क्या परेशानियाँ आती हैं, उनका सामान्य उपचार क्या है और गर्भवती महिला को कब आगे रैफर करना चाहिए ।
2. गर्भकाल में खतरों के लक्षण पहचानना और रैफर कर सुरक्षित जगह पहुँचाना ।
3. प्राथमिक सहायता किट की सामग्री उपलब्ध करवा कर घर में प्रसव कराने वाली महिलाओं को स्वच्छ, सुरक्षित तरीके से प्रसव करवाना।
4. रैफर प्रणाली के विषय में जानकारी प्राप्त करना।

6.2 गर्भावस्था की सामान्य समस्याएं एवं उनका सामान्य उपचार

हर स्त्री विवाह के बाद माँ बनने की प्रक्रिया से गुजरती है । यह एक सामान्य प्रक्रिया है । पूरी गर्भावस्था में कई तरह के परिवर्तन आते हैं । ये परिवर्तन इस्ट्रोजन, प्रोजेस्ट्रॉन और अन्य हॉर्मोन्स से होते हैं । इससे कई लक्षण पैदा होते हैं जिनसे हम गर्भावस्था को माप सकते हैं । कभी-कभी ये कष्ट बढ़ कर उसे बैचेन कर देते हैं । इनसे महिला परेशान हो जाती है । ऐसी स्थिति में उसे उपचार की आवश्यकता होती है । कुछ सामान्य घरेलू इलाज से अधिकतर समस्या दूर हो जाती है । अक्सर बहुत सामान्य उपचार से ही उसे आराम हो जाता है । मगर कभी कभी यह समस्या बढ कर गंभीर रूप ले लेती है । ऐसी अवस्था में महिला को वरिश्ठ चिकित्सक के देखरेख की आवश्यकता होती है, अत: उसे उचित जगह रैफर करना आवश्यक होता है । यह उल्लेखनीय है कि गर्भधारण एक सहज प्रक्रिया है । इसमें कुछ परेशानियां होना सामान्य है, जिनको महिला सरलता से निभा लेती उल्लेखनीय है कि गर्भधारण एक सहज प्रक्रिया है । इसमें कुछ परेशानियां होना सामान्य है, जिनको महिला सरलता से निभा लेती है।

6.2.1 गर्भावस्था की सामान्य समस्याएं

- सुबह जी मिचलाना या उल्टी आना
- बार-बार पेशाब आना
- सफेद पानी आने की शिकायत
- कब्ज रहना
- कमर दर्द
- चक्कर आना
- छाती में जलन होना
- सांस लेने में तकलीफ होना
- थकावट और शरीर में ऐंठन होना
- पेट दर्द
- पैरों में सूजन आना
- खुजली जननांग एवं शरीर मे नसों का फूल जाना इत्यादि

6.2.2 समस्याओं का उपचार

1. प्रातःकालीन जी मिचलाना व उल्टी आना

यह हॉर्मोन परिवर्तन के कारण होता है । अधिकतर दोपहर या शाम तक जी मिचलाना ठीक हो जाता है । यह परेशानी खड़े होने या बैठने पर अधिक होती है । तनावग्रस्त महिला में भी यह परेशानी अधिक मिलती है ।

सामान्य उपचार

- महिला को अधिक तरल आहार, पेय व ओ आर एस (O R S) दिया जाना चाहिए जिससे शरीर में जल की कमी न हो ।
- उसे लम्बे समय तक लेट कर आराम करना चाहिए ।
- खाने में दूध, दही, खिचड़ी, दलिया, बिस्कुट. टोस्ट, आइसक्रीम. शिकंजी आदि देना चाहिए।
- घर के लोगों का व्यवहार सहानुभूतिपूर्वक होना जरूरी है ।
- उल्टी रोकने के लिये घरेलू नुस्खे भी लाभप्रद होते हैं ।

रैफर की स्थिति

- अगर प्राथमिक उपचार से उल्टी नहीं रूक रही हैं ।
- उसे बार-बार चक्कर आ रहे हैं ।
- महिला के शरीर में पानी की कमी के लक्षण हों, जैसे जीभ सूखी होना, आँखें धँस जाना आदि ।
- अगर पहले तीन महीने के बाद भी उल्टी हो रही हों ।

2. बार-बार पेशाब आना

गर्भकाल के पहले तीन महीनों तथा अंतिम दो महीनों मे ऐसा होना स्वाभाविक है । यह गर्भाशय द्वारा मूत्र की थैली पर दबाव पड़ने से होता है ।

उपचार

- सोते समय महिला को कम पानी पीने को कहे ताकि बार-बार जागना न पड़े ।
- योनि मार्ग को साफ रखें ।

रैफर की स्थिति

- अगर पेशाब में जलन होती हो या बुखार आता हो (पेशाब का संक्रमण (इन्फेक्शन) हो सकता है ।)

3. सफेद पानी की शिकायत

गर्भावरथा में सामान्य अवस्था से थोड़ा अधिक स्राव होना सामान्य है । यह रंगहीन, गंधहीन होता है ।

उपचार

- जननांग स्वच्छ रखने को कहें ।
- यौन संबंध में सतर्कता रखनी चाहिए ।
- निरोध का प्रयोग भी अच्छा तरीका है ।

रैफर की स्थिति

– अगर जलन, दर्द, खुजली या सूजन हो, पीला या हरापन हो । (गंधयुक्त हो तो इसका कारण निश्चित ही संक्रमण' है ।)

4. कब्ज बनी रहना

हार्मोन्स के प्रभाव से आँते सुस्त हो जाती हैं । परिणामस्वरूप कब्ज बनी रहती है ।

उपचार

– रेशायुक्त आहार जैसे हरी सब्जी, छिल्के वाली दालें, दलिया आदि प्रयोग करने की 'सलाह दें।
– मुनक्के युक्त दूध घरेलू उपचार है ।
– अधिक पानी का प्रयोग तथा उचित व्यायाम से लाभ होता है ।

रैफर की स्थिति

– अगर सामान्य उपचार अथवा घरेलू नुस्खों से आराम नहीं मिले तब डॉक्टर की राय लेनी चाहिए।

5. कमर दर्द होना

गर्भावस्था में रीढ़ की हड्डी पर जोर पड़ता है और तन्तु ढीले पड़ जाते हैं । इससे कमर तथा पीठ दर्द होता है । बार-बार और कम अन्तर में बच्चे होने पर माँ के शरीर में कैल्शियम की मात्रा भी कम हो जाती है । आखिरी माह में बच्चा नीचे उतरने से भी ऐसा होता है । पेट को आगे निकालकर खड़े होने से पीठ की माँसपेसियों पर तनाव पड़ता है (लोरडोसिस) ।

उपचार :

– पीठ को सीधा रखने को कहना चाहिए ।
– उठते समय महिला को सहारा ले कर उठना चाहिये ।
– चीजें उठाते समय या झाड़ू लगाते समय झुकना नहीं चाहिए वरन बैठ कर उठाना चाहिए ।
– सामान्य व्यायाम से आराम मिलता है ।
– सख्त बिस्तर पर सोने को कहे ।

रैफर की स्थिति

– अगर दर्द बहुत हो तथा महिला को उपरोक्त उपचार से भी आराम न हो ।

6. चक्कर या मूर्छा आना

ऐसा अक्सर गर्भावस्था के शुरू या अंतिम महीनों में होता है । कुछ न खा सकने की स्थिति में ब्लड प्रेशर कम हो जाता है । कभी-कभी सीधे सो कर उठने पर भी ऐसा हो सकता है ।

उपचार

– नीचे बैठा दें या लिटा दें ।
– लेटते समय थोडा सा करवट लेने को कहना चाहिए ।
– गर्भावस्था में लम्बे समय तक खड़े नहीं रहना चाहिए ।

रैफर की स्थिति

7. छाती में जलन होना

- यदि चक्कर लगातार आते रहें ।
- ब्लड प्रेशर निरन्तर कम रहे ।
- मूर्छा लम्बे समय तक या बार-बार आवे ।
- गर्भावस्था मे आँतों पर दबाव पड़ता है तथा हॉरमोन्स से आँते सुस्त हो जाती हैं । इससे पेट और गले में जलन महसूस होती है ।

उपचार

- मसालेदार व चटपटा भोजन खाने से मना करें ।
- ठंडा दूध, सादा खाना, व साधारण ऐन्टेसिड लेने से लाभ होता है ।

रैफर की स्थिति

- अगर उपरोक्त तरीकों से आराम न मिले ।

8. साँस फूलना

आखिरी महीनों में पेट का आकार बढ़ जाता है और छाती पर दबाव पडता है । अधिक तेज चलने या खाना खाने के बाद अधिक सांस फूलती है जो सामान्य है । खून की कमी या दिल की बीमारी अगर हो तो इलाज जरूरी है ।

उपचार

- करवट लेने को कहें ।
- सिर के नीचे तकिया रख कर देखना चाहिए ।
- आखिरी महीने मे बच्चा नीचे उतरने पर स्वत: आराम होता है ।

रैफर की स्थिति

- खून की कमी, दमा या दिल की बीमारी, खांसी-बुखार आदि की वजह से साँस फूलती हो ।

9. थकावट और ऐंठन होना

गर्भकाल के प्रारम्भिक हफ्तों में और आखिरी हफ्तों में सुस्ती स्वाभाविक है । शरीर को अधिक बोझ ढोना पडता है, इसलिये थकावट रहती है । पेशियों में ऐंठन हो सकती है ।

उपचार

- अच्छा पोषणयुक्त आहार लेने को कहें ।
- नाश्ते व खाने के बाद एक घंटा सोना अच्छा रहता है ।
- अधिक परिश्रम से बचने को कहें ।

रैफर की स्थिति

- कमजोर, कुपोषण वाली महिलाओं को डॉक्टर को दिखाएं ।

10. पेट दर्द

यह गर्भावस्था का सामान्य लक्षण न हो कर भी यह अक्सर पाई जाने वाली समस्या है । ज्यादातर यह पहले से मौजूद पेट की बीमारी जैसे अमीबायसिस कृमि, गैस, मूत्र मार्ग का संक्रमण आदि की वजह से होता है । कभी-कभी गर्भ सम्बन्धित समस्या भी हो सकती है, जैसे-गर्भ का खिसकना, गर्भपात या ट्यूब में गर्भ इत्यादि ।

उपचार एवं रैफर

– चिकित्सक की सलाह लेनी आवश्यक है ।

11. पैरों में सूजन

यह स्थिति गर्भावस्था के आखिरी महीनों में सामान्य है । भारी गर्भाशय शिराओं पर दबाव डालता है जिससे सूजन आती है । लम्बे समय तक खड़ा रहने या पैर लटकाने से ऐसा होता है । पुराने जमाने में गर्भावस्था को पैर भारी होना शायद इसीलिए कहते थे ।

उपचार

– सोते समय पैर के नीचे तकिया रख कर उँचा करने से सूजन कम होती है ।
– अधिक समय पैर लटका कर या खड़े नहीं रहने की सलाह दे ।

रैफर की स्थिति

– अगर सूजन पूरे शरीर में आ रही हो ।
– ब्लड प्रेशर अधिक हो ।
– गर्भवती में खून की कमी हो ।

12. शिराओं का फूलना (वैरीकोज वेन्स)

गर्भाशय के दबाव से शिराओं में रक्त का प्रवाह प्रभावित होने से ऐसा होता है । दोनों पैरों में जगह जगह पर फूली हुई शिराएं दिखाई देने लगती हैं । इन्हें ‘ वैरीकोज वेन्स’ कहते हैं।

उपचार :

– अधिक देर खड़े न रहने को कहें ।
– लेट कर पैर ऊँचे रखने की सलाह दे ।
– क्रैप बेन्डेज का इस्तेमाल करने से आराम मिलता है ।
– पैरों के व्यायाम लाभकारी हैं ।

रैफर की स्थिति

– अगर समस्या अधिक हो तो डॉक्टरी राय आवश्यक है ।
– डिलीवरी अस्पताल में करना सुरक्षित है ।

13. नींद न आना

प्रारम्भ के महीनों तथा अन्तिम महीनों में कई बार ऐसा होता है ।

उपचार

– तनाव रहित रहना आवश्यक है ।
– सोने से पहले गुनगुने पानी से नहाना व करवट लेकर सोना लाभकारी होता है ।

रैफर की स्थिति

– अगर अधिक परेशानी हो ।

14. खिंचाव के निशान

पेट बढ़ने से त्वचा खिंच जाती है और लाल लाइनों जैसे निशान उभर आते हैं जो बाद में सफेद पड़ जाते हैं ।

उपचार

– त्वचा में किसी क्रीम से हल्के हाथ से मालिश करें व वजन को अधिक न बढ़ने दें ।

इसी प्रकार गर्भावस्था मे जननांगो में खुजली एक सामान्य समस्या है जिसे व्यक्तिगत स्वच्छता एवं डॉक्टरी परामर्श से ठीक किया जा सकता है ।

6.3 गर्भावस्था के खतरों की पहचान

गर्भवती स्त्री साधारणत: कुछ सामान्य परेशानियों के सिवाय स्वस्थ रहती है । परन्तु कुछ महिलाओं में जटिल समस्यायें मृत्यु का कारण हो जाती हैं । तत्काल सही डाक्टरी परामर्श उनकी जान बचा सकता है । कई ऐसी गर्भवती स्त्रियां है जिनमें खतरो की संभावना अधिक रहती है । उनकी तरफ विशेष सावधानी रखना आवश्यक है ।.

निम्न गर्भवती स्त्रियो में खतरों की संभावना अधिक रहती है

- कम उम्र की औरत (18 वर्ष से कम)
- अधिक उम्र की औरत (35 वर्ष से अधिक)
- दो वर्ष से कम अन्तर में प्रसव
- बार-बार गर्भधारण (5 बार या अधिक)
- पिछली गर्भावस्था में परेशानी रही हो (उच्च रक्तचाप, पीलिया, रक्तस्त्राव आदि)
- पिछले प्रसव की कठिनाइयाँ (समय पूर्व, समय पश्चात, आड़ा या तिरछा बच्चा, ऑपरेशन आदि)
- माँ की बीमारी - टी.बी., हृदय रोग, खून की कमी, डायबिटीज़, थायरॉइड, पूर्व में किये आपरेशन
- शिशु में खराबी - जन्मजात खराबी, पीलिया
- महिला की उँचाई (145 सेमी से कम) व वजन (45 किग्रा से कम)बहुत कम हो

उपरोक्त खतरो से सम्बंधित कुछ तथ्य यहां पर वर्णित किये जा रहे हैं.

- **कम उम्र की औरत**

  यद्यपि 18 वर्ष से कम उम्र में विवाह कानूनन अपराध है पर परम्परागत बाल विवाह के कारण भारत में 18 साल से कम उम्र मे माँ बनना स्वाभाविक है । स्त्री का शरीर 18 वर्ष तक विकसित हो रहा होता है ऐसे मे गर्भवती होने पर उसका विकास रूक जाता है । गर्भावस्था की सभी जटिल परिस्थितियों की संभावना कम उम्र मे अधिक होती है जैसे ऐनीमिया, प्रीएक्लेम्पसीया, गर्भपात आदि ।

- **अधिक उम्र की औरत**

  35 साल से अधिक उम्र में गर्भवती होना स्त्री के लिए बहुत खतरनाक है क्योंकि इस उम्र में शरीर की हड्डियाँ सख्त हो जाती है ।

  इस कारण सिजेरियन की संभावना बढ जाती है । सांस, हृदय रोग आदि की संभावना अधिक होती है जिससे जोखिम बढ़ जाता है । बच्चे में जन्मजात विकृति की संभावना बढ़ जाती है । इसके अतिरिक्त प्री एक्लेम्सिया, जुड़वाँ. प्रसूति आदि की संभावना भी बढ़ जाती है ।

- **बच्चों में 2 वर्ष से कम अन्तराल**

  यह स्त्री के स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पंहुचाता है । दो वर्ष में स्त्री का शरीर पिछले गर्भ से हुई कमियों को पूरा करता है । इसलिए जल्दी गर्भ ठहरने वाली स्त्रियों में अक्सर एनीमिया, सूजन संबंधी परेशानी देखीं जाती है ।

- **बार-बार गर्भधारण**

  बार-बार गर्भधारण से स्त्री के शरीर मे विभिन्न तत्वों की कमी हो जाती है तथा माँसपेशी व हड्डियों में खराबी आ जाती है । आंतरिक जननांगों पर भी बार-बार गर्भधारण का बुरा असर पड़ता है ।

- **पिछली गर्भावस्था या प्रसव में परेशानी**

  ऐसी महिला जिसे पिछली गर्भावस्था या प्रसव में परेशानी आदि हुई हो, उनके पुन: परेशानी होने की संभावना रहती है । ये हैं- उच्च रक्तचाप, पीएक्लेम्पसीया, कुगर्भ प्रस्तुति, जुड़वाँ, आपरेशन, शिशु की मृत्यु, रक्तस्त्राव, गर्भपात । ऐसी महिलाओं को विशेष देखरेख चाहिए । उनका प्रसव अस्पताल में ही होना चाहिए ।

- **मां की बीमारी**

  प्रसवकाल मे स्त्री की प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है । अगर स्त्री को रोग है तो गर्भकाल में स्त्री तथा शिशु दोनो को भारी खतरा है । ये रोग हैं टी.बी.,हृदय रोग आदि । प्रीएक्लेम्पसीया, एक्लेम्पसीया, ऐनीमिया, कुगर्भ प्रस्तुति आदि खतरनाक है । अक्सर ओस्टीयोपोरोसिस से संकीर्ण श्रोणि हो जाती है । ऑपरेशन की संभावना बढ जाती है । उनको विशेषज्ञों की निरन्तर देखरेख आवश्यक है । समय से पूर्व अस्पताल मे भर्ती करवाना उचित रहता है । ऐसी महिलाओं को जल्दी परिवार नियोजन अपनाने को कहना चाहिए ।

- **शिशु सम्बंधी खतरे**

  शिशु को गर्भकाल या प्रसव के समय परेशानी हो सकती है ।

(i) गर्भावस्था में निम्न खराबी हो सकती है -

शारीरिक या मानसिक विकृति । कारण निम्न हो सकते हैं -

- गर्भावस्था में दवाइयों के दुष्प्रभाव,
- जीन्स में खराबी,
- स्त्री की अधिक उम्र
- वंशानुगत खराबी,
- गर्भावस्था के प्रारम्भ में हुई बीमारी के कारण गर्भकाल में शिशु की मृत्यु -डायबिटिज, सिफिलिस, गले में नाल अटकना आदि ।

(ii) प्रसव के समय निम्न परेशानियाँ आ सकती हैं: शिशु को आक्सीजन की कमी, दिमाग के विकास में बाधा, शिशु की मृत्यु. फ्रेक्चर आदि ।

(iii) आर एच नेगेटिव मां का आर एच पोजिटिव शिशु : अगर मां को एंटी डी का इन्जेक्शन न लगा हो तो शिशु को हाइड्रोप्स की संभावना हो सकती है ।

- **महिला की ऊँचाई**

  145 सेमी से कम होने पर संकीर्ण श्रोणि की संभावना बढ जाती है वैसे शिशु छोटा होने पर सामान्य प्रसव भी संभव है । ऐसी स्त्री का पहला प्रसव अस्पताल में ही होना चाहिए ।

- **महिला का वजन**

  45 किग्रा से कम होने पर स्त्री तथा शिशु दोनों को खतरा है ।

  उपरोक्त परिस्थितियाँ सही जानकारी तथा जागरूकता से संभाली जा सकती है । परिवार नियोजन तथा समय पर महिला को डॉक्टरी सुविधा उपलब्ध होना आवश्यक है । प्रसूति विज्ञान सहायिका को खतरे की संभावना को जल्दी से जल्दी मापना जरूरी है जिससे सही सहायता, सही समय पर उपलब्ध कराई जा सके ।

6.3.1 गर्भावस्था में खतरे के लक्षण

(i) हायपरइमेसिस ग्रेविडेरम या अधिक उल्टी होना (Hyperemesis Gravidarum)

यह अक्सर पहले तीन महीनों में होती है ।

उल्टी के कारण पहले 3-4 महिनों में

1. गर्भावस्था से सम्बन्धित
2. गर्भावस्था से असम्बन्धित

– पेट की बीमारी, कीड़े, अपेन्डिक्स आदि
– यकृत (लीवर) की बीमारी, जैसे-पीलिया
– गुर्दे की बीमारी
– जननांगों की बीमारी-जैसे ऑवेरियन ट्यूमर का घूमना

पांचवे महीने के बाद -

1. गर्भावस्था से सम्बन्धित

– साधारण उल्टी
– टोक्सीमिया ऑफ प्रिगनेन्सी (गर्भावस्था में रक्त विषाक्तता)

2. गर्भावस्था से असम्बन्धित

– पेट की बीमारी, कीड़े, अपेन्डिक्स आदि
– यकृत (लीवर) की बीमारी, जैसे पीलिया इत्यादि
– गुर्दे की बीमारी
– जननांगों की बीमारी-जैसे ऑवेरियन ट्यूमर का घूमना

- **हाईपरइमेसिस (Hyperemesis)**

  गर्भावस्था में थोडी उल्टी व जी घबराना सामान्य है । मगर कुछ महिलाओं में उल्टी बहुत अधिक हो जाती है और वे कुछ खा पाने में असमर्थ हो जाती हैं, जिससे उनके स्वास्थ्य पर असर पडता है तब उसे हाईपरइमेसिस कहते हैं ।

  अगर निम्नलिखित लक्षण हो तो फौरन सहायता आवश्यक है

– नाड़ी तेज चल रही हो ।

- जबान सूखी लगती हो ।
- चक्कर आते हो व ब्लड प्रेशर कम हो ।
- पूरा दिन उल्टी आती हो और वह कुछ खाने में असमर्थ हो ।
- आँखें धंसी लगने लगे ।

यह निर्जलीकरण या डीहाइड्रेशन की स्थिति हो सकती है । तथा ऐसी परिस्थिति में फौरन उपचार शुरू करना आवश्यक है । ओ आर एस पाउडर पानी मे घोल कर बार-बार पिलाएँ तथा उल्टी आने पर दुबारा पिलाएँ । साथ ही महिला को चिकित्सक के पास ले जाने की व्यवस्था करवाएँ, जहाँ उचित उपचार तथा नली द्वारा पानी तथा लवण दे सकें ।

(ii) अगर प्रथम तीन चार महीनों में रक्त स्त्राव हो

प्रथम तीन चार महीनों में यह अक्सर गर्भपात से पूर्व की स्थिति होती है व फौरन उपचार आवश्यक है । महिला को पूर्ण आराम दें व डाक्टर से शीघ्र संपर्क से स्थिति संभल सकती है ।

(iii) आँवल नीचे हो या प्लेसेन्टा प्रिविया (Placenta Praevia)

कभी-कभी छठे सातवें महीने के बाद महिला में रक्त स्त्राव हो जाता है । इसमें अक्सर महिला को दर्द नहीं होता परन्तु यह एक गंभीर स्थिति है समय पर उपचार न मिलने पर यह स्थिति जानलेवा हो सकती है ।

उपचार तथा रैफर

- महिला को पूर्ण आराम दे ।
- तुरंत किसी अच्छे अस्पताल में पहुँचाने की व्यवस्था करवाऐं जहां रक्त भी चढ़ सके तथा सोनोग्राफी की सुविधा हो ।
- प्लेसेन्टा प्रिविया मे महिला को ऑपरेशन की आवश्यकता पड़ सकती है ।
- टाइप 3 और टाइप 4 प्लेसेन्टा प्रिविया मे प्रसव ऑपरेशन से ही आवश्यक है ।
- कभी भी अन्दरूनी जाँच करने की कोशिश न करें । यह जानलेवा हो सकती है ।

(iv) एक्सीडेंटल हेमरेज (Accidental Haemorrhage)

कभी-कभी गर्भाशय के अन्दर प्लेसेन्टा तथा गर्भाशय की दीवार के बीच रक्त स्त्राव हो जाता है जो योनि मार्ग से बाहर आ जाता है या अन्दर ही इकट्ठा हो जाता है । महिला के पेट मे दर्द होता है व गर्भाशय कड़ा महसूस होता है । इसमें माँ तथा शिशु दोनों के लिये खतरा रहता है । इसलिये अतिशीघ्र अस्पताल पहुँचना आवश्यक है । जहाँ रक्त चढाने या आपरेशन की आवश्यकता पड़ सकती है । अगर एपीएच, पीपीएच की ठीक से देखभाल की जाये तो जानलेवा परिस्थितयों से बचा जा सकता है और प्रसूता को ठीक संभाला जा सकता है ।

उपचार तथा रैफर

- महिला को पूर्ण आराम की स्थिति में लिटा दें ।
- कभी भी अन्दरूनी जाँच करने की कोशिश न करें । यह जानलेवा हो सकती है ।
- महिला को फौरन अस्पताल पहुँचाना आवश्यक है ।
- उसे लिटा कर ही ले जाना चाहिए ।

– साथ ही रिश्तेदारों को रक्त देने के लिए तैयार रहना चाहिए ।

(v) समय पूर्व प्रसव (Pre- mature Delivery)

निश्चित अन्तराल में महिला पेट दर्द की शिकायत करती है और साथ में पेट कड़ा हो जाता है तो इसे खतरे की चेतावनी समझना चाहिए ।

उपचार एवं रैफर

– महिला को आराम करायें ।
– शीघ्रातिशीघ्र डाक्टर के पास ले जायें ।

(vi) सफेद पानी का जाना (Leucorrhoea)

थोडा लिसलिसा सफेद पानी जाना सामान्य बात है । परन्तु अगर योनिमार्ग से तेजी से पानी जा रहा है या लगातार बूंद-बूंद टपक रहा है तो पानी की थैली फूटने का अंदेशा होता है ।

उपचार तथा रैफर

– क्योंकि ऐसी स्थिति शिशु के लिये घातक है इसलिये महिला को लिटाकर शीघ्र डाक्टर से संपर्क करें ।
– योनिमार्ग में जाँच करें कि कहीं नाल तो नहीं है । अगर ऐसा है तो महिला का पेल्विस का हिस्सा थोडा ऊँचा करें और तुरन्त अस्पताल पहुँचाए ।

(vii) तेज बुखार. पेशाब में जलन. जननांगों में खुजली

सभी स्थितियों में माँ व शिशु को नुकसान हो सकता है ।

उपचार तथा रैफर

– महिला को खूब पानी पिलायें ।
– बुखार के लिए पेरासिटामोल की गोली दें ।
– खुजली के लिये जननांगो को साफ रखने को कहे ।
– बिना डॉक्टरी सलाह दवा न दें । शीघ्र दिखायें ।

(viii) पैरों में सूजन तथा उच्च रक्तचाप

यह प्रीएक्लैम्पसिया कहलाता है ।

अधिकतर यह स्थिति अंतिम तीन महीनों में मिलती है परन्तु कभी-कभी 5वें-छठे महीने में भी लक्षण दिखते हैं । महिला को लगातार आराम तथा इलाज की जरूरत होती है । कभी-कभी दौरे भी आ जाते हैं । इसे एक्लैम्पसिया कहते हैं । महिला के सिर मे तेज दर्द हो, धुंधला दिखने लगे, मुँह, हाथ पैरों में सूजन हो और वजन में तेजी से बढ़ोतरी हो तो ये प्रीएक्लैम्पसिया के लक्षण हो सकते हैं । ये जानलेवा स्थितियाँ हैं । समय पर इलाज मिलने पर माँ और शिशु को बचाया जा सकता है ।

उपचार तथा रैफर

– गर्भवती को आराम करना जरूरी है ।
– उसको तनाव रहित रखें ।
– लगातार डॉक्टर की जाँच तथा इलाज करवाएं ।

- दौरा पडने पर मुँह में नरम कपड़ा डालें जिससे जबान न कटे और साँस नली में अवरोध न हो । नकली दाँत हटाएँ ।
- तुरन्त अस्पताल ले जाने की व्यवस्था करें ।

(ix) पूर्व प्रसव में परेशानी रही हो

समय पूर्व या पश्चात प्रसव, मृत शिशु, शिशु में खराबी, लम्बा प्रसवकाल जैसी स्थिति दोबारा होने की संभावना रहती है । अत: प्रसव शुरू होते ही या उससे कुछ पूर्व चिकित्सक से संपर्क करें ।

(x) अगर बच्चे की पोजीशन सही न हो जैसे आडा, तिरछा या उल्टा

प्रसव शुरू होते ही महिला को अच्छे स्वास्थ्य केन्द्र में भर्ती होना चाहिए, जहाँ पर आपरेशन आदि की सुविधा हो । इनकी सुविधायुक्त केन्द्र में डिलीवरी आवश्यक है ।

(xi) कभी गर्भाशय से संबंधित आपरेशन हुआ हो जैसे सीजेरियन, ट्युमर आदि

ऐसे केसेज में बहुत सावधानी की आवश्यकता है । इनकी सुविधायुक्त केन्द्र में डिलीवरी आवश्यक है ।

(xii) पहले से किसी रोग से पीड़ित हो

जैसे उच्च रक्तचाप, गुर्दे की बीमारी, लीवर की बीमारी, डायबिटीज या गुप्तांगों की बीमारी, मिर्गी आदि । महिला को निरन्तर डॉक्टर की निगरानी में रखना आवश्यक है । प्रसव भी सुविधायुक्त केन्द्र में जरूरी है ।

(xiii) रक्त की कमी या एनीमिया (Anaemia)

इस पर अलग से विचार करना आवश्यक है क्योंकि यह हमारे देश में गर्भवती महिलाओं की प्रमुख समस्या है । रक्त की कमी से हजारों स्त्रियां हर साल प्रसव के दौरान मर जाती हैं । इसलिये आवश्यक है कि रक्त की कमी को जल्दी पहचाना जाये और इलाज किया जाये । साधारण से इलाज से हम कई जानें बचा सकते हैं ।

उपचार

- हर महिला को गर्भावस्था में कम से कम 100 गोली आयरन की लेनी आवश्यक है ।
- ये गोलियां सरकार की तरफ से उपलब्ध हैं ।
- अगर प्रसवकाल समीप है तो उसे इन्जेक्शन या रक्त भी देना पड़ सकता है ।
- इसके लिये महिला को डॉक्टर के पास शीघ्र ले जायें ।
- परिवार उसे पौष्टिक खुराक खाने को प्रेरित करे ।
- डिलीवरी के बाद मेथरजिन इन्जेक्शन लगाना चाहिए ।

रैफर की स्थिति

- एनीमिया की स्थिति में महिला का रंग पीलापन लिये होगा तथा आँखें व हथेलियाँ सफेद होंगी।
- थोडा सा काम करने पर थकान अनुभव करेगी व सांस भी फूल जावेगी ।
- महिला का प्रसव कभी घर में नहीं होना चाहिए ।
- कभी-कभी उनमें हार्ट फेल भी हो सकता है ।
- हीमाग्लोबिन का स्तर सामान्य से कम हो ।

(xiv) आर एच नेगेटिव महिला

आर एच नेगेटिव महिला का शिशु आर एच पोजिटिव हो तो ऐसी स्थिति खतरनाक हो सकती है । महिला को निरन्तर डाक्टर की निगरानी में रखना आवश्यक है । मां को एन्टी डी का इन्जेक्शन लगाना आवश्यक होता है । महिला का प्रसव घर में नही होना चाहिए ।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि यदि गर्भावस्था मे महिला की ठीक से जाँच हो तो ऐसी स्थितियाँ जो खतरनाक हो सकती हैं. का पहले से पता लगा कर जटिलताएं होने से रोका जा सकता है । इन लक्षणों को संक्षेप में हम निम्न प्रकार रख सकते हैं जिनसे संभावित खतरों की पहचान की जा सके । ऐसी महिला का प्रसव कभी घर में नहीं होना चाहिए :

- बहुत अधिक उल्टियाँ
- योनि से रक्तस्त्राव
- योनि से गंदा पीला या हरापन लिये बदबूदार स्त्राव
- मुंह, हाथ पैरों में सूजन
- सिर दर्द, देखने में परेशानी
- दौरे पड़ना
- वजन का कम बढ़ना या ज्यादा बढ़ना
- आंख, जीभ व हथेलियाँ सफेद दिखाई देना ।
- नौवें महीने से पहले प्रसव पीड़ा शुरू होना ।
- तेज बुखार आना या दाने निकलना ।

6.4 सुरक्षित प्रसव की तैयारी

सिद्धान्ततः तो आज के युग में प्रसव अस्पताल में ही होने चाहिएँ । परन्तु आज भी भारत में प्रसव काफी संख्या में घरों पर होते हैं और अप्रशिक्षित दाइयों द्वारा करवाए जाते हैं जो बहुत दुखद स्थिति है । अतः यह आवश्यक है कि प्रसव कराने वाले को कम से कम निम्न जानकारी हो :

- सुरक्षित सामान्य प्रसव कैसे कराएं ?
- प्रसव की जटिलता को कैसे पहंचाने और क्या करें ?

उपरोक्त तथ्यों को देखते हुए प्रसूति विज्ञान सहायिका को सुरक्षित प्रसव की तैयारी काफी पहले से कर लेनी चाहिए जिससे आपात स्थिति में परेशानी न हो । निम्न बिंदुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिये -

- यह निश्चित करना आवश्यक है कि प्रसव कहाँ कराया जायेगा ? प्रसव कौन करायेगा?
- घर में प्रसव कराने की स्थिति में व्यवस्था पहले से कर लेनी चाहिए ।
- परिवार वालों को प्रसव में बरती जाने वाली सावधानियों का कारण समझाना आवश्यक है । तभी वो आपकी कही बातों पर अमल करेंगे ।
- घर में प्रसव का निर्णय लेने पर कमरा पहले से तैयार होना चाहिये ।

- कमरा साफ और हवादार हो तथा उसमें पर्याप्त रोशनी जरूरी है ।
- उसमें बहुत अधिक सामान नहीं भरा होना चाहिए ।
- प्रसव के समय काम में आने वाली सभी वस्तुएं एक बक्से में इकट्ठी कर लेनी चाहिएँ । जिससे आवश्यकता पड़ने पर उन्हें ढूंढना न पड़े ।

6.4.1 प्रसव के समय प्राथमिक सहायता किट

हमारा उद्देश्य प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं को ऐसी जानकारी देना है कि वे घर में डिलीवरी कराने वाली स्त्रियों के प्रसव को सुरक्षित बना सकें । पहले से प्रसव की तैयारी कर लें, जिससे डिलीवरी के समय परेशानी न हो । इससे निम्न लाभ होंगे ।

- साफ एवं सुरक्षित तरीके से डिलीवरी करा सकेंगे ।
- गर्भवती तथा नवजात शिशु को संक्रमण से बचा सकेंगे ।
- डिलीवरी के समय आने वाली मुश्किलों के लिये पहले से तैयार होंगे ।

कई बार प्रसव होते समय कई तरह की दिक्कतें आती है जिससे माँ को इन्फेक्शन, बच्चेदानी का फटना, प्रसव में कठिनाई आदि गंभीर परिस्थितियाँ हो जाती हैं और शिशु की अक्सर मृत्यु हो जाती है । सही तरीके से प्रसव करवाने से माँ और शिशु दोनों सुरक्षित रहते हैं ।

प्राथमिक सहायता किट इस प्रकार तैयार करें :

- साबुन - हाथ धोने के लिए ।
- ब्लेड - नया बिना इस्तेमाल किया होना चाहिए । इससे नाल काटी जायेगी ।
- सूती, मोटा, साफ धागा - नाल बाँधने के लिये । इसे पानी में 20 मिनट उबालकर सुखा लें और साफ डिबिया में बन्द कर रखें ।
- साफ चादर - साबुन से धो कर, कड़क धूप में सुखा कर या प्रेस कर रखें ।
- माँ के लिये सूती वस्त्र साफ कर, धूप में सुखा कर रखें ।
- बच्चे के लिये पहनने के कपड़े और लंगोटिगाँ साफ खुली धूप में सूखी होनी चाहिए एवं नर्म कपड़े की होनी चाहिए । सर्दी के मौसम के लिए गर्म कपड़े धो कर धूप में सुखा कर रख लें ।
- कुछ पैसे अलग से रखने जरूरी हैं क्योंकि कभी-कभी जरूरत पड़ने पर अस्पताल ले जाना पड़ सकता है और दवाइयों की जरूरत पड़ सकती है ।
- इसके अतिरिक्त परिवार के लोगों को रक्तदान की जानकारी देना आवश्यक है, क्योंकि प्रसव में कठिनाई आने पर अक्सर रक्त चढ़ाने की आवश्यकता होती है । ऐसे समय में अक्सर जरूरत होने पर कोई नहीं मिलता । इसलिये यदि महिला को अस्पताल ले जाना पड़े तो रक्त दे सकने वाले लोग भी साथ जाने चाहिए ।

6.4.2 सुरक्षित प्रसव के हथियार

1. साफ वस्त्र एवं चादर
2. साफ हाथ
3. साफ धागा

4. साफ ब्लेड
5. साफ नाल
6. पूर्ण जानकारी
7. साफ जगह

6.5 गर्भवती एवं प्रसूता हेतु परामर्श / रैफरल प्रणाली

कई बार प्रसव होते समय कई तरह की दिक्कतें आती हैं जिससे माँ की स्थिति गंभीर हो सकती है और शिशु की अक्सर मृत्यु हो जाती है । सही तरीके से प्रसव करवाने से माँ और शिशु दोनो सुरक्षित रह सकते हैं । जरा भी खतरे का संकेत दिखते ही महिला को फौरन निकटतम स्वास्थ्य केन्द्र ले जाना और विशेषज्ञ सुविधा दिलाना आवश्यक है । देर करने में माँ और बच्चे दोनों का नुकसान हो सकता हे । यह पहले से तय होना आवश्यक है कि आवश्यकता पड़ने पर महिला को कौन से अस्पताल मे ले जाना उचित रहेगा और वहाँ तक कैसे पहुँचा जा सकता है । भारत सरकार ने एक रैफरल प्रणाली विकसित की है जिसमें हर जरूरतमंद स्त्री को आवश्यकता पड़ने पर सबसे अच्छी स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध हो सके । उल्लेखनीय है कि कम संसाधन वाले स्वास्थ्य केन्द्र से आवश्यक होने पर अधिक संसाधन वाले चिकित्सा केन्द्र तक मरीज को पहुंचाने की व्यवस्था को परामर्श प्रणाली कहते हैं । ग्रामीण स्तर के समुदायो को विशेषज्ञ चिकित्सालयों की सुविधा दिलाना इसका उद्देश्य है ।

- **परामर्श प्रणाली के महत्व**
  - रोगी को निदानात्मक सेवा देना ।
  - रोगी को विशेषज्ञ सेवा देना ।
  - स्वास्थ्य कर्मियों को उपचार की सीमा का ज्ञान होना ।
  - परामर्श भेजते समय रोगी की सही समीक्षा करना ।
  - रोगी को सुविधापूर्वक परामर्श केन्द्र तक भिजवाना ।
- **परामर्श प्रणाली के स्तर :**

ग्रामीण स्तर

↓

उपकेन्द्र स्तर
(सब सेंन्टर)

↓

प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र स्तर
(पी. एच. सी.)

↓

सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र / ग्रामीण चिकित्सालय
(कम्युनिटी हेल्थ सेंन्टर / रूरल हॉस्पिटल)

↓

जिला चिकित्सालय
(डिस्ट्रिक्ट हॉस्पिटल)

↓

भौक्षणिक चिकित्सालय(चिकित्सा महाविद्यालय / विशेषज्ञ चिकित्सालय)
(टीचिंग हॉस्पिटल / स्पेशिलिटी हॉस्पिटल)

- **परामर्श रोगी का चयन**

ऐसे रोगियों को तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं :

1. प्रथम वर्ग अथवा सांघातिक रोगी :

इनको परामर्श हेतु भेजने से पहले परिवारजनों को अच्छी तरह समझाना आवश्यक है । उनके आगे ले जाने को मना करने पर स्वास्थ्य केन्द्र में उपलब्ध सुविधा देनी चाहिए ।

2. द्‌वितीय वर्ग अथवा गम्भीर अवस्था के रोगी (सीरियस मरीज):

ऐसे रोगियों का तुरन्त उपचार जान बचा सकता है । अपने परामर्श से मरीज को आगे भेजने का प्रयत्न करना चाहिये । भेजने से पहले गम्भीरता कम करने का प्रयत्न करना चाहिए ।

3. तृतीय वर्ग अथवा सामान्य रोगी (सामान्य मरीज):

ऐसे रोगी का रोग खतरनाक हो सकता है पर रोगी की स्थिति ठीक होती है । ऐसे रोगियों को जल्दी इलाज के फायदे समझाना चाहिये जिससे वो बिना अधिक विलम्ब के इलाज कराये । गर्भवती एवं प्रसूता की स्थितियों को खतरों के चिन्ह एवं लक्षणों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है तथा आवश्यकतानुसार तुरन्त रैफर किया जाना चाहिये । इस विषय में "जननी सुरक्षा योजना-JSY " के प्रावधानों का लाभ उठाना चाहिए ।

- **स्वास्थ्य कर्मियों का उत्तरदायित्व**
  - अपनी सीमा और जिम्मेदारी का ज्ञान होना चाहिये ।
  - आपातकाल मे पहले प्राथमिक चिकित्सा दे कर ही आगे भेजना चाहिए ।
  - परामर्श फार्म या टिकट की प्रविश्ठियाँ स्पष्ट भरी होनी चाहिए ।
  - गम्भीर रोगी को भेजते समय प्राणरक्षक औषधि तथा उपकरण साथ होने चाहिए ।
  - यथा सम्भव रोगी के साथ नर्सिंग कर्मचारी होना चाहिए ।
  - जननी सुरक्षा योजना (JSY) के निर्देशों की पालना होनी चाहिये ।

परामर्श हेतु भेजने के लिए निम्न फार्म उपयोग में लिया जा सकता है ।

<u>परामर्श फार्म</u>

स्वास्थ्य केन्द्र / चिकित्सालय का नाम .....

(चिकित्सालय की मोहर) .....दिनांक.....

परामर्श पंजिका क्रमांक .....

रोगी का नाम .....

पति / पिता का नाम .....

आयु .....लिंग.....धर्म.....

व्यवसाय .....

वर्तमान निदान .....

रोगी का संक्षिप्त विवरण .....

दिये गए उपचार का वर्णन .....

परामर्श हेतु भेजने की तिथि .....

परामर्श हेतु भेजने के कारण .....

संलग्न पत्रक : हस्ताक्षर

1. .....

2. ..... प्रेषक का नाम: ... ...

3. ..... पद:.....

6.6 सारांश

गर्भावस्था तथा प्रसव एक सामान्य प्रकिया है । एक सामान्य युवती मे साधारणत: यह समय सरलता से निकल जाता है और एक स्वस्थ शिशु पैदा होता है । परन्तु कुछ परेशानियाँ हैं जो गर्भावस्था में होना सामान्य हैं । ये हैं प्रात: कालीन उल्टी आना, बार-बार पेशाब आना, सफेद पानी की शिकायत, कब्ज, कमर दर्द. चक्कर, बदहजमी, सांस फूलना, नींद न आना तथा पेट में खिंचाव के निशान आदि । अधिकतर परेशानियाँ प्रथम तीन महिने रहती हैं । कुछ आखिरी तीन महिने मे अधिक रहती हैं ।

कभी कभी कुछ समस्यायें गंभीर रूप ले लेती हैं । ये कुछ वर्ग विशेष मे अधिक होती है जैसे कम उम्र या अधिक उम्र की स्त्री, जल्दी गर्भधारण या बहुप्रसवा, माँ को बीमारी जैसे टी. बी. हृदय रोग या खून की कमी आदि । शिशु मे हाइड्रोसिफेलस या बहुत बडा शिशु होना आदि । बहुत कम ऊँचाई या बहुत कम वजन की महिला का प्रसव भी खतरनाक हो सकता है ।

अधिकतर समस्याओं में जैसे हाइपरइमेसिस, प्लेसेन्टा प्रिविया समय पूर्व प्रसव, एनीमिया, संक्रमण, प्रीएक्लेम्पसीया आदि में समय समय पर तथा सतर्कता ' से परीक्षण करने से अच्छे परिणाम प्राप्त कर सकते हैं मगर इनका इलाज अच्छे केन्द्र में विशेषज्ञ की देखरेख में होना चाहिए।

भारत जैसे विकासशील देश में प्रसव सेवा दूर दराज गाँव में अभी काफी कमजोर है । घर पर ही प्रसव कराये जाते हैं । इसलिए प्रसूति विज्ञान सहायिकाओं तथा स्वास्थ्य कर्मियों को ये जानना आवश्यक है कि कब महिला को रैफरल चिकित्सालय में भेजना आवश्यक है । भारत सरकार ने एक रैफरल प्रणाली विकसित की है जिसमें हर जरूरतमद स्त्री को आवश्यकता पड़ने पर सबसे अच्छी स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध हो सके । इसके अतिरिक्त घर मे सुरक्षित प्रसव सम्पन्न करने के लिए भी कुछ निर्देश जारी किये हैं जिनका पालन कर प्रसूति विज्ञान सहायिकाएं/ स्वास्थ्य कर्मी सुरक्षित प्रसव कराकर माँ व बच्चे के स्वास्थ्य की रक्षा कर सकती हैं ।

6.7 प्रश्न

1. गर्भावस्था मे कौन- कौन सी सामान्य परेशानियाँ आती हैं ?
2. गर्भावस्था की सामान्य परेशानियों में क्या क्या उपचार किया जाता है ?
3. गर्भावस्था में होने वाली परेशानियां क्यों होती हैं ?
4. ऐसी कौन सी स्त्रियां हैं जिनमें खतरों की संभावना अधिक होती हैं ?
5. गर्भावस्था में अधिक उल्टी(हाइपरइमेसिस) होने के क्या खतरे हैं और क्या करना चाहिए ?

6. गर्भावस्था में रक्तस्त्राव हो तो क्या संभावना रहती है और क्या करना चाहिए ?
7. समय पूर्व प्रसव के क्या लक्षण हैं ?
8. प्रसवकाल मे उच्च रक्तचाप के क्या खतरे हैं ?
9. एक्लेम्पसीया के दौरान क्या सावधानी बरतनी चाहिये ?
10. यदि गर्भावस्था मे बच्चा उल्टा हो तो क्या सावधानी बरतनी चाहिये ?
11. कौन सी प्रसव पूर्व बीमारियाँ गर्भावस्था को नुकसान पहुंचाती हैं ?
12. गर्भावस्था में रक्त की कमी हो तो क्या करना चाहिए ?
13. गर्भवती महिला के प्रति नर्सिंगकर्मियों का क्या उत्तरदायित्व है ?
14. सुरक्षित प्रसव के लिये पहले से क्या तैयारी करनी चाहिए ?
15. सुरक्षित प्रसव में प्रसूति विज्ञान सहायिका का क्या योगदान हो सकता है ?
16. प्रसव किट या फर्स्ट एड किट में क्या सामान जरूरी है ?
17. प्रसव किट तैयार करने में क्या सावधानी आवश्यक है ?
18. सुरक्षित प्रसव के हथियार क्या हैं ?
19. द्वितीय अथवा गंभीर रोगी के लिये क्या किया जाना चाहिए ?
20. परामर्श प्रणाली पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये।